महाकवि केशवदास

कृत

कवि-प्रिया

सगुन पदारथ अर्थयुत, सुबरनमय सुभसाज।
कंठमाल ज्यो कविप्रिया, कंठ करो कविराज॥

टीकाकार

श्री लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी, एम० ए०

साहित्यरत्न, शास्त्री, हिन्दी प्रभाकर, कविरत्न

आचार्य

मधुसूदन-विद्यालय-इण्टर कालेज,

सुलतानपुर

प्रकाशक

मातृ-भाषा-मन्दिर, मालवीय नगर, प्रयाग

द्वितीयबार] सन् १९६६ [मूल्य ५)

व्यवस्थापक
पं० हर्षवर्द्धन शुक्ल
मातृ-भाषा-मन्दिर
२५६ मालवीय नगर
इलाहाबाद

मुद्रक
पन्नालाल सोनकर
राष्ट्रीय मुद्रणालय, सम्मेलन मार्ग
इलाहाबाद

दो शब्द

राष्ट्र भाषा के पद पर प्रतिष्ठित हो जाने के बाद हिन्दी के ाचीन साहित्यिक ग्रन्थों का पठन-पाठन परमावश्यक हो गया है। प्राचीन ग्रन्थ प्राय ब्रजभाषा मे है, इससे आज कल की ान्दी के वातावरण मे उनका समझना जटिल हो गया है। उनमें शवदास को समझना तो और भी कठिन है। उनके लिए सिद्ध है कि "कवि को देन न चहै बिदाई। पूछै केशव की कविताई"। खिझकर लोग उनको "कठिन काव्य का प्रेत" भी कहते हैं।

तुलसी, सूर, कबीर, बिहारी और देव आदि महाकवियों के ग्रन्थो की टीकाये मिलती है, पर अभी तक केशवदास के ग्रन्थों की प्रामाणिक टीका उपलब्ध नही थी, इससे भारतीय विश्व-विद्यालयों और अन्य शिक्षण-संस्थाओ के विद्यार्थियो और अध्यापको को भी उनकी दुरूह कविता का अर्थ समझने मे बड़ी कठिनाई पड़ती थी। हर्ष की बात है कि स्थानीय मधुसूदन विद्यालय इन्टर कालेज के आचार्य पं० लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी, म० ए०, शास्त्री, साहित्य-रत्न, हिन्दी-प्रभाकर, कविरत्न ने यह कमी पूरी कर दी है। मैने उनकी लिखी टीका देखी है। टीका अच्छी और उपयोगी है। मूल पाठ मे कहीं-कहीं अशुद्धियाँ रह गई है। अगले संस्करण में शुद्ध और बहुत प्रामाणिक पाठ देना चाहिये।

रामनरेश त्रिपाठी

बसन्त निवास, सुलतानपुर,
२८-१-५२

महाकवि केशवदास

[१६१८–१६७४]

[संक्षिप्त परिचय]

अन्य महाकवियो की भाँति महाकवि केशवदास जी के जीवन-चरित्र मे अनुमान से काम नहीं लेना पडता, क्योकि उन्होने कविप्रिया मे अपना विस्तृत परिचय स्वयं ही दिया है। यह सनाढ्य ब्राह्मण थे। उनका गोत्र भारद्वाज और अल्ल 'मिश्र' थी। उनके पूर्वज ब्रजमण्डल के डीग कुम्हेर नामक स्थान के निवासी थे। ओरछा के संस्थापक राजा रुद्रप्रताप के समय उनके पितामह कृष्णदत्त मिश्र ओरछा मे आकर बस गये। उन्हे राजा रुद्रप्रताप ने पुराण-वृत्ति पर नियुक्त किया था। राजा रुद्रप्रताप के उत्तराधिकारी मधुकरशाह हुए जिन्होने इनके पिता काशीनाथ मिश्र का बडा सम्मान किया। वह उन्हीं के दरबार मे रहते थे। केशवदास जी के दो भाई और थे। बडे बलभद्र मिश्र और छोटे कल्याणदास। मधुकर शाह के बाद उनके जेष्ठ पुत्र राम शाह ओरछा की गद्दी पर बैठे। उनके आठ भाई थे, जिनमे इन्द्रजीत पर उन्हे अधिक विश्वास था। राज्य का सारा भार उन्होने इन्हीं पर डाल रखा था। राज्य की देख-भाल यही करते थे। इन्हीं इन्द्रजीत ने महाकवि केशवदास जी का बडा सम्मान किया और २१ ग्राम भेंट मे दिये। वह इन्हे अपना गुरू मानते थे। इसी नाते राजा रामशाह भी इन्हे आदर की दृष्टि से देखते थे।

केशवदास जी बडे स्वाभिमानी तथा निस्पृह थे। अपनी निस्पृहता के दो उदाहरण उन्होने 'कविप्रिया' मे दिए हैं। एक बार जब यह राजा इन्द्रजीत के साथ तीर्थ यात्रा को गये, तब उन्होने प्रयाग मे इनसे

कुछ मागने को कहा तो इन्होने लकेव यही मांगा कि 'आपकी कृपा के सिवा मुझे और कुछ न चाहिए। 'आप जैसी कृपा मुझपर करते आए है, वैसी सदैव करते रहिए।' दूसरी बार जब यह बीरबल महाराज के यहाँ गये, तब उन्होने भी कुछ मांगने के लिए कहा। तब भी इन्होने धन की कामना नहीं की और केवल यही कहा कि 'आपके दरबार में मुझे कोई न रोके।'

इनका कुल विद्वानो का कुल था। इनके सभी पूर्वज सस्कृत के प्रकाड पडित थे। इनके एक पूर्वज भाऊराम ने वैद्यक के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'भाव प्रकाश' की रचना की थी। पिता काशीनाथ मिश्र ने ज्योतिष की प्रसिद्ध पुस्तक 'शीघ्रबोध' लिखी।

इन्होने कुल मिला कर नौ ग्रन्थो की रचना की जिनके नाम (१) रामचन्द्रिका (२) कविप्रिया (३) रसिक प्रिया (४) विज्ञान गीता (५) रत्नबावनी (६) वीर सिंह देव चारित्र (७) जहाँगीर जस चन्द्रिका (८) नख-शिख तथा (९) राम अलकृत मजरी है। इनमे से अन्तिम दो पुस्तके प्राप्य नहीं है। शेष सात पुस्तको मे से 'रामचन्द्रिका', 'कविप्रिया' तथा रसिक प्रिया एवं विज्ञानगीता को विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

विषय सूची

पृष्ठ सख्या | पृष्ठ सख्या

पृष्ठ संख्या	पृष्ठ संख्या

पृष्ठ सख्या | पृष्ठ सख्या

—:o:—

कवि - प्रिया

पहला प्रभाव

श्री गणेश-वन्दना

गजमुख सनमुख होत ही, विघन विमुख ह्वै जात।
ज्यो पग परत प्रयाग-मग, पाप-पहार बिलात ॥१॥

श्री गणेश जी के अनुकूल होते ही विघ्न इस प्रकार दूर हो जाते हैं, जिस प्रकार प्रयाग के मार्ग मे पैर पडते ही पापो का पहाड लुप्त हो जाता है।

श्री वाणी वन्दना

वाणी जू के वरण युग सुवरण-कण परमान।
सुकवि सुमुख कुरुखेत परि, होत सुमेरु समान ॥२॥

'वाणी' जी (श्री सरस्वती देवी) के दो अक्षर, वास्तव मे स्वर्ण के कण है जो सुकवि के सुन्दर मुख रूपी कुरुक्षेत्र मे पड कर सुमेरु के समान हो जाते हैं।

गणपति दन्त वर्णन

सत्त्व सत्त्व गुण को कि सत्य ही की सत्ताशुभ,
सिद्धि की प्रसिद्धि की सुबुद्धि वृद्धि मानिये।
ज्ञान ही की गरिमा कि महिमा विवेक ही की,
दरशन ही को दरशन उर आनिये ॥
पुण्य को प्रकाश वेद-विद्या को विलास किधौ,
यश को निवास 'केशौदास' जग जानिये।
मदन-कदन-सुत-वदन-रदन किधौ,
विघन विनाशन की विधि पहिचानिये ॥३॥

इसे सत्त्व गुण का सार या सत्य की शुभसत्ता या सिद्धियो की ख्याति अथवा सुबुद्धि की वृद्धि मानें। अथवा ज्ञान की गरिमा या विवेक का महत्त्व अथवा दर्शनशास्त्र का दर्शन ही समझें। या पुण्य का प्रकाश या वेदविद्या की शोभा अथवा (केशवदास कहते है कि) ससार मे यश का निवासस्थान माने। इसे कामदेव को मारने वाले (श्री शिव जी) के पुत्र (श्री गणेश जी) के मुख का दांत मानें या विघ्नो को नष्ट करने का उपाय समझें।

ग्रन्थ-रचना-काल

दोहा

प्रगट पञ्चमी को भयो, कवि-प्रिया अवतार।
सोरह से अट्ठावनो, फागुन सुदि बुधवार ॥४॥
नृप कुल बरनौ प्रथम ही, अरु कवि केशव वंश।
प्रगट करी जिन कवि-प्रिया, कविता को अवतंश ॥५॥

सवत् १६५८ में फालगुन सुदि पचमी बुद्धवार कवि प्रिया का आरभ किया गया है। सबसे पहले इसमे राजवंश का वर्णन किया गया है। इसके बाद केशव कवि के वश का वर्णन है जिन्होने कविता की शोभा इस 'कविप्रिया' की रचना की है।

नृपवश वर्णन

ब्रह्मादिक की विनय ते, हरण सकल भुविभार।
सूरजवंश कर्यो प्रगट, रामचन्द्र अवतार ॥६॥
तिनकेकुल कलिकालरिपु, कहि केशव रणधीर।
गहरवार विख्यात जग, प्रगट भये नृप वीर ॥७॥
करण नृपति तिनके भये, धरणी धरमप्रकास।
जीति सबै जगती कर्यो, वाराणसी निवास ॥८॥
प्रगट करणतीरथ भयो, जगमें तिन के नाम।
तिनके अर्जुनपाल नृप, भये महोनी ग्राम ॥९॥

गढ़ कुँड़ार तिनके भये, राजा साहनपाल।
सहजकरण तिनके भये, कहि केशव रिपु काल ॥१०॥
राजा नौनिकदे भये, तिन के पूरणसाज।
नौनिकदे के सुत भये, पृथुज्यों पृथ्वीराज ॥११॥
रामसिंह राजा भये, तिन के शूर समान।
राजचन्द्र तिनके भये, राजा चन्द्र प्रमान ॥१२॥
राय मेदनीमल भये, तिन के केशवदास।
अरिमद मरदन मेदिनी, कीन्हों धरम प्रकास ॥१३॥
राजा अर्जुनदे भये, तिन के अर्जुन रूप।
श्रीनारायण को सखा, कहैं सकल भुविभूप ॥१४॥
महादान षाड़श दये, जीती जग दिशिचारि।
चारौ वेद अटारहौ, सुने पुराण विचारि ॥१५॥
रिपुखण्डन तिनके भये, राजा श्री मलखान।
युद्ध जुरे न मुरे कहूँ, जानत सकल जहान ॥१६॥
नृप प्रतापरुद्र सु भये, तिनके जनु रणरुद्र।
दया दान को कल्पतरु, गुणनिधि शीलसमुद्र ॥१७॥
नगर ओरछो जिन रच्यो, जगमे जागति कृत्ति।
कृष्णदत्त मिश्रहि दई, जिन पुराण की वृत्ति ॥१८॥
भरतखण्ड मण्डन भये, तिनके भारतचन्द।
देश रसातल जात जिहि, फेरयो ज्यों हरिचन्द ॥१९॥
शेरशाहि असलम के, उर शाली शमशेर।
एक चतुरभुज हू नयो, ताको शिर तेहि वेर ॥२०॥

ब्रह्मादिक की विनय से समस्त पृथ्वी का भार दूर करने के लिए सूर्यवंश मे श्रीरामचन्द्र का अवतार हुआ। उसी सूर्यवंश के अन्तर्गत जगत-प्रसिद्ध गहरवार कुल मे, कलियुग के बैरी और रणधीर राजा बीरसिंह प्रकट हुए। उनके पुत्र राजा करण हुए जिन्होंने पृथ्वी पर

धर्म का प्रकाश फैलाया और सा॰ जगत को जीतकर काशी में निवास किया। वहाँ उनके नाम से करण-तीर्थ अब भी प्रसिद्ध है। उनके पुत्र अर्जुनपाल राजा हुए, जो महोनी गाँव मे रहने लगे। उनके पुत्र राजा साहनपाल हुए जिन्होने गढ़कुँडार मे निवास कया। उनके पुत्र सहजकरण हुए जो शत्रुओ के लिए काल स्वरूप थे। उनके पुत्र राजा 'नौनिकदेव' हुए और, नौनिक देव के पुत्र पृथु के समान पृथ्वीराज' हुए। उनके पुत्र सूर्य के समान राजा रामसिह हुए और 'रामसिह' के पुत्र चन्द्रमास्वरूप रामचन्द्र हुये। 'र.जचन्द्र' के पु॰ राय 'मेदिनीमल' हुए जिन्होने शत्रुओ का घमन्ड चूर करके पृथ्वी पर धर्म का प्रकाश फैलाया। उनके पुत्र अर्जुन स्वरूप राजा अर्जुन देव हुए जिन्हे पृथ्वी के सभी राजा श्रीनारायण का मित्र ही कहा करते थे और जिन्होने षोडष महादान दिये तथा चारो दिशाओ के राजाओ को जीत लिया और चारो वेद तथा अठारहो पुराणो को सुना। उनके पुत्र, वैरियो को मारने वाले श्री मलखानसिह हुए जो कभी युद्ध होने पर पीछे नहीं मुडे और जिन्हे सारा जगत जानता था। उनके पुत्र युद्ध मे रुद्ररूप धारण करने वाले 'प्रतापरुद्र' हुए जो दया तथा दान के कल्पतरु और गुणो के कोष तथा शील के समुद्र थे। उन्होने 'ओरछा' नगर बसाया जिससे ससार मे उनकी कीर्त्ति फली तथा कृष्णदत्त मिश्र को पुराण सुनाने की वृत्ति प्रदान की। उनके पुत्र भारतवर्ष की शोभा-स्वरूप भारतीचन्द हुए जिन्होने ह॰रचन्द्र के समान देश को रसातल जाने से बचा लिया और शेरशाह असलेम की छाती मे तलवार घुसेड दी। अपने समय मे उन्होने श्री चतुर्भुज नारायण को छोड और किसी दूसर को सिर नहीं झुकाया।

उपजि न पायो पुत्र तेहिं, गयो सु प्रभु सुरलोक।
सोदर मधुकरशाह तब, भूप भये भुविलोक ॥२१॥
जिनके राज रसा बसे, केशव कुशल किसान।
सिन्धु दिशा नहिं वारही, पार बजाय निशान ॥२२॥

तिनपर चढ़िआये जे रिपु, केशव गये ते हारि ।
जिन पर चढ़ि आपुन गये, आये तिनहि सँहारि ॥२३॥
सबलशाह अकबर अवनि, जीतिलई दिशि चारि ।
मधुकरसाहि नरेश गढ, तिन के लीन्हे मारि ॥२४॥
खान गनै सुल्तान को, राजा रावत बाद ।
हार्‌यो मधुकरसाहि सों, आपुन साहिमुराद ॥२५॥
साध्यो स्वारथ साथही, परमारथ सो नेह ।
गये सो प्रभु वैकुंठमग, ब्रह्मरन्ध्र तजि देह ॥२६॥
तिनके दूलहराम सुत, लहुरे होरिलराउ ।
रिपुखण्डन कुलमण्डनौ, पूरण पुहुमि प्रभाउ ॥२७॥
रनरूरो नरसिह पुनि, रतनसेनि सुनि ईश ।
बांध्यो आपु जलालदी, बानो जाके शीश ॥२८॥
इन्द्रजीत, रणजीत पुनि शत्रुजीत बलबीर ।
बिरसिह देव प्रसिद्ध पुनि, हरिसिहौ रणधीर ॥२९॥
मधुकरसाहि नरेश के, इतने भये कुमार ।
रामसिह राजा भये, तिन के बुद्धि उदार ॥३०॥
घर बाहर वरणहि तहाँ, केशव देश विदेश ।
सब कोई यहई कहै, जीतै राम नरेश ॥३१॥
रामसाहि सों शूरता, धर्म न पूजै आन ।
जाहि सराहत सर्वदा, अकबर सो सुलतान ॥३२॥
कर जोरे ठाढ़े तहाँ, आठौ दिशि के ईश ।
ताहि तहाँ बैठक दियो, अकबर सो अवनीश ॥३३॥
जाके दरशन को गये, उघरे देव किवाँर ।
उपजी दीपति दीप की, देखति एकहिबार ॥३४॥
ता राजा के राज अब, राजत जगती माँह ।
राजा, रानी; राउ सब, सोवत जाकी छाँह ॥३५॥

तिन के सुत ग्यारह भये, जेठ साहि संग्राम ।
दक्षिण दक्षिणराज सों, जिन जीत्यो संग्राम ॥३६॥
भरतखण्ड भूषण भये, तिन के भारतसाहि ।
भरत, भगीरथ, पारथहि, उनमानत सब ताहि ॥३७॥
सुत सोदर नृप रामके, यद्यपि बहु परिवार ।
तदपि सबै इन्द्रजीत शिर राजकाज को भार ॥३८॥
कल्पवृक्ष सो दानि दिन, सागर सो गम्भीर ।
केशव शूरो सूरसो, अर्जुन सो रणधीर ॥३९॥
ताहि कछोवाकमल सो, दीन्हों नृप राम ।
विधि सों साधत बैठि तहँ, भूपति वाम अवाम ॥४०॥

उनके कोई पुत्र उत्पन्न नहीं होने पाया कि वह स्वर्ग लोक सिधार गये। तब उनके सगे भाई मधुकरशाह राजा हुए। उनके राज्य में किसान कुशलपूर्वक निवास करते थे। उन्होने सिन्धु नदी के इस ओर ही नहीं, प्रत्युत उस ओर दूसरे किनारे पर भी अन्य राजा के राज्य मे विजय का डका बजाया। उन पर जो शत्रु चढकर आये, वे हार कर गये और जिन पर उन्होने स्वय चढाई की, उन्हे वे मार कर आये। महाप्रतापी अकबर ने पृथ्वी की चारो दिशाओ को जीत लिया था, परन्तु मधुकरशाह ने उसके किले भी अपने अधीन कर लिए। सुलतान (अकबर) को तो वह साधारण खान (सरदार) समझते थे और अन्य राजा-रावो को तो कुछ गिनते ही न थे। स्वय मुरादशाह मधुकरशाह से हार गये थे। उन्होने अपने स्वार्थसाधन के साथ ही साथ परमार्थ से भी स्नेह किया और वह ब्रह्मरध्र मार्ग द्वारा (तालू फट जाने से) शरीर छोड कर स्वर्ग सिधारे। उनके बडे पुत्र दूलहराम तथा छोटे होरिलराव हुए जो बैरियों को मारने वाले और अपने वश की शोभा थे तथा समस्त पृथ्वी पर उनका प्रभाव था। फिर (तीसरे) रण-बाँकुरे नृसिह और (चौथे) रतनसेन थे, जिन्होने जलालुद्दीन अकबर शाह को हराया था और जिनकी बडी प्रशंसा थी।

फिर (पांचवे) शत्रुओ को जीतने वाले इन्द्रजीत और (छठवे) बलवान शत्रुजीत थे तथा (सातवे) प्रसिद्ध वीरसिह देव और (आठवे) रणधीर हरिसिह देव थे । मधुकरशाह के इतने पुत्र हुए उनमें रामसिह राजा हुए जो बडी उदारबुद्धि वाले थे । उनकी घर-बाहर तथा देश-विदेश सभी स्थानो मे, लोग प्रशसा करते हुए यही कहा करते थे 'कि राजा रामचन्द्र सिह सदा विजयी रहते हैं ।' रामसिंह से वीरता और धार्मिकता मे, कोई दूसरा बराबरी नहीं कर सकता था । और जिनकी प्रशसा स्वय सुलतान अकबर करते थे । जहाँ पर आठो दिशाओ के राजा हाथ जोडे खडे रहते थे, वहाँ पर अकबर जैसे बादशाह ने उन्हे सम्मानपूर्वक बैठाया था । जिनके (श्री बद्रीनाथ) जी के) दर्शनार्थ जाने पर देव-मन्दिर के दरवाजे स्वय खुल गये थे और उनके एक बार देखते ही दीपक मे भी ज्वाला उत्पन्न हो गई थी । उसी राजा का राज्य अब इस पृथ्वी पर सुशोभित हो रहा है और उसकी छाया (आश्रय) मे राजा, राना, राव, सभी सुखपूर्वक सोते हैं । उनके ग्यारह पुत्र हुए जिनमे सबसे बडे संग्राम सिह थे, जिन्होने दक्षिण के राजा से सग्राम जीता था । उनके पुत्र भारतीशाह हुए जो भरतखन्ड की शोभा थे और जिन्हे लोग भरत भगीरथ और अर्जुन की उपमा दिया करते थे । यद्यपि राजा रामसिह के बेटे, भाई तथा और बहुत सा परिवार था तथापि राज-काज का सारा भार इन्द्रजीत पर था । वह कल्प-वृक्ष से दानी, समुद्र के समान गम्भीर, सूर्य जैसी तेजस्वी और अर्जुन जैसे रण-धीर थे । राजा रामसिह ने उन्हे अपना कछोवागढ प्रदान किया था जहाँ बैठ कर वह शत्रु और मित्र से यथाविधि वर्त्ताव करते थे ।

कियो अखारो राज को, शासन सब संगीत ।
ताको देखत इन्द्र ज्यों, इन्द्रजीत रणजीत ॥४१॥
बाल वयक्रम बाल सब, रूप शील गुण वृद्ध ।
यद्पि भरो अवरोध षट, पातुर परम प्रसिद्ध ॥४२॥

रायप्रवीण प्रवीण अति, नवरंगराइ सुवेश ।
अति विचित्र नैना निपुण, लोचन नलिन सुतेश ॥४३॥
सोहत सागर राय की, तानतरंग तरंग ।
रंगराइ रँगवलित गति, रँगमूरति अँग अँग ॥४४॥
तन्त्री, तुम्बुर, सारिका, शुद्धि सुरनि सों लीन ।
देवसभा सी देखिये, रायप्रवीण प्रवीन ॥४५॥
सत्या, रायप्रवीणयुत, सुरतरु, सुरतरु गेह ।
इन्द्रजीत तासों बँध्यो, केशवदास सनेह ॥४६॥
सुरी, आसुरी, किन्नरी, नरी राहति सिरु नाइ ।
नवरस नवधाभक्ति स्यो, शोभित नवरँग राइ ॥४७॥
हाव-भाव संभावना, दोला सम सुखदाय ।
पियमन देति झुलाय गति, नवरस नवरंगराय ॥४८॥
भैरवयुत गौरी सँयुत, सुतरंगिनी लेखि ।
चन्द्रकला सी सोहिये, नैनविचित्रा देखि ॥४९॥
नैन बैन रति सैन सम, नैनविचित्रा नाम ।
जयन शील पति मैन मन, सदा करति विश्राम ॥५०॥
नागरि सागरि राग की, सागर तानतरंग ।
पति पूरणशशि दरसि दिन, बाढ़ति तान तरंग ॥५१॥
तानति तानतरंग की, तन मन बेधति प्राण ।
कलाकुसुमशर शरन की, अति अयानि तनत्राण ॥५२॥
रंगराय की आंगुरी, सकल गुणनि की मूरि ।
लागत मूँढ़ मृदंग मुख, शब्द रहत भर पूरि ॥५३॥
रंगरायकर मुरजमुख, रँगमूरति पद चारु ।
मानो पढ़्यो है साथ ही, सब संगीत विचारु ॥५४॥
अंग जिते संगीत के, गावत गुणी अनंत ।
रँगमूरति अँग अंग प्रति, राजन मूरतिवंत ॥५५॥

रायप्रवीण प्रवीण सों, परवीणन वहँ सुख।
अपरवीण केशव कहा, परवीणन मन दुख ॥५६॥
रतनाकर लालित सदा, परमानन्दहि लीन।
अमल कमल कमनीय कर, रमा कि रायप्रवीन ॥५७॥
राय प्रवीण कि शारदा, शुचि रुचि रंजित अग।
वीणा पुस्तक धारणी, राजहँस सुत सग ॥५८॥
वृषभवाहिनी अंगयुत, वासुकि लसत प्रवीण।
शिव सँग सोहति सर्वदा, शिवा कि रायप्रवीण ॥५९॥
नाचत गावत पढत सब, सबै बजावत वीण।
तिन मे करत कवित्त यक रायप्रवीण प्रवीण ॥६०॥
सविताजू कविता दई, जाकहँ परम प्रकास।
ताके कारज कविप्रिया, कीन्ही केशवदास ॥६१॥

राज्य का भली-भाँति शासन प्रबन्ध करने के बाद इन्द्रजीतसिंह ने सगीत का अखाडा जमाया और वह उस अखाडे मे इन्द्र के समान ही आनन्द लेते थे। यद्यपि रूप, शील और गुण मे बढी हुई नवयुवती बालाओ से उनका अन्त पुर भरा हुआ था, परन्तु उनमे छ वेश्याये बहुत प्रसिद्ध थीं। उनमे (पहली) अत्यन्त चतुर प्रवीणराय, (दूसरी) सुन्दर वेशवाली नवरगराय, (तीसरी) अत्यन्त निपुणा और कमल जैसे नेत्रवाली विचित्रनयना, (चौथी) राग के समुद्र की लहर के समान तानतरग, (पाँचवीं) आनन्दमूर्ति रगराय तथा (छठवीं) सर्वाङ्गसुन्दरी रगमूर्ति थी। इनमे चतुर प्रवीणराय की वीणा देवसभा के समान प्रतीत होती थी, क्योकि जिस प्रकार देवसभा तन्त्री (वृहस्पति) तुंदुरु गन्धर्व, सारिका अप्सरा और शुद्ध (सत्वगुणवाले) देवताओ से युक्त रहती है उसी प्रकार उसकी वीणा भी तन्त्री (तार), तुँबुर (तूँबा), सारिका (घोरिया) और शुद्ध स्वरो से युक्त है। रायप्रवीण सत्या (सत्यभामा) के समान है, क्योकि जिस प्रकार उसके घर

में सुरतरु (पारिजात वृक्ष) था, उसी प्रकार इसके घर मे सुरतरु (स्वरो का वृक्ष) है। (ऐसी वीणा है, जिसमे सातो स्वर निकलते हैं)। जिस प्रकार उस पर इन्द्रजीत (श्रीकृष्ण, जो इन्द्र को जीत कर पारिजात लाये थे) अनुरक्त थे, उसी प्रकार इस प्रवीणराय से इन्द्रजीतसिंह स्नेह बद्ध हैं। नवो रसो और नवो प्रकार की भक्ति के सहित नवरगराय वेश्या ऐसी सुशोभित होती थी कि उसे देखकर नारियाँ, किन्नरियाँ, असुर तथा देव स्त्रियाँ सिर झुका लेती थीं। नये ढङ्ग के हाव-भाव मे नवरगराय अपने प्रियतम के मन को झुला देती है, इसलिए झूला जैसी सुखदायक है। नयनविचित्रा चन्द्रकला के समान सुशोभित है, क्योंकि जिसप्रकार चन्द्रकला, भैरव, गौरी (पार्वती) और सुरतरगिनी (गगा) से युक्त है, उसी प्रकार वह भी भैरव तथा गौरी रागो से युक्त है और सुरतरंगिनी अर्थात् स्वरो की तो मानो नदी ही है। नयन विचित्रा नाम की वेश्या नयन और बचन मे रति-समय की चेष्टाओ के समान है तथा अपने कामदेव स्वरूप पति के मन को जीतने वाली है तथा उसके मन मे सदा विश्राम करती है। तानतरग वेश्या बडी चतुर तथा रागो की सागर है और अपने पूर्ण चन्द्रमा जैसे पति के दर्शन के दिन उसके मन मे रागो की लहरें उठा करती हैं। तानतरग की ताने तन, मन और प्राणो को बेध डालती हैं। वे तानें कामदेव के बाणो की कला रखती है जिनसे बचने के लिए अज्ञान ही तनत्राण (कवच) का काम देता है अर्थात् अज्ञानी ही उन कलाओ से बच सकता है। रगराय की उँगलियाँ सब गुणो को मूल हैं जो मूढ मृदङ्ग के मुख मे लगते ही उसे शब्दो से भरपूर कर देती है। रगराय के हाथो, मृदङ्ग के मुख तथा रगमूर्ति के सुन्दर पैरो ने मानो एक साथ ही सङ्गीत विद्या को पढा है। सङ्गीत के जितने अग है और जिन्हे अनन्त गुणी जन गाया करते हैं, वे सब रङ्गमूर्ति के अग-अग मे मूर्तिमान रहते है। रायप्रवीण को वीणा से प्रवीणो (चतुरो) को सुख होता है।

अप्रवीणो की तो बात ही क्या कहूँ उसके विरोधियो की वीणाओं तक को मन मे दुःख होता है (कि हम इसके हाथ से न बजाई गईं)। यह रायप्रवीण है या लक्ष्मी है, क्योकि जिस प्रकार लक्ष्मो, रत्नाकर (समुद्र) से लालित हैं उसी प्रकार यह भी रत्नाकर (रत्नो के समूह) से लालित रहती है। जिस प्रकार लक्ष्मी परमानन्द (भगवान् विष्णु) मे लीन रहती है उसी प्रकार यह भी अत्यन्त आनन्द मे लीन रहती है। जिस प्रकार लक्ष्मी के हाथो मे निर्मल कमल रहता है उसी प्रकार यह भी हाथों में कमल नामक ककरण पहने रहती है। यह प्रवीण राय है या शारदा है? क्योकि, जिस प्रकार शारदा का शरीर स्वच्छ कान्ति से युक्त है उसी प्रकार इसका शरीर भी शृगार से सुशोभित है। जैसे शारदा वीणा और पुस्तक धारण करती है, वैसे यह भी वीणा और पुस्तक लिये रहती है। जिस प्रकार शारदा राज हस के पुत्र अर्थात् राजहस के साथ रहती हैं, उसी प्रकार यह भी हस-सुत अर्थात् सूर्य वशी-राजा के साथ रहा करती है। यह राय प्रवीण है या पार्वती, क्योकि जिस प्रकार शिव की अर्द्धाङ्गिनी होने के कारण पार्वती वृषवाहिना (बैल पर सवार) हैं उसी प्रकार यह भी वृष वाहिनी (धर्म पर सवार) है। जिस प्रकार उनके अग मे बासुकि (नाग) पडा रहता है उसी प्रकार इसके अग मे भी बासुकि (सुगन्धित पुष्पहार) रहता है। वह जैसे शिव के सग रहती है, वैसे यह भी शिव (सुशोभितरूप के साथ रहती है। वैसे तो सभी वेश्याएँ नाचती, गाती, पढती और वीणा बजाती है परन्तु उनमे काव्य रचना अकेली रायप्रवीण करती है। श्री सूर्य देव ने उसे कविता करने की प्रकाशमयी प्रतिभा दी है। उसी की शिक्षा के लिए केशवदास ने यह 'कविप्रिया' बनाई है।

दूसरा प्रभाव

कविवंश वर्णन

ब्रह्मादिक के विनय ते, प्रकट भये सनकादि।
उपजे तिनके चित्त ते, सब सनाढ्य की आदि ॥१॥
परशुराम भृगुनंद तब, तिनके पायँ पखारि।
दिये बहत्तरि ग्राम सब, उत्तम विप्र विचारि ॥२॥
जगपावन बैकुँठपति, रामचन्द्र यह नाम।
मथुरा-मंडल में दिये, तिन्हैं सात सै ग्राम ॥३॥
सोमवंश यदुकुल कलश, त्रिभुवनपाल नरेश।
फेरि दिये कालकाल पुर, तेई तिनहि सुदेश ॥४॥
कुँभवार उद्देश कुल, प्रकटे तिन के बंस।
तिन के देवानन्द सुत, उपजे कुल अवतंस ॥५॥
तिनके सुत जगदेव जग, थापे पृथ्वीराज।
तिनके दिनकर सुकुल सुत, प्रगटे पंडितराज ॥६॥
दिल्लीपति अल्लावदी, कीन्ही कृपा अपार।
तीरथ गया समेत जिन, अकर कियो कै बार ॥७॥
गया गदाधर सुत भये, तिनके आनंदकन्द।
जयानन्द तिनके भये, विद्यायुत जगवन्द ॥८॥
भये त्रिविक्रम मिश्र तब, तिनके पण्डितराय।
गोपाचल गढ़ दुर्गपति, तिनके पूजे पाँय ॥९॥
भावशर्म तिनके भये, तिनके बुद्धि अपार।
भये शिरोमणि मिश्र तब, षटदरशन अवतार ॥१०॥
मानसिंह सों रोप करि, जिन जीती दिशि चारि।
ग्राम बीस तिनको दये, राना पायँ पखारि ॥११॥

तिनके पुत्र प्रसिद्ध जग, कीन्हे हरि हरिनाथ।
तामरपति तजि और सो, भूलि न ओड्यो हाथ ॥१२॥
पुत्र भये हरिनाथ के, कृष्णदत्त शुभ वेष।
सभा शाह सग्राम की जीती गढ़ी अशेष ॥१३॥
तिनको वृत्ति पुराण की, दीन्ही राजा रुद्र।
तिनके काशीनाथ सुत, सो भे बुद्धिसमुद्र ॥१४॥
जिनको मधुकरशाह नृप, बहुत कियो सनमान।
तिनके सुत बलभद्र बुध, प्रकटे बुद्धिनिधान ॥१५॥
बालहि ते मधुशाह नृप तिनसों सुन्यो पुरान।
तिनके सोदर द्वै भये, केशवदास कल्यान ॥१६॥
भाषा बोलि न जानहीं, जिनके कुल के दास।
भाषा कवि भो मंदमति, तेहि कुल केशवदास ॥१७॥
इन्द्रजीत तासों कह्यो, मांगन मध्य प्रयाग।
मांग्यो सब दिन एक रस, कीजै कृपा सभाग ॥१८॥
योहीं कह्यो जु बीर बर, मांगु जु मन मे होय।
मांग्यो तव दरबार में, मोहिं न रोकै कोय ॥१९॥
गुरु करि मान्यो इन्द्रजित, तनमन कृपा विचारि।
ग्राम दये इकबीस तब, ताके पायँ पखारि ॥२०॥
इन्द्रजीत के हेतु पुनि, राजा राम सुजान।
मान्यो मन्त्री मित्र कै, केशवदास प्रमान ॥२१॥

ब्रह्माजी के चित्त से सनकादि प्रकट हुए और उनके चित्त से सनाढ्य ब्राह्मणो की उत्पत्ति हुई। (अर्थात् ब्रह्माजी के मानसिक पुत्र सनकादि थे और सनकादि के मानसिक पुत्र सनाढ्य ब्राह्मण हुए)। भृगुनन्द परशुराम ने उन्हे उत्तम ब्राह्मण समझ कर पैर पखारे और ७२ गाँव दिये। जग-पावन वैकुंठपति श्री रामचन्द्र जी ने मथुरा मण्डल मे उन्हे ७०० गाँव प्रदान किये। फिर सोमवश के यदुकुल-श्रेष्ठ तथा त्रिभुवन पालक श्रीकृष्ण महाराज ने भी कलियुग मे उन्हे वही (मथुरा

मण्डल) देश प्रदान किया। उनके वश के उद्दसकुल मे कुभवार उत्पन्न हुए। उनके पुत्र अपने वश की शोभा-देवानन्द हुए। उनके पुत्र जयदेव और जयदेव के पुत्र पडितराज दिनकर हुए। उनपर दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन बडी कृपा रखता था। उन्होने गया समेत अनेक तीर्थों की यात्रा बहुत बार की थी। उनके पुत्र आनन्दकन्द गया गदाधर हुए और उनके पुत्र जयानन्द हुए जो विद्वान और जगत्प्रतिष्ठित थे। उनके पुत्र पडितराज त्रिविक्रम मिश्र हुए जिनके पैरो की पूजा गोपाचल किले क राजा ने की थी। उनके पुत्र भावशर्मा हुए जो बड़े बुद्धिमान थे। भावशर्मा के पुत्र शिरोमणि मिश्र हुए जो षट् दर्शनो के मानो अवतार ही थे। मानसिह पर क्रोध प्रकट करके उन्होने चारो दिशाओ को जीता और राणा ने उनके पैर धोकर बीस गाँव प्रदान किये। उनको भगवान् ने जगत्-प्रसिद्ध हरिनाथ पुत्र दिया, जिन्होंने तोमरपति का छोड़ और किसी के आगे भूलकर भी हाथ नहीं फैलाया। हरिनाथ के शुभ वेसवाले कृष्णदत्त हुए जिनको राजा रुद्र ने पुराण की वृत्ति प्रदान की। उनके पुत्र बुद्धि के समद्र काशीनाथ हुए जिनका राजा मधुकरशाह ने बडा सम्मान किया और बालकपन से ही मधुकरशाह ने उनसे पुराणो को सुना। उनके दो भाई और हुए जिनके नाम केशवदास और कल्याणदास थे। जिसके कुल मे (सस्कृत को छोड) लोग भाषा को बोलना तक न जानते थे उसी कुल मे भाषा-कवि मदमति केशवदास उत्पन्न हुआ। उससे जब इन्द्रजीत ने, प्रयाग मे कुछ मांगने के लिए कहा तब उसने कहा कि 'आप इसी प्रकार सदा कृपा करते रहिए।' इसी प्रकार बीरबल ने भी कहा था 'कि तुम्हारे मन मे जो कुछ हो मांग लो।' तब यही मांगा था कि 'आपके दरबार में मुझे कोई न रोके।' उसको इन्द्रजीत ने अपना गुरु समझ कर सदा तन-मन से कृपा की और उसके पैर धोकर इक्कीस गाँव प्रदान किये। उन्हीं इन्द्रजीत के हेतु राजा रामशाह जी ने केशवदास को अपना मत्री तथा मित्र समझकर आदर किया।

तीसरा प्रभाव

[काव्य-दूषण]

दो०—समुझैं बाल बालकन, बर्णन पन्थ अगाध ।
कविप्रिया केशव करी, छमियहु कवि अपराध ॥१॥

केवशदास कहते है कि मैने इस कविप्रिया पुस्तक को इसलिए लिखा है कि जिससे कविता के अगाध रहस्य को स्त्री तथा बालक भी समझ सकें, अत. कविगण मेरा अपराध क्षमा करे।

अलंकार कवितान के, सुनिगुनि विविध विचार ।
कविप्रिया केशव करी, कविता को शृगार ॥२॥

कविता के अलकारादि विविध गुणो को विचारपूर्वक सुनने और समझने के बाद 'केशव' ने कविता की शोभा इस कविप्रिया को लिखा है।

सगुन पदारथ अरथयुत, सुबरन मय, शुभ साज ।
कंठमाल ज्यों कविप्रिया, कंठ करहु कविराज ॥३॥

हे कविराज ! इस 'कविप्रिया' को गले का हार के समान गले में पहन लो (कठस्थ करलो)। इसमे काव्य के गुण (ओज, प्रसाद, माधुर्य) का डोरा है । काव्यार्थ ही इसके पदार्थ (मणि-माणिक्य-रत्नादि) है और सुन्दर अक्षर ही इसके सोने के गुरियाँ है और यह भली भाँति सजाया गया है।

चरण धरत चिता करत, नींद न भावत शोर ।
सुबरण को सोधत फिरत, कवि व्यभिचारी, चोर ॥४॥

कवि, व्यभिचारी और चोर सदा सुबरण (सुन्दर अक्षर, सुन्दर रग और सोना) ढूंढते रहते है । कवि, छन्द का एक-एक चरण

रचते समय अच्छी तरह सोचता-विचारता है। उसे न नींद अच्छी लगती है और न कोलाहल सुहाता है । वह सुन्दर अक्षर खोजता है। व्यभिचारी, एक एक चरण (पैर) सोच-समझ कर रखता है। उसको (दूसरो की) नींद (निद्रा) तो अच्छी लगती है परन्तु कोलाहल अच्छा नहीं लगता। वह सुन्दर रंग की नायिका खोजता है। चोर भी एक-एक चरण (पैर) रखते समय सोचता-विचरता है (सभल कर पैर रखता है कि कहीं कोई आहट न सुनले) और उसे भी दूसरो की नींद (निद्रा) अच्छी लगती है और कोलाहल नहीं सुहाता। वह सोना ढूँढता रहता है।

रचत रच न दोष युत, कविता, बनिता मित्र।
बुंदक हाला परत ज्यों, गंगा घट अपवित्र ॥५॥

कविता, स्त्री तथा मित्र मे थोड़ा सा भी दोष हो तो वे इस प्रकार अच्छे नहीं लगते जिस प्रकार मदिरा की एक बूँद पड़ते ही गगा जल का भरा हुआ पूरा घडा अपवित्र हो जाता है।

विप्र न नेगी कीजई, मुग्ध न कीजै मित्त।
प्रभु न कृतघ्ना सेइये, दूषणसहित कवित्त ॥६॥

ब्राह्मण को नेगी (अधिकारी) और मूर्ख को मित्र, न बनाना चाहिए। कृतघ्न स्वामी की सेवा न करनी चाहिए तथा दोष युक्त कविता नहीं रचनी चाहिए ।

दोषों के नाम और लक्षण

अन्ध बधिर अरु पगु तजि, नगन, मृतक मतिशुद्ध।
अन्ध विरोधी पन्थ को, बधिरजो शब्दविरुद्ध ॥७॥

हे मतिशुद्ध (शुद्ध बुद्धि वाले) तुम 'अन्ध', 'बधिर', 'पगु', 'नग्न', तथा मृतक (इन पाँचो दोषो) को छोड दो। कविता के पन्थ का विरोधी 'अन्ध' दोष है अर्थात् कविता की बँधी हुई प्राचीन परम्पराओ से हटना अन्ध दोष कहलाता है। विरुद्ध (परस्पर विरोधी) शब्दो का प्रयोग 'बधिर' दोष है।

छन्द विरोधी पंगु गुनि, नगन जो भूषण हीन।
मृतक कहावै अरथ बिन, केशव सुनहु प्रवीन ॥८॥

'केशव' कहते हैं कि हे प्रवीणराय सुनो। छन्द-शास्त्र के विरुद्ध रचना 'पगु' तथा भूषण हीन (अलकार-रहित) 'नग्न' और अर्थ रहित मृतक कहलाती है।

उदाहरण

(१) पथविरोधी 'अन्ध' दोष।

सवैया

कोमलकंज से फूल रहे कुच, देखतही पति चन्द विमोहै।
बानर से चल चारु विलोचन, कोये रचे रुचि रोचन कोहै॥
माखन सो मधुरो अधरामृत, केशव को उपमाकहुँ टोहै।
ठाढी है कामिनी दामिनसी, मृगभाभिनिसी गजगामिनिसोहै ॥९॥

कोमल-कज जैसे कुच फूल रहे हैं जिन्हे देखकर पति रूपी चन्द्र मोहित होता है। बंदर जैसे चचलनेत्र है और उन नेत्रो के कोए रोरी जैसे लाल हैं। अधरामृत मक्खन सा है। बिजली जैसी गजगामिनी नायिका मृगभामिनी (हिरनी) जैसी खडी है।

[इसमे कुचो का वर्णन करते हुए उन्हे कमल के समान कहा गया है जो कवि परम्परा के विरुद्ध है अतः पथविरोधी अन्ध दोष है। कमल के साथ पति को चन्द्र कहना भी पथविरोध है क्योकि कमल और चन्द्रमा का परस्पर विरोध है। इसी प्रकार नेत्रो को बन्दर के नेत्रो की उपमा तथा कोयो को रोरी जैसा लाल कहना भी पथ विरुद्ध दोष है। ओठो को मक्खन जैसा बतलाना कवि परम्परा के विरोधी है, क्योकि आठो को मक्खन जैसा श्वेत और कोमल होना भद्दा समझा जाता है। 'गजगामिनी' स्त्री मृग-भामिनी (मृगी) जैसी खड़ी है' इस वाक्य मे भी पथविरोध है]

(२) शब्दविरोधी बधिर।

सवैया

सिद्ध सिरोमणि शंकर सृष्टि, सँहारत साधु समूह भरी है।
सुन्दर मूरत आतमभूतकी, जारि घरीक मे छार करी है।।
शुभ्र विरूप विलोचन सो, मति केशवदास के ध्यान अरी है।
बन्दत देव अदेव सबै मुनि गोत्र सुता अरधंग धरी है ॥१०॥

सिद्ध सिरोमणि शकर जी साधु-समूह भरी सृष्टि का सहार करते हैं। उन्होने आत्म-भूत (कामदेव) की सुन्दर मूर्ति को घडी भर मे जलाकर क्षार कर डाला है। उनका शुभ्र, त्रिलोचन तथा विशेष सुन्दर रूप केशवदास के ध्यान मे समाया हुआ है। जिन्होने गोत्रसुता (पार्वती) को अर्द्धाङ्ग मे धारण किया है, उनकी बन्दना देव, अदेव तथा मुनि सभी करते है।

[यहाँ सिद्धशिरोमणि शङ्कर जी के साथ 'सहारत' क्रिया का प्रयोग करना अनुचित है। शङ्कर का अर्थ कल्याणकारी होता ., अत इस क्रिया का प्रयोग दोष है। आत्म भूत का अर्थ कामदेव के अतिरिक्त पुत्र भी होता है, इसलिये शब्द का प्रयोग भी ठीक नहीं हुआ है। इसी प्रकार त्रिलोचन के साथ शुभ्र तथा विरूप शब्दो के प्रयोग भी अनुचित प्रतीत होते है। 'अरी' का अर्थ बैरी भी हो सकता है, इसलिए इसका प्रयोग भी ठीक नहीं हुआ है। 'गोत्रसुता' का अर्थ पुत्री भी हो सकता है इसलिए यह प्रयोग भी अनुचित प्रतीत होता है। ये सभी शब्द परस्पर विरोधी अर्थ देने का कारण 'बधिर' दोष के अन्तर्गत आते है।]

दोहा

तोल[illegible] तुल्य रहै न ज्यों, कनक तुला, तिल आधु।
त्योंही [illegible]भंग को, सहि न सकैं श्रुति साधु ॥११॥

जिस प्रकार साने को तौलने की तराजू (कांटा) आधे तिल का भ[illegible] भार भेद नहीं सह सकती, उसी प्रकार शुद्ध कविता को सुनने के अभ्यासी कान तनिक भी छन्दो भग को नहीं सह सकते।

(३) छन्दविरोधी पगु दोष ।

सवैया

धीरज मोचन लोचन लोल, विलोकिकै लोककी लीकति छूटी ।
फूटि गये श्रुति ज्ञान के केशव, आँखि अनेक विवेक की फूटी ॥
छाड़िदई शरता सब काम, मनोरथके रथकी गति खूटी ।
त्यों न करै करतार उबारक, ज्यों चितवै वह बारबधूटी ॥१२॥

धैर्य को छुडाने वाले उन चचल नेत्रो को देखकर मुझसे लोक की मर्यादा छूट गई । 'केशव' कहते है कि ज्ञान के कान और विवेक के अनेक नेत्र भी फूट गये । कामदेव ने अपनी शूरता (बाण चलाने की कला) छोड दी और मनोरथ के रथ की चाल रुक गई । जिस प्रकार उस वेश्या ने मेरी ओर देखा है, उस प्रकार, ईश्वर न करे, वह फिर देखे ।

[इस छन्द मे पिगलशास्त्र के नियमानुसार सात भगण और दो गुरू होने चाहिए, परन्तु इस नियम का निर्वाह नहीं किया गया । 'लीकतिछूटी' और 'करतारउबारक' मे भी छदोभग दोष है ।]

(४) अलकारहीन नग्न दोष ।

सवैया

तोरितनी टकटोरि कपोलनि, जोरिरहे कर त्यों न रहौगी ।
पान खवाइ सुधाधर प्याइकै, पांइ गह्यो तस हौ न गहौगी ॥
केशव चूक सबै सहिहौ मुख चूमि चले यहु पै न सहौगी ।
कै मुख चूमन दे फिर मोहि, कै आपनी धायसों जाइकहौगी ॥१३॥

कोई नायिका अपने नायक से कहती है कि तुमने जैसे मेरी कचुकी की तनी तोडकर और कपोलो को टटोल कर हाथ जोड लिए वैसा मै न करूँगी । तुमने जैसे पान खिलाकर अधरामृत पिलाया और फिर पैर पकड़ लिए वैसे मै न करूँगी । 'केशवदास' नायिका की ओर

से कहते है कि मै तुम्हारी सभी चूक सहलूँगी परन्तु तुम जो मेरे मुख को चूमकर चल दिये, यह मै सहन न करूँगी। अतः या तो मुझे फिर अपना मुख चूमने दो नहीं तो मै अपनी धाय से जाकर कह दूँगी।

[इस छन्द मे कोई भी चमत्कारपूर्ण अलकार नहीं है अतः नग्न दोष है]

(५) अर्थहीन मृतक दोष।

सवैया

काल कमाल करील करालनि, शालनि चालनि चाल चली है।
हाल बिहालन ताल तमाल, प्रबालक बालक बाललली है॥
लोल बिलोल कपोल अमोलक, बोलक मोलक कोलकली है।
बोल निचोल कपोलनि टोलति, गोल निगोलक लोल गली है॥१४॥

[इस छन्द में सभी शब्द अर्थ शून्य हैं, अत. इसन अर्थहीन 'मृतक' दोष है।]

कुछ अन्य दोष।

दोहा

अगन न कीजै हीनरस, अरु केशव यतिभंग।
व्यर्थ अपारथ हीन क्रम, कवि कुल तजौ प्रसंग॥१५॥

'केशवदास' कहते है कि हे कवियो! तुम 'अगण' 'हीनरस' 'यतिभंग' 'व्यर्थ', 'अपार्थ', और 'हीन क्रम' दोषा के प्रयोगो को छाड दो।

वर्ण प्रयोग न कर्णकटु, सुनहु सकल कविराज।
शब्द अर्थ पुनरुक्तिके, छोड़हु सिगरे साज॥१६॥

सब कविराज सुनो! कर्णकटु (कानो को अप्रिय लगने वाले) वर्णो का प्रयोग न करो तथा शब्द तथा अर्थ की पुनरुक्ति को भी छोड दो।

देशविरोध न वरणिये, कालविरोध निहारि।
लोक न्याय आगमन के, तजौ विरोध विचारि॥१७॥

'देशविरोध', 'काल विरोध', 'लोकविरोध', न्याय और आगम (शास्त्र) के विरोधो को भी विचारपूर्वक छोड दो।

(५) गनागनफल वर्णन।

केशव गन शुभ सर्वदा, अगन अशुभ उरआनि।
चारिचारि विधि चारु मति, गन अरु अगन बखानि ॥१८॥

'केशवदास' कहते हैं कि गण (सुगण) सर्वदा शुभ माने जाते हैं और 'अगण' (कुगण) को सदा अशुभ समझना चाहिये। बुद्धिमानो ने 'गण' और 'अगण' को चार-चार तरह का बतलाया है।

गनागन नाम वर्णन।

मगन, नगन, पुनि भगन, अरु यगन, सदा शुभ जानि।
जगन, रगन अरु सगन पुनि, तगनहि अशुभ बखानि ॥१६॥

'मगण', 'नगण', 'भगण' और 'यगण' इन्हे सदा शुभ समझा जाता है और 'जगण', 'रगण', 'सगण', तथा 'तगण' को अशुभ माना गया है।

गनागनरूप वर्णन।

मगन त्रिगुरुयुत त्रिलघुमय, केशव नगन-प्रमान।
भगन आदिगुरु आदिलघु, यगन बखानि सुजान ॥२०॥

'केशवदास' कहते हैं कि तीनो गुरु अक्षरो से युक्त 'मगण' और तीनो लघु अक्षरो वाला 'नगण' कहलाता है। जिसके आदि मे गुरु होता है उसे 'भगण' तथा जिसके आदि मे लघु होता है उसे 'यगण' कहते है।

जगन मध्यगुरु जानिये, रगन मध्यलघु होइ।
सगन अंतगुरु अंतलघु, तगन कहत सब कोइ ॥२१॥

जिसके मध्य मे गुरु हो उसे 'जगण' और जिसके मध्य मे लघु हो उसे 'रगण' समझिए। इसी प्रकार जिसके अंत मे गुरु होता है उसे 'सगण' और जिसके अंत मे लघु होता है उसे 'तगण' कहते है।

आठौ गन के देवता, अरु गुन दोष विचार ।
छन्दोग्रन्थनि में कह्यो, तिनको बहु विस्तार ॥२२॥

इन आठो गणो के देवता तथा गुण दोषो का भी छन्द-ग्रन्थों मे विचारपूवक वर्णन किया गया है । उनका बड़ा विस्तार है ।

गण देवता वर्णन ।

मही देवता मगन को, नाग नगन को देखि ।
जल जिय जानहु यगन को, चद भगन को लेखि ॥२३॥

'मगण' का देवता पृथ्वी, 'नगण' का शेषनाथ, यगण का जल, और 'भगण' का चन्द्र समझो ।

सूरज जानहु जगन को, रगन शिखीमय मान ।
वायु समुझिये सगनको, तगन अकाश बखान ॥२४॥

'जगण' का देवता सूर्य और 'रगण' का अग्नि जानो । इसी प्रकार 'सगण' का वायु तथा 'तगण' का आकाश समझो ।

गण मित्रामित्र वर्णन ।

मगन नगन को मित्रगनि, यगन भगन को दास ।
उदासीन जालि जानिये, रस रिपु केशवदास ॥२५॥

'केशवदास' कहते है कि 'मगण' और 'नगण' का नाम मित्र समझो तथा 'यगण' और 'भगण' की दास सज्ञा मानो । इसी तरह 'जगण' और 'तगण' की सज्ञा उदासीन तथा 'रगण' और 'सगण' को शत्रु जानो ।

गण देवता तथा फल वर्णन ।

छप्पय

भूम भूरि सुख देय, नीर नित आनन्दकारी ।
आगि अग दिन दहै, सूर सुख सोखै भारी ॥
केशव अफल अकाश, वायु किल देश उदासै ।
मंगल चन्द अनेक, नाग बहु बुद्धि प्रकासै ॥

यहिबिधि कवित्त फल जानिये कर्ता अरु जा हित करै।
तजि तजि प्रबन्ध सब दोष गन, सदा शुभाशुभ फल धरै ॥२६॥

'पृथ्वी' अत्यन्त सुख देती है और 'जल' सदा आनन्दकारी होता है। 'अग्नि' प्रतिदिन अंग को जलाती है और 'सूर्य' सुख को सुखा डालता है अर्थात् दुखदायी होता है। 'केशवदास कहते है कि 'आकाश' निष्फल होता है तथा 'वायु' देश से उच्चाटन कर देता है। 'चन्द्र' अनेक मङ्गलो को देनेवाला और 'नाग' बुद्धि का बढ़ाने वाला है। इस तरह कविता के शुभाशुभ फलो को जानना चाहिए। ये फलाफल कविता करनेवाले तथा जिसके लिए कविता की जाय दोनो के लिए है अतः अपनी रचना मे सभी दोषो को छोड़ते हुए शुभाशुभ फलो पर सदा विचार कर लेना चाहिए।

द्विगण वर्णन

जो कहुँ आदि कवित्त के, अगन होइ बड भाग।
तात द्विगत विचार चित, कीन्हो वासुकिनाग ॥२७॥

हे बडभाग! यदि कहीं कवित्त के आरम्भ मे 'अगण' आ ही पडे तो उसके निवारण के लिए वासुकि नाग ने विचार कर द्विगण' का नियम बनाया है।

कवित्त

मित्र ते जु होइ मित्र, बाढै बहु रिद्धि-सिद्ध,
मित्र ते जु दास त्रास युद्ध सें न जानिये।
मित्र ते उदास गन होत, गोरा दुख देत,
मित्र ते जु शत्रु होइ मित्र बन्धु हीनिये ॥
दास तें जु मित्र गन काज सिद्ध केशौदास,
दास तें जु दास बस जीव सब मानिये।
दास ते उदास होत धन नास आस-पास,
दास ते जु शत्रु मित्र शत्रु सो बखानिये ॥२८॥

मित्र गण के साथ यदि मित्र गण हो तो ऋद्धि-सिद्ध बढती हैं। 'मित्र गण' के साथ 'दास गण' होने पर युद्ध मे त्रास नहीं होता । हारना नहीं पडता) । मित्र गण के साथ उदासीन गण आवें तो गोत्र या कुटुम्ब को दुख देते हैं और जो मित्र गण तथा शत्रु गण साथ हो तो बन्धु-हानि होती है। 'केशवदास' कहते है कि यदि दास गण और मित्र गण साथ पडे तो कार्य सिद्ध होता है और जो दास गण साथ-साथ पडे तो सभी जीवो को वश मे कर लेते है। यदि 'दास गण' और 'उदासीन गण' साथ-साथ हो तो आस-पास धन का नाश होता है तथा 'दास-गण' और शत्रु गण के एक साथ होने पर मित्र भी शत्रु जैसा हो जाता है।

कवित्त

जानिये उदास ते जु मित्र गन तुच्छ फल,
प्रगट उदास तें जु दास प्रभुताइये।
होइ जो उदास ते उदास तो न फलाफल,
जो उदास ही ते शत्रु तो न सुख पाइये ॥
शत्रु तें जु मित्रगन ताहि सो अफलगन,
शत्रु ते जु दास आशु बनिता, नसाइये।
शत्रु ते उदास कुल नाश होय केशौदास,
शत्रु ते जु शत्रु नाश नायक को गाइये ॥२६॥

यदि 'उदासीन गण' और 'मित्रगण' साथ हो तो तुच्छ फल समझो। 'उदासीन गण' और 'दास गण' के मेल से प्रभुता प्राप्त होती है। यदि उदासीन गण साथ-साथ हो तो फलाफल कुछ नहीं होता और जो उदासीनगण तथा 'शत्रु गण' का साथ हो ता सुख नहीं मिलता। जो 'शत्रुगण और 'मित्रगण' एक साथ हो तो विफल होते है और यदि शत्रुगण का 'दास गण' के साथ मेल हुआ तो शीघ्र ही स्त्री का नाश हो जाता है। 'केशवदास' कहते है कि 'शत्रुगण' और 'उदासीन

पृष्ठ ६३ कवित्त १४

परम प्रवीन अति कोमल कृपाल तेरे,
उरते उदित नित चित हितकारी है।
'केशौराय' कीसों अति सुन्दर उदार शुभ,
सजल सुशील विधि सूरति सुधारी है।
काहूसों न जानैं हँसि बोलि न विलोकि जानैं,
कंचुकी सहित साधु सूधी वैसवारी है।
ऐसे हौ कुचनि सकुचनि न सकति बूझि,
परहिय हरनि प्रकृति कौने पारी है।

× × ×

पृष्ठ ३८ कवित्त १०

भूषण सकल घनसार ही के घनश्याम,
कुसुम कलित केस रही छवि छाई सी।
मोतिन की लरी सिर कंठ कंठमाल हार,
बाकी रूप ज्योति जात हेरत हिराई सी।
चन्दन चढ़ाये चारु सुन्दर शरीर सब,
राखी शुभ सोभा सब बसन बसाई सी।
शारदा सी देखियत देखो जाइ केशोराय,
ठाढ़ी वह कुँवरि जुन्हाई में अनन्हाई सी ॥१०॥

गण के साथ से कुल का नाश और 'शत्रुगण' के साथ 'शत्रुगण' पड़ने पर नायक का नाश हो जाता है।

गणागण के उदाहरण।

दोहा

राधा राधारमन के, मन पठयो है साथ।
ऊधव ! ह्या तुम कौनसों, कहौ योगकी गाथ ॥३०॥
कहा कहौ तुम पाहुने, प्राणनाथ के मित्त।
फिर पीछे पछिताहुगे, ऊधौ समुझौ चित्त ॥३१॥
दोहा दुहूँ उदाहरन, आठौ आठौ पाय।
केशव गन अरु अगनके, समुझौ सबै बनाय ॥३२॥

हे उद्धव ! राधा ने अपना मन राधा-रमण (श्रीकृष्ण) के साथ भेज दिया है अब तुम यहाँ किससे योग की बात कहते हो। हे उद्धव क्या कहूँ ! तुम पाहुने हो और प्राणनाथ (श्रीकृष्ण) के मित्र हो। अपने हृदय मे विचार करो नहीं तो फिर पीछे पछताओगे। 'केशवदास' कहते हैं कि इन दोनो दोहो के आठ चरण गण और अगण के उदाहरण है; इन्हे अच्छी तरह समझ लो।

इन दोहो मे गणागण का मेल दिखलाया गया है, वह इस प्रकार है :—

(१) राधारा धारम = मगण + भगण (मित्र और दास)
(२) मनप ठयोहै = नगण + यगण (दास और मित्र)
(३) ऊद्धव ह्यांतुम = भगण + भगण (दास और दास)
(४) कहौ यो गकीगा = यगण + यगण (दास और दास)
ये शुभ गण हैं।
(५) कहाक हौ तुम = जगण + भगण (उदासीन और दास)
(६) प्राणना थकेमि = रगण + यगण (शत्रु और दास)
(७) फिरिपीछेपछि = सगण + भगण (शत्रु और दास)
(८) ऊधौस मुझौचि = तगण + यगण (उदासीन और दास)

ये अशुभ गण है।

कवित्त सख्या २८ और २९ के अनुसार पहले और दूसरे उदाहरण का फल विजय होगा क्योकि मित्र गण और दास गण साथ-साथ पडे है। तीसरे और चौथे उदाहरण मे दास गणो का मेल हुआ है अत परिणाम सर्वजीवो को वश मे करने वाला होना चाहिए। पाँचवे उदाहरण मे उदासीन और दासगणो का साथ है, इसलिये परिणाम प्रभुता प्राप्ति होगा। छठे और सातवें उदाहरण मे शत्रु और दास गण साथ-साथ आ पडे हैं इसलिए इसका परिणाम वनितानाश होना चाहिए। आठवें उदाहरण मे उदासीन और दास गणो का मेल है, अत परिणाम प्रभुता-प्राप्ति होना चाहिए।

छठे और आठवें उदाहरण मे 'मि' 'चि' ह्रस्व होते हुए भी दीर्घ माने गये है क्योकि पिंगलशास्त्र के अनुसार सयुक्त अक्षर के पहले का अक्षर दीर्घ माना जाता है। 'केशवदास' जी भी नीचे लिखे दोहे मे यही बात कहते है —

गुरु-लघुभेद वर्णन

संयोगी के आदि युत, बिंदु जु दीरघ होय।
सोई गुरु लघु और सब, कहै सयाने लोय ॥२३॥

सयाने (चतुर या बुद्धिमान) लोग कहते है कि सयुक्ताक्षर के पहले वाला अक्षर, बिंदु (अनुस्वार) युक्त तथा स्वयं दीर्घ अक्षर ही गुरु कहलाते है। इनके अतिरिक्त और सभी 'अक्षर लघु' हैं।

दीरघहू लघु कै पढ़ै, सुखहो मुख जिहि ठौर।
सोऊ लघु करि लेखिये, केशव कवि सिरमोर ॥२४॥

'केशवदास' कहते है कि हे कवि शिरोमणि! जहाँ दीर्घ अक्षर को लघु करके पढने में मुख को सुविधा होती हो, वहाँ उसे भी लघु ही समझना चाहिए।

उदाहरण

सवैया

पहिले सुखदै सबही को सखी, हरिही हितकै जुहरी मति मीठी ।
दूजे लै जोवनमूरि अक्रूर, गयो अँग अग लगाय अँगीठी ॥
अबधौं केहिकारण ऊधव ये, उठिधाये लै केशव झूँठी बसीठी ।
माथुर लोगनिके सँगकी यह बैठक तोहि अजौ न उबीठी ॥३५॥

हे सखी । पहले तो हरि (श्री कृष्ण) ने सबको सुख दिया और प्रेम करके सुबुद्धि हर ली । फिर अक्रूर आकर उन जीवनमूरि (श्री कृष्ण) को ले गये और इस तरह मानो उन्होने अग अग मे अगीठी लगा दी (जलन उत्पन्न कर दी दुख दे दिया) । 'केशवदास' (सखी की ओर से) कहते हैं कि अब यह ऊधव झूठा सदेश लेकर क्यो आये हैं ? मथुरा के लोगो के साथ का उठना-बैठना तुझे अब भी अरुचिकर नहीं हुआ ?

(इस सवैया के पहले चरण मे 'को' को दीर्घ लिखा गया है परन्तु उसका उच्चारण ह्रस्व की तरह होता है । इसी तरह दूसरे चरण मे 'जे' और, 'लै' अक्षर ह्रस्व की तरह पढे जाते है । तीसरे चरण मे ये' और 'लै' का उच्चारण भी ह्रस्व ही होता है ।)

संयोगी के आदि युत, कबहुंक बरन विचारु ।
केशवदास प्रकासबल, लघुकरि ताहि निहारु ॥३६॥

केशवदास जी कहते है कि सयुक्तअक्षर के आदि के अक्षर को भी कभी कभी अपनी बुद्धि के बल से 'लघु' ही समझना चाहिए । अर्थात् कभी-कभी सयुक्ताक्षर के पहले का अक्षर भी लघु माना जा सकता है)

उदाहरण

दोहा

अमल जुन्हाई चन्दमुखि, ठाढ़ी भई अन्हाय ।
सौतिनिके मुखकमल ज्यो, देखि गये कुम्हिलाय ॥३७॥

चन्द्रमुखी जब स्नान करके खडी हुई तब उसको चन्द्रमुख की निर्मल चाँदनी को देखकर सपत्नियो के मुखकमल मुर्झा गये ।

[इस दोहे मे 'जुन्हाई' तथा 'अन्हाय' शब्दो के 'जु' तथा 'अ' अक्षर सयुक्ताक्षर के पहले होने के कारण दीर्घ माने जाने चाहिए परन्तु यहाँ वे 'लघु' ही हैं ।]

(२) हीनरस दोष

दोहा

बरनत केशवदास रस, जहाँ बिरस ह्वै जाय ।
ता कवित्तको हीनरस, कहत सकल कविराय ।।३८।।

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ किसी रस का वर्णन करते-करते विरस हो जाय अर्थात् उसका पूर्ण परिपाक न हो तो उस कवित्त को सभी कविराज 'हीनरस' कहते हैं ।

उदाहरण

सवैया

दै दधि दीन्हों उधार है केशव, दान कहा जब मोललै खैहै ।
दीन्हे बिना तौ गई जु गई, न गई न गई घरही फिरि जैहैं ।।
गो हित बैर कियो, कबहो हित, बैर किये बरू नीके ह्वै रैहैं ।
बैरकै गोरस पेचहुगी अहो, बेचो न बेचो तो ढारि न दैहै ।।३९।।

(केशवदास जी एक गोपी और श्री कृष्ण का उत्तर-प्रत्युत्तर वर्णन करते हुए लिखते है कि) श्रीकृष्ण ने जब कहा कि 'दही दो'; तब गोपी ने उत्तर दिया कि मै तो उधार दे चुकी (अर्थात् उधार न दूँगी, मोल लो) । तब श्री कृष्ण बोले कि हम दान लेने वाले कैसे, जो मोल लेकर खायें । और 'दान दिये बिना तो तुम जा चुकी ।' गोपी ने उत्तर दिया कि—'बिना दान दिए मैं जाऊँ या न जाऊँ, कोई चिन्ता नहीं; यदि न गई तो घर ही को लौट जाऊँगी ।' तब श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया कि 'तुमने मानो इसके लिए बैर किया ।' वह बोली मेरा तुम्हारा प्रेम ही कब था ? मै तो तुमसे बैर करके ही सुखी

रहूँगी' इस पर श्रीकृष्ण बोले कि 'तो बैर करके गोरस बेचोगी ?' तब गोपी ने उत्तर दिया कि 'यदि न बेच पाऊँगी तो फेंक न दूँगी। अर्थात् न बेच सकूँगी तो अपने काम मे लाऊँगी, तुम्हे न दूँगी। [इस उदाहरण मे श्रृंगार रस का आभास होने पर भी उपूर्ण परिपाक नहीं हुआ है। केवल मनोरजक वार्तालाप मात्र है। अनुभाव तथा सचारी भाव कहीं दृष्टिगोचर नहीं होते, अतः इसमे हीन-रस दोष है।]

(३) यति-भग दोष

और चरण के बरण जहँ, और चरण सो लीन।
सो यतिभग कवित्त कहि, केशवदास प्रवीन ॥४०॥

जहाँ किसी एक चरण के अक्षर कटकर दूसरे चरण मे चले जायँ वहाँ 'केशवदास' इसे यतिभग पूर्ण कवित्त कहते है अथवा 'केशवदास' कहते है कि हे प्रवीनराय ! यह यति-भग पूर्ण कवित्त कहलाता है।

उदाहरण

दोहा

हर हरि केशव मदन मो, हन घनश्याम सुजान।
यों ब्रजवासी द्वारका, नाथ रटत दिनमान ॥४१॥

ब्रजवासी गण दिन-रात 'हर-हरि' केशव', 'मदनमोहन', 'घनश्याम', 'सुजान' और 'द्वारिकानाथ' रटा करते हैं। (इसमे 'मदनमोहन, का 'मदनमो' एक ओर आ गया है और 'हन' दूसरी ओर चला गया है। इसी तरह 'द्वारिकानाथ' के भी दो भाग हो गये है। 'द्वारका' एक हो गया है ओर 'नाथ' दूसरी ओर। अत यति-भग दोष है)

(४) व्यर्थ दोष

एक कवित्त प्रबन्ध मे, अर्थ विरोध जु होय।
पूरब पर अनमिल सदा, व्यर्थ कहै सब कोय ॥४२॥

जब एक ही कवित्त मे अर्थ विरोध हो और पूर्वा पर अनमिल हो अर्थात् पूर्वापर ठीक-ठीक बैठता न हो, तब सब लाग उसे व्यर्थ दोष कहते है।

उदाहरण
मरहट्टा छन्द

सब शत्रु सँहारहु जीव न मारहु, सजि योधा उमराव ।
बहुबसुमतिलीजै मो मति, कीजै लीजै अपनो दाँव ॥
कोउ न रिपु तेरो सब जब हेरो तुम कहियतु अतिसाधु ।
कछु देहु मँगावहु भूख भगावहु हौ पुनि धनी अगाधु ॥४३॥

समस्त योधा उमराव सज कर शत्रुओ को मारो, तथा जीव न मारो, मेरी राय मानो, बहुतो की सम्मति लो । (शत्रु से अपना दाँव लो । तुम्हारा कोई बैरी नहीं है । सब ससार देख डाला—तुम बडे साधु कहलाते हो । कुछ मुझे मँगवा दो मेरी भूख दूर कर दो, क्योकि तुम अगाध धनी हो ।

[इस छन्द मे सभी बाते परस्पर विरोधी है । पहले कहा गया है कि 'शत्रु सहारो फिर कहा गया है कि 'जीव न मारो' । ये दोनो परस्पर विरोधो है । इसी तरह 'लीज अपनो दाँव' कहने के बाद 'कोउ न रिपु तेरो' कहना विरोध है । 'अगाध धनी से 'कुछ माँगना' भी विरोध है, उससे हुत माँगना चाहिए । अत व्यर्थ दोष है ।]

अपार्थ दोष

अर्थ न जाको समुझिये, ताहि अपारथ जानु ।
मतवारो उनमत्त शिशु, कैसे वचन बखानु ॥४४॥

जिसका अर्थ न समझ सको, उसे 'अपार्थ दोष' जानो और उसे मतवाले, उनमत्त और बच्चो जैसी बातें समझो ।

उदाहरण
दोहा

पियेलत नर सिंध वहै, है छति सब्बर देह ।
ऐरावत हरिभावतो, देख्यो गर्जत मेह ॥४५॥

इस दोहे की सभी बातें अटपटी है । अर्थ की सगति कहीं भी नहीं मिलती, अत. इसमे 'अपार्थ' दोष है ।

(६) क्रमहीन दोष

क्रमही गुणनि बखानिके, गुणी गुनै क्रम हीन ।
सो कहिये क्रमहीन जग, केशव कहत प्रवीन ॥४६॥

जब कुछ गुणो का क्रम से वर्णन करके फिर गुणियो का नाम गिनाते समय क्रम भग हो जाय, तब उसे 'क्रमहीन' दोष कहते हैं ।

उदाहरण

तोटक छन्द

जगकी रचना कहु कौने करी केहि राखन की जिय पैज धरी ।
अति कोपिके कौन सँहार करै हरजू हरिजू बिधि बुद्धि ररै ॥४६॥

ससार को रचना किसने की ? किसने ससार की रक्षा करने की प्रतिज्ञा की ? अत्यन्त क्रुद्ध होकर कौन सहार करता है ? बतलाओ । उत्तर मे, बुद्धि हर, हरि और ब्रह्मा का नाम रटती है ।

[इस छन्द मे पहले तो ब्रह्मा, विष्णु और महेश के गुणो का क्रम से वर्णन किया गया है, परन्तु बाद मे, उनके नाम गिनाते समय क्रम मे उलट फेर कर दिया गया है अत 'क्रमहीन' दोष है । वास्तव मे विधिजू, हरिजू, हरजू होना चाहिए । यही क्रम ऊपर गिनाए हुए गुणो के क्रम से मिलता है ।]

(७) कर्णकटु प्रयोग

दोहा

कहत न नीको लागई, सो कहिये कटुकर्ण ।
केशव दास कवित्त मे, भूलि न ताको वर्ण ॥४८॥

जो कहने सुनने मे अच्छा न लगे उसे 'कर्णकटु' दोष कहते हैं । 'केशवदास' कहते है कि इस दोष को भूल कर भी कवित्त मे न लाओ ।

उदाहरण

दोहा

वारन बन्यो बनाव तन, सुवरण बली विशाल ।
चढ़िये राज मँगाइकै, मानहुँ राजत काल ॥४९॥

हे राजन् ! जिस हाथी के शरीर की सुन्दर सजावट है, जो सुन्दर सुन्दर रग वाला, बलवान तथा बडा है और जो मानो काल के समान सुशोभित है, उसे मगाकर सवार हूजिए । (इस दोहे मे 'मानहुँराजत काल' वाक्य सुनने मे अप्रिय लगता है अत कर्णकटु दोष है ।)

(८) पुनरुक्ति दोष

दोहा

एक बार कहिये कछू, बहुरि जो कहिये सोइ ।
अर्थ हाय कै शब्द अब, सुनि पुनरुक्ति सो होइ ॥५०॥

जब एक बार कहने के बाद फिर उसी बात को कहा जाता है, तब 'पुनरुक्ति' दोष होता है, वह चाहे शब्द मे हो या अर्थ में ।

उदाहरण

सोरठा

मघवा घन आरूढ, इन्द्र आजु अति सोहिये ।
व्रजपर कोप्यौ मूढ, मेघ दशौ दिशि देखिये ॥५१॥

मघवा इन्द्र घन (बादलो) पर सवार है । इन्द्र आज बहुत अच्छा लगता है । वह मूढ व्रजपर कुपित हुआ है । दशो दिशाओ मे मेघ दिखलाई पडते हैं । [इस दोहे मे 'मघवा', 'इन्द्र' तथा 'घन' और 'मेघ' शब्दों मे अर्थ की पुनरुक्ति है ।]

दोष निवारण

दोहा

दोष नही पुनरुक्ति को, एक कहत कविराज ।
छांडि अर्थ पुनरुक्ति को, शब्द कहौ यहि साज ॥५२॥

एक कविराज कहते है कि यदि अर्थ का पुनरुक्ति को छोड कर शब्द की पुनरुक्ति करो तो कोई दोष नहीं होता ।

उदाहरण

लोचन पैने शरनते, है कछु तोहि सुद्धि ।
तन बेध्यो, मन धिकै, बेधैधी मनकी बुद्धि ॥५३॥

मुझे कुछ ध्यान भी है। उसके नेत्र बाणो से भी बढकर तीक्ष्ण है। उन्होने शरीर बेध डाला, मन बेध डाला और मन की बुद्धि विवेकशक्ति भी बेध डाली।

(इसमे 'बेधना' क्रिया तीन बार भिन्न-भिन्न सज्ञाओ के साथ प्रयुक्त हुई हैं, अत पुनरुक्ति दोष नहीं है।

देश—विरोध दोष

मलयानिल मन हरत हठ, सुखद नर्मदा कूल।
सुबन सघन घनसार मय, तरुवर तरल सुफूल ॥५४॥

नर्मदा का किनारा सुखदायी है। वहाँ मलयानिल हठपूर्वक मन को हर लेता है। वहीं सुन्दर घने कपूर के बन तथा सुन्दर फूलोवाले वृक्ष हैं। (इसमे नर्मदा नदी के किनारे मलयानिल और कपूर का वर्णन करना देश-विरुद्ध है।)

मरुसुदेश मोहन महा, देखौ सकल सभाग।
अमलकमलकुलकलितजहँ, पूरण सलिल तड़ाग ॥५५॥

सभी भाग्यशालियो देखो! मरुदेश बडा ही सुन्दर और मन को हरनेवाला है, जहाँ पानी से भरे हुए तालाबो मे निर्मल कमल खिले हुए है। (इसमे भी मरुभूमि के जल से भरे हुए तालाबो मे कमलो का वर्णन करना देश विरुद्ध है क्योकि मरुभूमि मे तालाबो का अभाव होता है।)

काल विरोधी दोष

प्रफुलित नव नीरज रजनि, बासर कुमुद विशाल।
कोकिल शरद मयूर मधु, वर्षा मुदित मराल ॥५६॥

रात मे नवीन कमल और दिन मे विशाल कुमुद पुष्प खिले है। शरद ऋतु मे कोयल, वसन्त मे मोर और वर्षा में हँस प्रसन्न होते है। (इसमे रात को कमल, दिन मे कुमुदिनी, शरद ऋतु मे कोयल, बसन्त में मोर और वर्षा मे हंसो का वर्णन करना काल विरुद्ध है।)

लोक विरोधी दोष

स्थायी वीर सिंगार के, करुणा घृणा प्रमान।
तारा अरु मन्दोदरी, कहत सतीन समान ॥५७॥

वीर और शृंगार के स्थायी के साथ करुणा तथा घृणा का वर्णन करना और तारा तथा मन्दोदरी को सती स्त्रियो के समान कहना लोक विरुद्ध है।

न्याय तथा आगमविरोधी दोष।

पूजौ तीनौ वर्ण जग, करि विप्रन सों भेद।
पुनि लीबो उपवीत हम, पढि लीजै सब वेद ॥५८॥

ब्राह्मणो को छोडकर तीनो वर्णो की पूजा करो। हम पहले वेद पढले तब यज्ञोपवीत लेंगे। [इन दोनो वाक्यो मे पहले वाक्य मे नीति-विरोध है और दूसरे मे आगम या शास्त्र-विरोध है।]

यहि विधि औरौ जानियहु, कविकुल सकल विरोध।
केशव कहे कछूक अब, मूढन के अविरोध ॥५९॥

हे कवि लोगो! इस तरह विरोधो के और भी बहुत से भेद समझ लो। 'केशवदास' कहते है कि मैने उनमे से कुछ ही ऐसे भेदो का वर्णन किया है जिनका मूढ भी विरोध न करेंगे।

केशव नीरस विरस अरु, दु:संधान विधानु।
पातर दुष्टादिकन को, 'रसिक प्रिया' ते जानु ॥६०॥

'केशवदास' कहते है कि 'नीरस', 'विरस' 'दु सन्धान' और 'पात्र दुष्ट' आदि दोषो को 'रसिक प्रिया' ग्रन्थ से समझ लो।

चौथा-प्रभाव

कवि-भेद वर्णन

दोहा

केशव तीनहु लोक में, त्रिविध कविन के राय।
मति पनि तीन प्रकार की, बरनत सब सुख पाय ॥१॥
उत्तम, मध्यम, अधम कवि, उत्तम हरि-रस लीन।
मध्यम मानत मानुषनि, दाषनि अधम प्रवीन ॥२॥

'केशवदास' कहते है कि तीनो लोको मे तीन प्रकार के कवि होते है। साथ ही सब लोग बुद्धि को भी तीन प्रकार की बतलाते है। वे तीनो प्रकार के कवि (१) उत्तम (२) मध्यम और (३) अधम कहलाते है। इनमे से जो उत्तम कवि होते हैं वे परमात्मा के यश मे लीन रहते है अर्थात् ईश्वर के गुणो का गान अपनी कविता मे किया करते है। जो मध्यम होते हैं, वे मनुष्यो के चरित्रो का वर्णन करते है और जो अधम होते हैं वे दूसरो के दोषो का ही बखान करते रहते है।

उदाहरण

सवैया

जो अति उत्तम ते पुरुषारथ, जे परमारथ के पथ सोहैं।
केशवदास अनुत्तम ते नर सतत स्वारथ संयुत जो हैं॥
स्वारथ हू परमारथ भोगनि मध्यम लोगनि के मन मोहैं।
भारत पारथ-मीत कहौ, परमारथ स्वारथहीन ते को है ॥३॥

'केशवदास' कहते है कि जो कवि परमार्थ के पथ पर चलते है, वे अत्युत्तम अर्थात् प्रथम श्रेणी के है। जो सदा स्वार्थ मे लीन रहते है वे

अन्त्तम अथवा द्वितीय श्रेणी के हैं। (अर्थात् केवल धन-प्राप्ति के लिए कविता करते है)। जो 'मध्यम' या तृतीय श्रेणी के कवि है, उनकी कविता से न तो स्वार्थ ही बनता है और न परमार्थ की प्राप्ति होती है। इस श्रेणी के कवियो के सम्बन्ध मे ही महाभारत मे श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा है कि हे अर्जुन! जो परमार्थ और स्वार्थ से रहित कविता करते है, उन्हे क्या कहे।'

कवि रीति वर्णन

दोहा

साँची बात न बरनही, झूंठी बरननि बानि।
एकनि बरनै नियम कै, कवि मत त्रिविध बखानि ॥४॥

कवियो के वर्णन करने की बानि होती है कि वे (१) कभी सच्ची बात को झूठ और (२) कभी झूठी बात को सच्ची वर्णन करते हैं। एक तीसरे प्रकार के कवि ऐसे भी होते है जो सब बातो का वर्णन नियमानुकूल करते है। इस तरह कवियो के वर्णन के तीन मत (शैली) बतलाये गये है।

१—सत्य को मिथ्या कहना

दोहा

'केशवदास' प्रकास बहु, चंदन के फल फूल।
कृष्णपक्ष की जोन्ह ज्यों, शुक्ल पक्ष तम तूल ॥५॥

'केशवदास' कहते है कि चन्दन के वृक्ष मे प्रत्यक्ष रूप से फल और फूल दोनो रहते है। (परन्तु कविलोग केवल फूलो का वर्णन करते हैं।) इसी प्रकार कृष्ण और शुक्ल पक्ष मे चाँदनी और अन्धकार बराबर मात्रा मे रहते है। (परन्तु कवि केवल शुक्ल पक्ष का ही वर्णन करते हैं।)

झूठ को सत्य कहना

जहँ जहँ बरणतरिधुमव, तहँ तहँ रत्ननि लेखि।
सूक्षम सरवरहू कहै, केशव हंस विशेखि ॥६॥

'केशवदास' कहते हैं कि कवि लोग जहाँ-जहा समुद्र का वर्णन करते हैं, वहाँ-वहाँ रत्नो का भी उल्लेख कर देते हैं (यद्यपि प्रत्येक समुद्र मे रत्न नहीं होते ।) इसी प्रकार छोटे-छोटे तालाबो मे भी हंसो का वर्णन किया करते है (यद्यपि वे केवल मानसरोवर मे रहते है ।)

दोहा

लेन कहैं भरि मूठि तम, सूजनि सिगनि बनाय ।
अंजुलि भरि पीपन कहै, चंद्र चंद्रिका पाय ॥७॥

(रावण का गुप्तचर बन्दरो की सेना को देखकर आने के बाद उससे कहता है कि उस सेना मे ऐसे-ऐसे बन्दर है कि जो) अधकार को सुई से सीकर मट्ठी मे भर लेने की बात कहते है और चन्द्रमा की चांदनी को पा जाने पर अजुलि मे भर कर पीने की चर्चा किया करते हैं । (इसमे सभी बातें मिथ्या है परन्तु सत्य की तरह वर्णन कर दी गई है ।)

दोहा

सबके कहत उदाहरण, बाढ़ै ग्रन्थ अपार ।
कछू कछू ताते कह्, कविकुल चतुर विचार ॥८॥

इस प्रकार सब बातो का उदाहरण देने पर ग्रन्थ बहुत बढ जायगा । इसलिए कुछ थोडे उदाहरण दे दिए हैं । चतुर कवि लोग (उन्हीं के आधार पर) स्वय विचार कर लेंगे ।

तम का झूठ वर्णन

कवित्त

कंटक न अटकै न फाटत चरण चपि,
बात ते न जात उड़ि अंग न उघारिये ।
नेकहू न भीजत मृणालधार बरसात,
कीच न रचत रच चित्त में बिचारिये ।
'केशौदास' सावकाश परम प्रकास न,
उसारिये पसारिये न पिय पै विसारिये ।
चलिये जू ओढि पट तमही को गाढ़ो तम,
पातरो पिछौरा सेत पाट को उतारिये ॥९॥

(कोई दूती अपनी नायिका से कहती है कि) स्वेत रेशमी पतली चद्दर को उतार कर अधकार की घनी चादर को ही ओढ कर चलिए। क्योकि यह अधकार की चादर न तो कांटो मे उलझेगी और न पैर के नीचे दबने पर फटेगी ही। यह न मूसलाधार पानी मे भीगेगी और न कीचड मे तनिक भी सनेगी, इसे अच्छी तरह सोच लीजिए। ' केशव दास, दूती की ओर से कहते है कि। इस चादर मे बडी सुविधा है। इसमे प्रकाश नहीं है क्योकि सफेद चादर की तरह दूर से चमकती नहीं और इसे चाहे जितना फैलाइए तथा इनमे प्रियतम के पास भूल आने का भय भी नहीं है।

चाँदनी के सम्बन्ध मे झूठ वर्णन।

कवित्त

भूपण सकल घनसार ही के घनश्याम,
　　कुसुम कलित केस रही छवि छाई सी।
मोतिन की लरी सिर कठ कठमाल हार,
　　बाकी रूप ज्योति जात हेरत हिराई सी॥
चन्दन चढाये चारु सुन्दर शरीर सब,
　　राखी शुभ सोभा सब बसन बसाई सी।
शारदा सी देखियत देखो जाइ केशोराय,
　　ठाढी वह कुँवरि जुन्हाई में अन्हाई सी॥१०॥

हे घनश्याम! वह कपूर ही के सब गहने पहने है और बालो को सफेद फूलो से सजाए हुए है जिससे, शोभा फैली हुई है। शिर पर मोतियो की लडी तथा गले मे कठमाला है, जो उसके रूप मे खोसे गए है और वह उन्हे खोजती सी जान पडती है। वह पूरे शरीर पर चन्दन लगाए हुए है जिसने उसकी सुन्दर शोभा भी रखी है और वस्त्र भी महका दिये है। (केशवदास किसी दूती की ओर से कहते है कि) वह चाँदनी मे नहाई हुई सी नायिका शारदा सी दिखलाई पडती है, उसे जाकर देखिए।

कविनियम वर्णन

दोहा

वर्णत चंदन मलयही, हिमिगिरिही भुज पात।
वर्णत देवनि चरणत, शिरते मानुष गात ॥११॥

कवि लोग चन्दन का वर्णन मलयपर्वत पर ही करते है और भोजपत्र को हिमालय पर ही बतलाते है। वे देवताओ के शरीर का वर्णन करते समय चरणो से तथा मनुष्यो के रूप का वर्णन करते समय शिर से आरम्भ करते है।

दोहा

अति लज्जायुत कुलवधू, गणिकागण निर्लज्ज।
कुलटाको कोविद कहहि अग अलज्ज सलज्ज ॥१२॥

वे (कवि लोग) कुल बधू को लज्जा युक्त, गणिकाओ को निर्लज्ज तथा कुलटा को (प्रसगानुसार) निर्लज्ज और सलज्ज दोनो प्रकार से वर्णन करते है।

वर्णत नारी नरनते, लाज चौगुनी चित्त।
भूख दुगुन साहस छगुन, काम अठगुनो मित्त ॥१३॥

वे (कवि) स्त्री मे पुरुष से चौगुनी लज्जा, दूनी भूख, साहस छः गुना और काम अठगुना वर्णन किया करते हे।

दोहा

कोकिल को कल बोलिवो, बरणत है मधुमास।
बरषाही हरषित कहहि, केकी केशवदास ॥१४॥

केशवदास कहते है कि वे (कवि) लोग व सन्त मे कोयल के बोलने का वर्णन करते है और वर्षा मे ही मोर का हर्षित होना बतलाते है।

दनुजनिसोंदितिसुतनिसों, असुरै कहत बखानि।
ईशशीश शशिवृद्ध को बरणत बालकबानि ॥१५॥

(कोई दूती अपनी नायिका से कहती है कि) स्वेत रेशमी पतली चद्दर को उतार कर अधकार की घनी चादर को ही ओढ कर चलिए। क्योकि यह अधकार की चादर न तो काँटो मे उलझेगी और न पैर के नीचे दबने पर फटेगी ही। यह न मूसलाधार पानी मे भीगेगी और न कीचड मे तनिक भी सनेगी, इसे अच्छी तरह सोच लीजिए। 'केशव दास, दूती की ओर से कहते है कि इस चादर मे बडी सुविधा है। इसमे प्रकाश नहीं है क्योकि सफेद चादर की तरह दूर से चमकती नहीं और इसे चाहे जितना फेलाइए तथा इसमे प्रियतम के पास भूल आने का भय भी नहीं है।

चाँदनी के सम्बन्ध मे झूठ वर्णन।

कवित्त

भूषण सकल घनसार ही के घनश्याम,
 कुसुम कलित केस रही छवि छाई सी।
मोतिन की लरी सिर कठ कंठमाल हार,
 बाकी रूप ज्योति जात हेरत हिराई सी॥
चन्दन चढाये चारु सुन्दर शरीर सब,
 राखी शुभ सोभा सब बसन बसाई सी।
शारदा सी देखियत देखो जाइ केशोराय,
 ठाढी वह कुँवरि जुन्हाई मे अन्हाई सी॥१०॥

हे घनश्याम! वह कपूर ही के सब गहने पहने है और बालो को सफेद फूलो से सजाए हुए है जिससे, शोभा फैली हुई है। शिर पर मोतियो की लडी तथा गले मे कठमाला है, जो उसके रूप मे खोसे गए है और वह उन्हे खोजती सी जान पडती है। वह पूरे शरीर पर चन्दन लगाए हुए है जिसने उसकी सुन्दर शोभा भी रखी है और वस्त्र भी महका दिये हैं। (केशवदास किसी दूती की ओर से कहते है कि) वह चाँदनी मे नहाई हुई सी नायिका शारदा सी दिखलाई पडती है, उसे जाकर देखिए।

कविनियम वर्णन

दोहा

वर्णत चंदन मलयही, हिमिगिरिही भुज पात।
वर्णत देवनि चरणत, शिरते मानुष गात ॥११॥

कवि लोग चन्दन का वर्णन मलयपर्वत पर ही करते है और भोजपत्र को हिमालय पर ही बतलाते है। वे देवताओ के शरीर का वर्णन करते समय चरणो से तथा मनुष्यो के रूप का वर्णन करते समय शिर से आरम्भ करते है।

दोहा

अति लज्जायुत कुलवधू, गणिकागण निर्लज्ज।
कुलटाको कोविद कहहि अग अलज्ज सलज्ज ॥१२॥

वे (कवि लोग) कुल बधू को लज्जा युक्त, गणिकाओ को निर्लज्ज तथा कुलटा को (प्रसगानुसार) निर्लज्ज और सलज्ज दोनो प्रकार से वर्णन करते है।

वर्णत नारी नरनते, लाज चौगुनी चित्त।
भूख दुगुन साहस छगुन, काम अठगुनो मित्त ॥१३॥

वे (कवि) स्त्री मे पुरुष से चौगुनी लज्जा, दूनी भूख, साहस छः गुना और काम अठगुना वर्णन किया करते हे।

दोहा

कोकिल को कल बोलिबो, बरणत है मधुमास।
बरषाही हरषित कहहि, केकी केशवदास ॥१४॥

केशवदास कहते है कि वे (कवि) लोग व सन्त मे कोयल के बोलने का वर्णन करते है और वर्षा मे ही मोर का हर्षित होना बतलाते है।

दनुजनिसोंदितिसुतनिसो, असुरै कहत बखानि।
ईशशीश शशिवृद्ध को बरणत बालकबानि ॥१५॥

वे (कवि) लोग दिति के पुत्रो को दनुज और असुर कहकर वर्णन करते है और महादेव जी के सिर पर वृद्ध (बहुत दिनो के पुराने चन्द्रमा को बालक ही कहते हैं। (शिव जी के मस्तक का चन्द्रमा 'बाल-शशि' ही कहा जाता है।)

दोहा

सहज सिगाररति सुन्दरी, यदपि सिगार अपार।
तदपि बखानत सकलकवि, सोरहई सिगार ॥१६॥

यद्यपि सुन्दरी स्त्री सहज ही मे अनेक शृगार करती है परन्तु सभी कवि केवल सोलह शृगारो का ही वर्णन करते है।

सोलह शृगार

कवित्त

प्रथम सकल सुचि, मज्जन, अमल बास,
जावक, सुदेश केशपासनि सुधारिबो।
अगराग, भूषण विविध मुख बास राग,
कज्जल कलित लोल लोचन निहारिबो ॥
बोलनि, हँसनि चित चातुरीचलनि चारु,
पल पल प्रति पतिव्रत परि पारिबो।
'केशौदास' सबिलास करहु कुँवरि राधे,
यह विधि सोरह सिंगारन सिगारिबो ॥१७॥

पहला सब प्रकार की शुचि क्रियाएँ (दतौन, उबटन आदि), दूसरा मज्जन (स्नान), तीसरा अमलबास (निर्मल वस्त्रो का धारण करना), चौथा केश पाश सुधारना (चोटी गूँथना), पाँचवें से लेकर दसवें तक अगराग (जिसमे माँग मे सिंदूर लगाना, मस्तक पर खौर देना, गालो पर तिल बनाना, अग मे केशर लगाना और हाथो मे मेहदी लगाना सम्मलित हैं) ग्यारहवाँ और बारहवाँ सोने और फूलो के गहने पहनना, तेरहवाँ मुख बास (पान-इलायची आदि खाना), चौदहवाँ और पन्द्रहवाँ मुखराग (मिस्सी लगाना और ओठो को रगना) और सोलहवाँ सुन्दर

काजल लगाकर चचल नेत्रो से देखना। इन सोलह शृङ्गारो को करके बोल, हसी और सुन्दर चाल से प्रतिक्षण पतिव्रत का पालन करना चाहिए। 'केशवदास' कहते है कि - हे राधे! इस तरह सोलह शृंगारो से अपने को सजाओ।'

दोहा

कुलटनि को पति प्रेमबस, बारबधुनि धन जानु।
जाहि दई पितु मातु सो, कुलजा को पति मानु ॥१८॥

कुलटा स्त्री का पति प्रेम और गणिकाओ का पति धन समझो और जिसे माता पिता दे दे उसे कुलवती स्त्री का पति मानो। (तात्पर्य यह है कि कुलटा स्त्री जिसे प्रेम करती है, उसे अपना पति मान लेती है, वेश्याएँ धन देनेवाले को पति समझती है और कुलवती स्त्री का वही पति होता है जिसे उसके माता पिता विवाह करके दे देते हैं।)

महापुरुष को प्रगट ही, वरणत बृषभ समान।
दीप, थभ, गिरि गज, कलश, सागर, सिह, प्रमान ॥१६॥

महापुरुष को वृषभ, दीपक, स्तम्भ, गिरि, जग, कलश, सागर और सिह के समान वर्णन करते है।

उदाहरण

कवित्त

गुण मणि आगर अरु धीरज को सागरु,
उजागर धवल धरि धर्मधुर धाये जू।
खल तरु तोरिबे को, राजै गजराज सम,
अरि गज राजन को सिह सम गाये जू॥
बामिन को बामदेव, कामिनि को कामदेव,
रण जय थभ राम देव मन भाये जू।
काशी कुल कलश, सुबृद्ध जबू दीप दीप,
केशोदास कल्पतरु इन्द्रजीत आये जू॥२०॥

'केशवदास' कहते हैं कि गुणरूपी मणियो की खान, धैर्य के सागर यशस्वी, धर्मात्मा, खलरूपी वृक्ष को तोडने के लिए हाथी स्वरूप, शत्रु-

रूपी गज के लिए सिंह के समान, विरोधियो के लिए श्री शकर जैसे, स्त्रियो के लिए कामदेव स्वरूप, रण मे विजय-स्तम्भ श्रीराम के समान, काशी-कुल-कलश, जबू द्वीप (भारतवर्ष) के दीपक स्वरूप कल्पवृक्ष समान इन्द्रजीत पधारे हैं।

दोहा

बृषभ कध स्वर मेघसम, भुजधुज अहि परमान।
उरसम शिलाकपाट अँग, और तियानि समान ॥२१॥

पुरुषो के कधे वृषभ के समान, उनका स्वर बादलो जैसा, भुजाएँ ध्वजा और साँप जैसी और उर शिला या कपाट तुल्य वर्णन किया जाता है। उनके अन्य अँगो का वर्णन स्त्रियो के अगो के समान ही किया जाता है।

उदाहरण

कवित्त

मेघ ज्यों गभीर वाणी, सुनत सखा शिखीन,
सुख, अरि हृदय जवासे ज्यों जरत है।
जाके भुजदड भुवलोक के अभय ध्वज,
देखि देखि दुर्जन भुजग ज्यों डरत है।
तोरिबे को गढ़तरु होत है सिला सरूप,
राखिबे को द्वारन किवार ज्यों अरत है।
भूतल को इन्द्र इन्द्रजीत राजै युग युग,
केशौदास जाके राज, राज सो करत है ॥२२॥

जिनकी बादलो जैसी गम्भीर वाणी को सुनते ही मित्ररूपी मोर सुखी होते है और बैरियो का हृदय जवासे के समान जल जाता है। जिसके भुजदड इस लोक की अभय ध्वजाएँ जैसी है। जिनकी सर्प जैसी भुजाएँ देख देख कर दुष्ट लोग डरते है। जिनकी भुजाएँ गढ रूपी वृक्षो को तोडने के लिए शिला समान है और दरवाजो की रक्षा के लिए किवाडो जैसी अड जाती है वे पृथ्वी के इन्द्र स्वरूप इन्द्रजीत सिंह युग-युग राज्य करते रहे, जिनके राज्य मे केशवदास राज्य-सा करते है, अर्थात् राजा की तरह रहते है।

पांचवाँ-प्रभाव

काव्यालङ्कार

दोहा

यदपि सुजाति सुलच्छणी, सुवरनसरस सुवृत्त।
भूषण बिन न विराजई, कविता वनिता मित्त ॥१॥

हे मित्र! कविता यद्यपि सुजाति (उच्चकोटि की), सुलक्षण (अच्छेलक्षणो वाली) सुवरनसरस (अच्छे रसीले अक्षरो से युक्त) और (सुवृत्त अच्छे छन्दो वाली) हो, तो भी बिना भूषण (अलकार) के अच्छी नहीं लगती। इसी तरह से स्त्री भी सुजाति (अच्छे वश की) सुलक्षणी (अच्छे लक्षणो वाली) सुवरनसरस अच्छे रग की या गौरवर्ण तथा रसीली) और सुवृत्त (अच्छा बोलने वाली) हो, तो भी बिना भूषण या (गहनो) के अच्छी नहीं लगती।

कविन कहे कवितानिके, अलङ्कार द्वै रूप।
एक कहे साधारणहिं, एक विशिष्ट स्वरूप ॥२॥

कवियो ने काव्यालङ्कारो के दो रूप वर्णन किये है। एक को साधारण कहते है और दूसरे को विशिष्ट।

सामान्य

सामान्यालङ्कार को, चारि प्रकार प्रकास।
वर्ण, वर्ण्य भू-राज श्री, भूषण केशवदास ॥३॥

'केशवदास' कहते हैं कि सामान्यलङ्कार के चार प्रकार हैं। (१) वर्ण (२) वर्ण्य (३) भूमि-श्री (४) राज्य-श्री।

(१) वर्णालङ्कार

श्वेत, पीत, कारे, अरुण, धूम्र, सुनीले, वर्ण।
मिश्रित, केशवदास कहि, सात भाँति शुभ कर्ण ॥४॥

'केशवदास' कहते है कि कविता मे श्वेत पीला, काला लाल, धूम्र नीला और मिश्रित ये सातरग ही शुभकरण (मगलकारी) माने जाते है।

श्वेत वर्णन

कीरति, हरिहय, शरदघन, जोन्ह, जरा, मदार।
हरि, हर, हरगिरि, सूर, शशि, सुधासौध घनसार ॥५॥

कीर्त्ति, इन्द्र, शरदघन, चादनी, बुढापा, कल्पवृक्ष, हरि (श्री विष्णु) हर (श्री महादेव), कैलाश पर्वत, सूर्य, चन्द्रमा, चूना और कपूर।

बल, बक, हीरा, केवरो, कौड़ा करका कांस।
कुंद केचुली कमल, हिमि, सिकता भसम कपास ॥६॥

श्री बलदेव जी, बगुला, हीरा, केवडा, कौड़ी, ओला, कास, कुद, केचुली, कमल, बर्फ, बालू, भस्म और कपास।

खाँड़, हाड, निर्झर चॅवर, चदन, हस, मुरार।
छत्र, सत्ययुग, दूध, दधि, शख, सिह, उड़मार ॥७॥

खाड (चीनी) हाड, झरना, चँवर, चन्दन, हस कमल की जड, छत्र, सत्ययुग, दूध, दही, शख, सिह और तारे।

शेष, सुकृति, शुचि, सत्त्वगुण, संतन के मन, हास।
सीप, चून, भोडर, फटिक, खटिका, फेन प्रकास ॥८॥

शेषनाग, सुकृति (पुण्य) सत्त्वगुण सज्जनो का हास्य, सीप, चूना, अबरक, स्फटिक, खडिया, फेन और प्रकाश।

शुक्र, सुदरशन, सुरसरित, वारन, बाजि, समेत।
नारद, पारद, कमलजल, शारदादि सब श्वेत ॥९॥

शुक्र, सुदर्शन, सुरसरित (गगा) सुरवारन (ऐरावत), सुरबाजि (उच्चैश्रवा), नारदमुनि, पारद (पारा), निर्मल जल और शारदाजी (सरस्वती) ये सब श्वेत है।

उदाहरण (१)

कवित्त

कीन्हे छत्र छितिपति, केशौदास गणपति,
दसन, बसन, बसुमति कह्याचारु है।
बिधि कीन्हों आसन, शरासन असमसर,
आसन को कीन्हो पाकशासन तुषारु है।
हरि करी सेज हरिप्रिया करो नाक मोती,
हर कर्यो तिलक हराहू कियो हारु है।
राजा दशरथ सुत सुनौ राजा रामचन्द्र,
रावरो सुयश सब जग को सिगारु है ॥१०॥

'केशवदास कहते है कि—हे राजा दशरथ के पुत्र श्री रामचन्द्र सुनो! आपका सुयश सारे ससार के श्रृगार का कारण है, क्योकि राजाओ ने अपने छात्र, उसी से निर्मित किये है और श्री गणेशजी ने अपना दाँत भी उसी से बनाया है। पृथ्वी ने अपना सुन्दर वस्त्र (सागर) ब्रह्मा ने अपना आसन (पु डरीक) कामदेव ने अपना धनुष, इन्द्र ने अपना घोडा (उच्चै श्रवा) नारायण ने अपना बिछौना शेषनाग, श्री लक्ष्मी जी ने अपनी नाक का मोती, श्री शकर जी ने अपना तिलक (चन्द्रमा) और पार्वती जी ने उसे अपना हार बनाया है।

उदाहरण (२

कवित्त

देहदुति हलधर कीन्ही, निशिकर कर,
जगकर वाणीवर, विमल विचारु है।
मुनिगण मन मानि, द्विजन जनेऊ जानि,
संख, संखपानि पानि सुखद अपारु है॥
'केशौदास' सविलास विलसै, विलासनीन,
सुखमुख मृदुहास, उदय उदारु है।
राजा दसरथ सुत सुनो राजा रामचन्द्र,
रावरो सुयश सब जग को सिंगारु है ॥११॥

श्री बलराम जी ने अपने शरीर की द्युति बनाया। चन्द्रमा ने अपनी किरणें, ब्रह्माजी ने वाणी और बिमल विचार वाले मुनियो ने अपने मन, ब्राह्मणो ने जनेऊ और शंखपाणि (श्री नारायण) ने अपने हाथ का अपार सुखदायी शख उसी यश को बनाया है। 'केशवदास' कहते है कि स्त्रियो म विलास और मृदुहास्य का उदार उदय उसी से होता है। अत हे राजा रामचन्द्र। आपका सुयश सारे जगत की शोभा का कारण बन रहा है।

उदाहरण—३

कवित्त

नारायण कीन्हीं मनि, उर अवदात गनि,
कमला की वाणी मनि, शोभा शुभसारु है।
'केशव' सुरभि केश, शारदा सुदेश वेश,
नारद को उपदेश, विशद बिचारु है॥
शौनक ऋषी विशेषि, शीरष शिखानि लेखि,
गङ्गा की तरंग देखि, विमल विहारु है।
राजा दशरथ सुत सुनौ राजा रामचन्द्र,
रावरो सुयश सब जग को सिंगारु है ॥१२॥

श्री नारायण ने उसे अपने उदार हृदय की मणि (कौस्तुभ) बनाया है। लक्ष्मी जी की वाणी तथा शोभा का शुभ सार भी वही है। 'केशव' कहते है कि चमरी गाय ने अपने केश और सरस्वती जी ने अपना सुन्दर वेश उसी यश से बनाया है। नारद जी का उपदेश तथा उनके विशद विचार उसी से निर्मित हुए हैं। शौनकादि ऋषियो की चोटिया, गङ्गाजी की लहरे तथा जीवो के निर्मल व्यवहार भी उसी से बने है। अत हे राजा रामचन्द्र! आपका सुयश सारे ससार की शोभा का कारण बन रहा है।

जरावर्णन

सवैया

बिलोकि शिरोरुह श्वेतसमेत, तनोरुह केशव यो गुण गायो।
उठे किधौ आयु की औधिकेअँकुर, शूल कि सु ख समूल नशायो॥
लिख्यो किधौ रूपके पाणि पराजय, रूपको भूप कुरूप लिखायो।
जरा शरपंजर जीव जर्यो कि जुरा जरकंबर सो पहिरायो ॥१३॥

शरीर के रोयो सहित शिर के बालो को श्वेत होता हुआ देखकर 'केशव' ने उनका यो वर्णन किया है। ये सफेद बाल है या आयु की समाप्ति के अकुर है अथवा शूल हैं, जिन्होने सारे सुखो को समूल नष्ट कर दिया है। अथवा जरारूपो कुरूप राजा ने रूप (सुन्दरता) से चादी के पानी से पराजय का पत्र लिखा लिया है, (जिससे ये सफेदबाल सफेद-सफेद अक्षर हैं) या जरा (बुढापे) से बाणो ने जीव को चारो ओर से घेर लिया है अथवा मृत्यु ने जीव को जरी का कम्बल उढा दिया है।

सवैया

अभिराम सचिक्कन श्याम, सुगंधके धामहुते जे सुभाइकके।
प्रतिकूल सबै दृगशूल भये, किधौ शाल शृंगारके घाइकके।।
निजदूत अभूत जरा के किधौं, अफताली जरा जनलाइकके।
सितकेश हिये यहि वेश लसै, जनु साइक अंतकनाइकके ।।१४।।

जो बालसुन्दर, चिकने, काले सुगध के सुन्दर घर थे, वे सब अब उलटे आखो के शूल (दुख देने वाले) हो गये हैं। ये सफेद बाल है या शृगार (शोभा) को नष्ट करने वाले के हाथ के शाल (अस्त्र विशेष) हैं। अथवा ये सफेद बाल बुढापे के अद्‌भुत दूत है या वृद्धावस्था के योग्य अधिकारो है। ये सफेद बाल ऐसे ज्ञात होते है मानो यमराज के बाण हों।

सवैया

लसै सितकेश शरीर सबै कि जरा जस रूपके पानी लिखायो।
सुरूपको देश उदासकै कीलनि कीलितु कैकै कुरूप नसायो।।
जरै किंधौ केशव व्याधिनिकी, किधौ आधि के अंकुर अंत न पायो।
जरा शरपंजर जीव जर्‌यो, कि जुरा जरकबर सो पहिरायो ।।१५।।

शरीर भर मे सफेद बाल है या बुढापे ने चादी के पानी से अपनी कीर्त्ति लिखा ली है। (ये बाल मानो उसके अक्षर है)। अथवा कुरूप ने सौन्दर्य के देश को उदासन मत्र की कीलो को गाड़

कर नष्ट कर दिया है। 'केशव' कहते है कि अथवा ये सफेद बाल व्याधियो (शारीरिक रोगो) की जडे है या आधि (मानसिक रोगो) के अकुर है, जिनका अत नहीं मिलता। जरा (बुढापे) ने जीव को चारो ओर वाणो से घेर लिया है अथवा मृत्यु ने जीव को जरी का कम्बल पहना दिया है।

(२) पीतवर्णन

दोहा

हरिवाहन, विधि, हरजटा, हरा, हरद, हरताल।
चपक, दीपक, वीररस, सुरगुरू, मधु सुरपाल ॥१६॥

गरुड, ब्रह्माजी, शिवजी की जटाएँ, हल्दी, हडताल, चपक, दीपक, वीर-रस, बृहस्पति, मधु और इन्द्र।

सुरगिरि, भू, गोरोचना, गंधक, गोधनमूत।
चक्रवाक, मनशिल सदा, द्वापर, वानरपूत ॥१७॥

सुमेरु पर्वत, पृथ्वी, गोरोचना, गधक, गोमूत्र, चकवा, मैनशिल, द्वापर युग और बन्दर का बच्चा।

कमलकोश, केशव-वसन, केशरि, कनक, सभाग।
सारोमुख, चपला, दिवस, पीतरि, पीतपराग ॥१८॥

हे सभाग! कमल का बीजकोश, केशव-वसन (श्रीकृष्ण का वस्त्र-पीताम्बर) केशर, सोना, मैना का मुख, बिजली, दिन, पीतल और पराग ये सब पीले माने जाते है।

उदाहरण

सवैया

मगलही जु करी रजनी विधि, याहिते मंगली नाम धरयो है।
दीपति दामिनि देहसवाँरि, उड़ायदई धन जाइ वरयो है॥
रोचनको रचि केतकी चपक फूलनि में ॲगवासु भरयो है।
गौरि गोराईको मैल मिलैकरि, हाटक ते करहाट करयो है ॥१६॥

श्रीब्रह्माजी ने पार्वती जी के मागल्य गुणो से युक्त हल्दी बनाई, इसीसे उसका नाममगली पडा। उनके शरीर की दीप्ति से बिजली का निर्माण

करके ऊपर उडा दिया, जिसने जाकर बादलो को जलाना आरम्भ किया। उनके अग की सुवास से रोचन बनाया और केतकी तथा चपक पुष्पो मे भी सुगध भर दी। इसके बाद गौरी जी के शरीर का मैल लेकर सोने से करहार (कमल का बीज कोश) तक का निर्माण किया।

श्याम वर्णन

दोहा

विन्ध्य, वृत्त, आकाश, असि, अरजुन, खंजन सांप।
नीलकठ को, कंठ शनि, व्यास, विसासी, पाप ॥२०॥

विन्ध्य पर्वत, वृक्ष, आकाश, तलवार, अर्जुन, खजन साँप, श्रीमहादेव जी का कठ, शनि, व्यास, विश्वासघाती और पाप।

राकस, अगर, लँगूर मुख, राहु, छाह, मद, रोर।
रामचन्द्र, घन, द्रौपदी, सिघु, असुर, तम, चोर ॥२१॥

राक्षस, अगरु, लगूर का मुख, राहु छाया, मद (नशा) रोर (दरिद्र) श्रीरामचन्द्र, बादल, द्रौपदी, समुद्र की मूर्ति, अधकार और चोर।

जंबू जमुना, तैल, तिल खलमन सरसिज, चीर।
भील, करी, वन, नरक, मसि, मृगदम, कज्जल नीर ॥२२॥

जामुन फल, यमुना, तैल, तिल, सरसिज, (नीला कमल), चीर (एक तरह का वस्त्र जो गहरा नीला होता है), झील, करी (हाथी) बन, नर्क, मसि (स्याही), मृगमद (कस्तूरी) और काजल मिला आँसू।

मधुप, निशा, शृंगाररस, काली, कृत्या, कोल।
अपयश, ऋच्छ, कलक, कलि, लोचन, तारे लोल ॥२३॥

भौंरा रात शृंगार रस, काली देवी, कृत्याशक्ति, कोल (सूअर) अपयश, रीछ कलक, कलियुग, और आँखो के चचल तारे।

मारग अगिनि, किसान नर, लोभ, छोभ, दुख, द्रोह ।
विरह, यशोदा, गोपिका कोकिल, महिषी, लोह ॥२४॥

अग्नि का मार्ग, किसान, मनुष्य, लोभ, क्षोभ, दुख, द्रोह, विरह, यशोदा, ग्वालिन, कोयल, भैस और लोहा ।

कांच, चीक, कच, काम, मल, केकी, काक, कुरूप ।
कलह छुद्र, छल आदि दै, काले कृष्णस्वरूप ॥२५॥

काच, कील, बाल, मोर, कौआ कुत्सितरूप, कलह, क्षुद्र छल आदि भाव और श्रीकृष्ण का स्वरूप—ये काले रग के माने जाते है ।

उदाहरण -(१)

कवित्त

बैरिन के बहु भांति देखत ही लागि जाति,
कालिमा कमलमुख सब जग जानी है ।
जतन अनेक करि यदपि जनम भरि,
धोवत हू न छूटत केशव बखानी है ॥
निज दल जागै जोति, पर दल दूनी होति,
अचला चलति यह अकह कहानी है ।
पूरन प्रताप दीप अंजन की राजै रेख,
राजै श्रीरामचन्द्र पानि न कृपानी है ॥२६॥

सारा ससार जानता है कि श्रीरामचन्द्र की तलवार को देखते ही वैरियो के कमल-मुख मे कालिमा लग जाती है । केशव' कहते है कि वह कालिमा जन्म भर यत्न करने पर भी धोने से नहीं छूटती । उसकी जितनी ज्योति अपने दल मे होती है उससे दूनी शत्रुओ के दल मे होती है । उसके भय से पृथ्वी डगमगा जाती है, उसकी कथा अकथनीय है । श्रीरामचन्द्र के हाथ म जो तलवार सुशोभित हो रही है, वह तलवार नहीं प्रत्युत उनके पूर्ण प्रताप रूपी दीपक के काजल की रेखा है ।

उदाहरण (२)

कवित्त

हंसनि के अवतंस रचे रच कीच करि,
सुधा के सुधारे मठ कांच के कलससो।
गंगाजू के अंग संग यमुना तरंग बल,
देव का बदन रच्यो बारुणी के रससों।
केशव कपाली कंठ कूल कालकूट जैसे,
अमल कमल अलि सोहै ससि सस सो।
राजा रामचन्द्र जू के त्रास बस भारे भूप,
भूमि छोड़ि भागे फिरे ऐसे अपजस सों ॥२७॥

जिस प्रकार कीचड़ से युक्त सुन्दर हंस और काच के कलश से युक्त स्वच्छ मठ, या यमुना की तरंगो से युक्त गंगा या मदिरा के नशे से युक्त बलदेव जी का मुख था (केशव कहते है कि) शिवा जी का विष से युक्त गला, या कालकूट विष या भौंरो से युक्त स्वच्छ कमल या मृगाक से युक्त चन्द्रमा कलंकित होता है, उसी प्रकार पराजित होने पर अपयश से हम भी कलंकित होंगे, यही सोचकर श्रीरामचन्द्रजी के डर के मारे, सभी राजा लोग अपना राज्य छोड़ कर भागे-भागे फिरते है।

४ - अरुण वर्णन

इंद्रगोप, खद्योत कुज, केसरि, कुसुम, विशेखि।
केशव, गजमुख, बालरवि, तांबो, तच्छक, लेखि ॥२८॥

इन्द्रगोप (वीरबहूटी), खद्योत (जुगनू), कुज (मंगल ग्रह), केशर, कुसुम, (एक तरह का लाल फूल), श्रीगणेशजी, बालरवि (प्रातःकाल के सूर्य), तॉबा और तक्षक।

रसना, अधर, दृगंत, पल, कुक्कुट शिखा समान।
मानिक, सारस सीस, शुक, वानरवदन प्रमान ॥२९॥

जिह्वा, ओठ, आँखा के काने, पल (मास), कुक्कुट शिखा (मुर्गे की चोटी, माणिक्य, सारस का शिर और बन्दर का मुख।

कोकिल, चाख, चकोर, पिक, पारावत नख नैन।
चचु चरन कलहंस के, पाकी कुंदरू ऐन ॥३०॥

कोयल, चाख (नीलकठ), चकोर, पिक (पपीहा) और पारावत (कबूतर) पक्षियो के नख तथा आँखें, हस की चोच तथा चरण और पका हुआ कुन्दरू।

जवाकुसुम दाडिमकुसुम, किंशुक कंज अशोक।
पावक, पल्लव वीटिका, रग रुचिर सब लोग ॥३१॥

जवाकुसुम (गुडहर का फूल), दाडिम कुसुम (अनार का फूल) किंशुक पुष्प, कज (कमल), अशोक, पावक (अग्नि) और वीटिका (पान का बीडा)।

रातो चदन, रौद्ररस, छत्रीधर्म मँजीठ।
अरुण, महाउर, रुधिर नख, गेरू, संध्या ईठ ॥३२॥

लाल चदन, रौद्ररस, क्षत्रिय का धर्म मजीठ, अरुण (सूर्य के सारथी), महावार, रुधिर रक्त , नख, गेरू, और सध्या—हे मित्र ! ये सभी सुन्दर लाल रग के माने जाते है।

उदाहरण

सवैया

फूले पलास बिलासथली बहु केशवदास हुलास न थोरे।
शेष अशेष मुखानलकी जनु, ज्वालविशाल चली दिविओरे॥
किंशुक श्रीशुकतुंडनि की रुचि, राचै रसातलमे चितचोरे।
चंचुनिचापि चहूँ दिशि डोलत, चारुचकोर अँगारनि भोरे ॥३३॥

'केशवदास' कहते हैं कि विलास्थली मे बहुत से पलास के वृक्ष फूल रहे है, जहाँ कम आनन्द नहीं होता। उन फूलो को देखकर ऐसा ज्ञात होता है, मानो शेषनाग जी के मुखो की अग्नि की बडी-बडी लपटें आकाश की ओर चली जा रही हैं। पलास के पुष्प तोते की चोच की भाँति रगदार है और इस पृथ्वी भर मे लोगो का चित्त चुराये लेते है। चकोर पक्षी (इन फूलो को) धोखे से अगार मानकर अपनी चोच मे दबाए हुए चारो ओर घूमते हैं।

५—धूम्र वर्णन

दोहा

काककण्ठ, खर, मूषिका, गृहगोधा भनि भूरि।
करभ, कपोतान, आदिदै, धूम्र, धूमिली, धूरि ॥३४॥

कौए की गर्दन, गदहा, चुहिया, गृहगोधा (छिपकली), करभ (ऊँट), कबूतर, धूमिली (धुए के रग की गाय), और धूल इत्यादि धूम्र-वर्ण के कहे जाते है।

उदाहरण

सवैया

राघवकी चतुरगचमू चपि धूरि उठी जलहूँ थल छाई।
मानो प्रताप हुताशन धमूसी, केशवदास अकास न माई ॥
मेटिकै पंच प्रभूत किधौ, विधि रेनुमई नवरीति चलाई।
दु.ख निवेदन को भवभारको, भूमि मनौ सुरलोक सिधाई ॥२५॥

श्रीरामचन्द्र जी की चतुरगिणी सेना के सिपाहियो (तथा हाथी घोडो) के पैरो से दब कर जो धूल उठ रही है, वह जल और स्थल सभी जगहो पर छा गई है। 'केशवदास' कहते है कि वह धूल ऐसी जान पडती है मानो उनके प्रताप रूपी अग्नि का धुआँ है जो आकाश मे भी नहीं समा पाता। अथवा (यह उडी हुई धूल ऐसी लगती है कि) ब्रह्मा ने मानो पॉच तत्वो को हटाकर केवल धूलमयी रचना करने का नई प्रणाली चलाई है। या ऐसा जान पडता है कि अपने भार के दु.ख को सुनाने के लिए पृथ्वी स्वर्गलोक को चली जा रही है।

६ नील वर्णन

दोहा

दूब, वंश, कुवलय, नलिन, अनिल, व्योम, तृण, बाल।
मरकतमणि, हयसूरके, नीलवरण सेवाल ॥३६॥

दूब (दूर्वा घास , कुवलय (नीला कमल), नलिन, नीली कुमुदनी) अनिल वायु), व्योम (आकाश), तृण, बाल (केश), मरकत मणि (नीलम) सूर्य के घोडे और सैवाल सिवार) नील रग के माने जाते है ।

उदाहरण

सवैया

कण्ठ दुकूल सुओर दुहूँ उर यों, उरमै बलकै बलदाई ।
केशव सूरजअशनि मडि, मनो जमुनाजलधार सिधाई ।।
शकरशैल शिलातलमध्य, किधौ शुककी अवली फिरि आई ।
नारद बुद्धिविशारद हाय, किधौ तुलसीदलमाल सुहाई ।।३७।।

शक्तिदायी श्री बलराम जी के गले मे दुकूल (दुपट्टे) के दोनो छोर हृदय पर लटक रहे है । 'केशवदास' कहते है कि वे ऐसे ज्ञात होते है मानो सूय ने यमुना के जल की धारा को अपनी किरणो से युक्त करके वहीं से उतारा है । अथवा ऐसा जान पडता है मानो कैलाश पर्वत पर तोतो की पक्ति बैठी हुई है या बुद्धिमान नारद जी के हृदय पर तुलसी दल की माला झूल रही है ।

मिश्रित वर्णन

(क) श्वेत और काला

सिंहकृष्ण हरि शब्दगुनि, चंद विष्ण बिधु देखि ।
अभ्रकधातु आकाश पुनि, श्वेत श्याम चित लेखि ।।३८।।

हरि शब्द के सिंह और कृष्ण दो अर्थ है इसलिए अर्थ के अनुकूल ही रग मानना चाहिए अर्थात् जब सिंह का अर्थ निकले तब श्वेत और श्री कृष्ण का अर्थ हो तब काला समझना चाहिए । इसी तरह 'बिधु' शब्द के भी दो अर्थ होते हे, 'चन्द्रमा' और विष्णु' इनमे से 'चन्द्रमा' श्वेत और 'विष्णु' श्याम माने जायेगे । 'अभ्रक' के भी दो अर्थ होते है (१) 'अभ्रक' धातु और (२) आकाश । 'अभ्रक' श्वेत और 'आकाश' काला माना जायगा ।

घनकपूर घनमेघ अरु, नागराज गज शेषु।
पयाराशि कहि सिंधुसा, अरु छिति छीरहि लेषु ॥३६॥

'घन' का अर्थ 'कपूर' और 'बादल' होता है। कपूर से श्वेत और बादल से काला रंग मानना चाहिए। 'नागराज' के 'हाथी' और 'शेष' दो अर्थ होते है। 'हाथी' से कालारग और 'शेष' से श्वेत रग समझना चाहिए। इसी तरह 'पयोराशि' के 'समुद्र' और 'दुग्ध समूह' दोनो अर्थो मे से 'समुद्र' का काला और 'दूध' का श्वेत रग माना जायगा।

राहु सिंह सिंहीजभनि, हरि बलभद्र अनन्त।
अर्जुन कहिये श्वेतसों, अरु पारथ बलवन्त ॥४०॥

'सिंहीज' शब्द के अर्थ 'राहु' और 'सिंह' है। पहले का रग काला और दूसरे का श्वेत समझा जाता है। 'अनन्त' शब्द के दो अर्थ 'श्रीकृष्ण' और 'बलराम' मे से श्रीकृष्ण का अर्थ काला और 'बलराम' का श्वेत समझना चाहिए। 'अर्जुन' शब्द से श्वेत रग माना जायगा और 'पार्थ' से 'काला'।

हरिगजसुरगज समुझिये, फिर हरि गजगज जानि।
कोकिल सों कलकण्ठकहि, अरु कलहंस बखानि ॥४१॥

'हरिगज' शब्द के दो अर्थ है। जब उसका अर्थ इन्द्र का हाथी-ऐरावत होगा तब उसका रग श्वेत मानना चाहिए और जब 'विष्णु' का हाथी, जिसे उन्होंने बचाया था अर्थ होगा, तब उसका रग काला समझना चाहिए। इसी भाँति 'कलकठ' से 'कोयल' और 'कलहंस' दो अर्थ निकलते हैं। कोयल काली मानी जायगी और 'कलहंस' श्वेत।

कृष्णानदीवरशब्द सों, गंगासिंधु बखानि।
नीरद निकसे दन्तको, अरुज नीरको दानि ॥४२॥

'कृष्ण नदीवर' शब्द से 'गग।' और 'समुद्र' दो अर्थ निकलते है। पहले अर्थ से श्वेत रग और दूसरे से काला मानना चाहिए। इसी प्रकार 'नीरद' 'मुँह से निकले हुए दाँत' और 'बादल' दोनो को कहते है। पहला श्वेत रग का सूचक है और दूसरा काले रग का।

(ख) श्वेत और पीत

शिव विरंचिसों 'शभु' भणि, रजतरजत अरु हेम।
स्वर्ण शरभ सो कहत है, अष्टापद करि नेम ॥४३॥

'शभु' शब्द से शिवाजी और ब्रह्मा जी दोनो माने जाते है। जब 'शिवाजी' अर्थ होगा तब श्वेत रग माना जायगा और जब 'ब्रह्मा' अर्थ होगा तब पीला। इसी प्रकार रजत' शब्द 'चादी' के अर्थ में श्वेत और 'सोने' अर्थ मे पीला मानिए। 'अष्टापद' सोने और शरभ नामक जन्तु को कहते हैं। पहले अर्थ मे पीला और दूसरे अर्थ मे श्वेत रग मानना चाहिए।

सोम स्वर्ण अरु चद कलधौत रजत अरु हेम।
तारकूट रूपो रुचिर, पीतरि कहिकरि प्रेम ॥४४॥

सोम 'शब्द' 'सोना' और 'चन्द्रमा' दोनो के लिए प्रयुक्त होता है। सोना पीला समझिये और चन्द्रमा श्वेत। 'कलधौत' शब्द के दो अर्थो मे से चाँदी को श्वेत और सोने को पीला मानिए 'तारकूट' के दो अर्थ 'चाँदी' तथा 'पीतल' मे से चाँदी श्वेत रग की सूचक मानी जायगी और 'पीतल' पीले रग की।

(ग) श्वेत और लाल

श्वेतवस्तु शुचि, अगिनि शुचि, सूर सोम हरि होइ।
पुष्कर तीरथ सों कहैं पंकज सों सब लोइ ॥४५॥

'शुचि' श्वेत को भी कहते हैं और 'अग्नि' को भी। पहला अर्थ श्वेत रग का सूचक है और दूसरा लाल रग का। इसी तरह 'हरि' शब्द के भी दो अर्थ होते है—सूर्य तथा चन्द्रमा। सूर्य लाल रग के सूचक हैं

और चन्द्रमा श्वेत रग के माने जाते है। 'पुष्कर' तीर्थ जल से भी कहते हैं और लाल कमल' से भी। पहला श्वेत रंग का माना जाता है तथा दूसरा लाल रग का सूचक है।

'हंस' हंसरवि वरणिये, 'अर्क' फटिक रवि मानि।
'अब्ज' शख सरसिज दुवौ, कमलकमलजलजानि ॥४६॥

'हस' शब्द के 'हस पक्षी' और 'सूर्य' दोनो अर्थ माने जाते है। 'हस' श्वेत रग का बोधक है और सूर्य' लाल रग के सूचक हैं। 'अर्क' शब्द के 'स्फटिक' और 'सूर्य' दोनो अर्थो मे स्फटिक से श्वेत रग माना जायगा और 'सूर्य' से लाल रग। 'अब्ज' शब्द के 'कमल' और 'शख' दो अर्थ है। कमल लाल रग का सूचक है तथा 'शख' श्वेत रग का। इसी प्रकार 'कमल' शब्द से 'कमल' और 'जल' अर्थ सूचित होते है। 'कमल' लाल माना जाता है और 'जल' श्वेत समझा जाता है।

छठा-प्रभाव

वर्ण्य वर्णन

संपूरण, आवरत, औ, कुटिल, त्रिकोण, सुवृत्त ।
तीक्षण गुरु, कोमल, कठिन, निश्चल, चंचलचित्त ॥१॥
सुखद, दुखद, अरु मंदगति, शीतल तप्त सुरूप ।
क्रूरस्वर, सुस्वर, मधुर, अबल बलिष्ठ अनूप ॥२॥
सत्य, झूठ, मण्डलवरणि, अगति, सदागति दानि ।
अष्टविशविधि, मै कहे, वर्ण्य अनेक बखानि ॥३॥

सम्पूर्ण, आवर्त्त कुटिल, त्रिकोण, सुवृत्त, तीक्ष्ण, गुरु, कोमल, कठोर, निश्चल, चचल, सुखद, दुखद, मदगति, शीतल, तप्त, सुरूप, क्रूरस्वर, सुस्वर, मधुर, अबल, बलिष्ठ, सत्य, झूठ मडल, अगति सदागति और दानी ये २८ प्रकार के वर्ण्यालकार मैने वर्णन किये हैं । इनके अतिरिक्त और भी बहुत से भेद हो सकते है ।

१—सपूर्णवर्णन ।

इतने सपूरण सदा, वरणे केशवदास ।
अंबुज, आनन, आरसी, सतत प्रेम, प्रकास ॥४॥

'केशवदास' कहते है कि अबुज, आनन (मुख), आरसी (दर्पण) प्रेम और प्रकाश को सदा सम्पूर्ण मान कर वर्णन किया जाता है ।

उदाहरण

कवित्त

हरिकर मडन, सकल दुख खडन,
मुकुट महि मंडल के कहत अखंडगति ।
परम सुवास, पुनि पियूष निवास परि,
पूरन प्रकास केशौदास भू-अकासगति ।

उदाहरण

कवित्त

दुहूँरुख मुख मानौ, पलट न जानी जात,
देखिकै अलात जोत जाति होति मंद लाजि ।
'केशौदास' कुशल कुलाल चक्र चक्रमन,
चातुरी चितै कै चारु चातुरी चलत भाजि ।
चंद जू के चहूंकोद वेष परिवेष कैसो,
देखत ही रहिए न कहिए वचन साजि ।
धाप छांड़ि आपनिधि जानि दिशि दिशि रघु-
नाथ जू के छत्र तर भ्रमत भ्रमीन बाजि ॥७॥

श्री रामचन्द्र जी का भ्रमणकारी घोडा दौडने का मैदान छोडकर तथा चारो ओर समुद्र ही समुद्र समझता हुआ उन्हीं के छत्र के नीचे चक्कर काट रहा है। मानो उसके मुख का रुख दोनो ओर है, उसकी पलट ज्ञात ही नहीं होती अर्थात् इतनी शीघ्रता से पलट जाता है कि ज्ञात ही नहीं होता कि कब पलट गया। उसे देखकर बनेठी की ज्योति भी लज्जित होकर मन्द पड़ जाती है। 'केशवदास' कहते है कि उसके भ्रमण की चतुरता को देखकर कुम्हार के चाक के घूमने की शीघ्रता भाग जाती है। चन्द्रमा के चारो ओर होने वाले परिवेष (घेरा) की भाँति उसे देखते ही रह जाना पडता है, कुछ कहा नहीं जाता।

३—कुटिलवर्णन

दोहा

अलक, अलिक, भ्रुकुंचिका किंशुक शुकमुख लेखि ।
अहि, कटाक्ष, धनु, बीजुरी, ककनभग्न विशेखि ॥८॥
बाल, चद्रिका, बालशशि, हरि, नख शूकरदंत ।
कुद्दालादिक वरणिये, कपटी कुटिल अनंत ॥९॥

अलक (लटे) अलिक (ललाट), भ्रू (भौं) कुंचिका (बास की टहनी), किंशुक, शुकमुख (तोते का मुख) अहि (साँप), कटाक्ष (तिरछी दृष्टि), धनु (धनुष), बीजुरी (बिजली), ककन भग्न (ककण का टूटा हुआ टुकडा), बाल (घु घराले), चद्रिका एकगहना), बाल शशि (द्वितीया का चन्द्रमा) हरिनख (सिंह का नख), सूकर दन्त (सुअर का दाँत) और कुद्दाल (कुल्हाडी) आदि की भाँति अनन्त वस्तुएँ कुटिल कही गई है।

उदाहरण (सवैया)

भोर जगी वृषभानुसुता, अलसी बिलसी निशि कुजविहारी।
केशव पोंछति अचलछोरनि पीक सुलीक गई मिटिकारी॥
बकलगे कुचबीच नखक्षत देखिभई द्दग दूनी लजारी।
मानौ वियोगवराह हन्यो युग शैलकों संधिमे इंगवैडारी॥१०॥

श्री कुञ्जबिहारी (श्रीकृष्ण) के रात के विलास के पश्चात् वृषभान सुता (राधा) आलस्य मे भरी हुई प्रात काल जगी है। 'केशवदास' कहते है कि वह पान की पीक और काजल की रेखा को अपने आंचल से पोछने लगी जिससे काजल की काली रेखा भी मिट गई। परन्तु कुचो के बीच जो नखक्षत (नख का लगा हुआ चिन्ह) लगा हुआ था उसे आँखो से देखकर दूनी लज्जित होने लगी। वह नखक्षत ऐसा ज्ञात होता था मानो वियोग रूपी बाराह (शूकर) ने दो पहाडो की सन्धि मे प्रहार किया था, सो उसका एक दाँत पड़ा हुआ रह गया है।

४—त्रिकोणवर्णन

दोहा

शकट, सिघारो, वज्र, हर, हरके नैन निहारि।
केशवदास त्रिकोणमहि, पावककुण्ड विचारि॥११॥

'केशवदास' कहते है कि शकट (छकडा गाडी), सिंघाडा, वज्र, हल, श्रीमहादेव जी के नेत्र और अग्नि कुंड—ये इस पृथ्वी मे (ससार मे) त्रिकोण माने जाते है।

उदाहरण

कवित्त

लोचन त्रिलोचन को केशव विलोकि विधि,
पावक के कुड सी त्रिकोण कीन्ही धरणी ।
सीधी है सुधारि पृथु परम पुनीत नृप,
करि करि पूरण दसहुँ दिस करणी ।
ज्वाला सो जगत जग मगत सुभग मेरु,
जाकी ज्योति होति लोक लोक मन हरणी ।
थिर चर जीव हवि होमियत युग-युग,
होता होत काल न जुगुति जात वरणी ।।१२।।

'केशवदास' कहते है कि श्रीशिव जी के तीनो नेत्र देखकर श्रीब्रह्माजी ने 'अग्निकु ड, जैसा तिकोनी भारतभूमि बनाई। उस पृथ्वी को परम पवित्र राजा पृथु ने अपनी करनी से सुधारा। उसमे सुमेरु पर्वत की लोक-लोकान्तरो का मन हरने वाली ज्योति बनाई है। पृथ्वी रूपी इस हविकु ड मे युग युगान्तरो से चर अचर जीव होता काल के द्वारा होमे जा रहे हैं, कुछ कहा नहीं जा सकता ।

५—सुवृत्तवर्णन

दोहा

वृत्त, बेल भनि गुच्छ अरु, ककुदकंध रथअंग
कुभि-कुंभ, कुच, अंड, भनि, कंदुक, कलश सुरंग ।।१३।।

बेल, गुच्छा, बैल के कन्धे का ऊपरी भाग, रथ के अग, हाथी के मस्तक के ऊपरी गोल भाग, कुच, अडा, गेद और कलश ये वृत्त (गोल) कहे जाते है ।

उदाहरण

कवित्त

परम प्रवीन अति कोमल कृपालु तेरे,
उरते उदित नित चित हितकारी है।
'कशौराय' कीसों अति सुन्दर उदार शुभ,
सलज, सुशील विधि सूरति सुधारी है।
काहूसों न जानैं, हँसि बोलि न विलोकि जानै,
कचुकी सहित साधु सूधी बैसवारी है।
ऐसे हौ कुचनि सकुचनि न सकति बूझि,
परहिय हरनि प्रकृति कौने पारी है ॥१४॥

एक सखी अपनी सखी से कहती है कि कुच तेरे परम चतुर कोमल तथा उदार हृदय से उत्पन्न हुए है और चित्त के हितकारी हैं। 'केशवराय' ईश्वर की सौगन्ध ये बहुत ही सुन्दर, उदार, शुभ लज्जाशील और सुशील हैं। इनकी सूरत श्रीब्रह्मा जी ने ही सुधारी है। ये बेचारे न तो किसी से हँस कर बोलना जानते हैं और न किसी की ओर देखना ही जानते है और कचुकी पहने हुए साधु वेश मे रहते है। ऐसे कुचो को देखकर मारे सकोच के मै पूछ नहीं सकती कि 'दूसरे के मन को हरने का स्वभाव इनमे किसने डाल दिया है?'

६, ७ तीक्ष्ण और गुरुवर्णन

दोहा

नख, कटाक्ष, शर, दुर्वचन, सेलादिक खर जानि।
कुच, नितम्ब, गुण, लाजमति, रति अति गुरु करिमानि ॥१५॥

नख, कटाक्ष, बाण और शैलादि (छुरी, कटारी इत्यादि अस्त्र) खर (तीक्ष्ण) मानिए और कुच, नितम्ब, गुण, लज्जा, मति और रति को गुरु समझिए।

उदाहरण (१)

(तीक्ष्ण)

कवित्त

सै हथी हथ्यार हू ते अति अनियारे, काम,
शर हू ते खरे खल वचन विशेखिये।
चोट न वचत ओट किये हू कपाट कोट,
भौन भौहरे हू भारे भय अवरेखिये।
'केशौदास' मंत्र, गद, यत्रऊ न प्रतिपत्त,
रत्त, लत्त-लत्त बज्र रत्तक न लेखिये।
भेदत है मर्म, वर्म ऊपर कसेई रहै,
पीर घनी घायलन घाय पैरन देखिये ।।१६।।

खलो के बचन काम के वाणो से भी तीक्ष्ण है। ये बरछी और दूसरे हथियारो से भी अधिक नुकीले है। किवाडो को ओट करने पर भी इनसे कोई बच नहीं पाता। घर तथा तहखाने मे रहने पर भी इनसे बडा भारी डर लगा रहता है। 'केशवदास' कहते है कि इन पर मत्र, गद (मरहम लेप), और यंत्र भी कुछ काम नहीं करते और लाखो बज्र और रक्षक भी इनसे नहीं बच पाते। ऊपर वर्म (कवच) के कसे रहने पर भी मर्म स्थल बेध डालते हैं। गहरी चोट पहुचाते हैं परन्तु घाव नहीं दिखलाई पडता।

उदाहरण (२)

(गुरु)

सवैया

पहिले तजि आरस आरसी देखि, घरीक घसे घनसारहि लै।
पुनि पोंछि गुलाब तिलोंछि फुलेल अँगौछनि आछे अँगौछनि कै ।।
कहि केशव मेद जवादिसों माजि, इतेपर आंजे मै आजन दै।
बहुरयो दुरि देखौं तौ देखौ कहा, सखिलाजतौलोचनलागियेहै ।।१०।।

पहले आलस्य छोडकर दर्पण देखा, फिर एक घडी तक कपूर लेकर घिसा। फिर गुलाब जल से धोकर और फुलेल (इत्र) मलकर अगोछे से भली भाँति पोछ डाला। 'केशव' कहते हैं कि कस्तूरी जुवाद आदि से माज कर आँखो मे अजन दिया। हे सखि! इतना करने पर भी (नायक को) जो छिपकर देखा तो देखती क्या हू कि लज्जा तो आँखो मे ज्यो की त्यो लगी ही हुई है।

८—कोमलवर्णन

दोहा

पल्लव, कुसुम, दयालु-मन, माखन, मैन, मुरार।
पाट, पामरी, जीभ, पद प्रेम, सुपुण्य विचार ॥१८॥

पल्लव, कुसुम, दयालुमन, मक्खन, मैन (मोम), मुरार (कमल की जड), पाट (रेशम), पामरी (रेशमी वस्त्र), जीभ, पद, प्रेम और पुण्य कोमल माने जाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

मैन ऐसो मन मृदु, मृदुलमृणालिकाके,
सूतकैसी स्वरधुनि मनहिं हरति है।
दारथो कैसे बीज दाँत पातसे अरुण ओंठ,
केशौदास देखि दृग आनन्द भरति है॥
येरी बीर तेरी मोहि भावत भलाई ताते,
बूझतिहौ तोहि और बूझति डरति है।
माखनसी जीभ मुखकंजसो कोंवर कहि,
काठसा कठेठा बातैं कैसे निकरति हैं॥१९॥

तेरा मन मोम जैसा कोमल है, मृणाल के सूत जैसी कोमल तेरी स्वर-ध्वनि मन को हरनेवाली है। अनार के बीज जैसे तेरे दाँत हैं, पल्लव जैसे लाल ओठ और (केशवदास-सखी की ओर से कहते हैं कि) तेरी

आँखें देखते ही आनन्द भर देती है। हे मेरी सखी! मुझे तेरी भलाई अच्छी लगती है, इसीलिए मैं तुझसे पूछती हूँ, परन्तु पूछते हुए डरती हूँ। तेरी मक्खन सी कोमल जीभ और तेरे कमल से कोमल मुख से, बतला, काठ जैसी कठोर बातें कैसे निकलती हैं?

६—कठोरवर्णन

दोहा

कुच कठोर भुजमूल, मणि, वरणि वज्र, कहि मित्त।
धातु, हाड़, हीरा, हियो, विरहीजनके चित्त ॥२०॥
शूरनके तन, सूम मन, काठ, कमठकी पीठि।
केशव, सूखो चर्म, अरु, शठहठ, दुर्जन-दीठि ॥२१॥

केशवदास कहते हैं कि हे मित्र! कुच, भुजमूल (भुजदंड), सब प्रकार की मणियाँ, वज्र, सब प्रकार की धातुएं, हाड, हीरा, वियोगियो के हृदय और मन, वीरो का शरीर सूम या कंजूस का मन, काठ, कमठ, या कछुए की पीठ, सूखा चमडा, दुष्टो का हठ और दुर्जनो की दृष्टि इन्हे कठोर कहा जाता है।

उदाहरण

कवित्त

'केशौदास' दीरघ उसासनि की सदागति,
आयुको अकाश है, प्रकाश पाप भोगीको।
देह जात, जातरूप हाड़निको पूरौ रूप,
रूप को कुरूप विधु वासर सँयोगी को।
बुद्धिन की बीजुरी है नैननिको धाराधर,
छातीको घरधार तनघाइन प्रयोगीको।
उदरको बाड़वा अगिन गेह मानतहौ,
जानतहौ हीरा हियो काहू पुत्रशोगीको ॥२२॥

'केशवदास' कहते है कि जो पुरुष पुत्र-शोकी होता है, उसके लिए दीर्घ नि.श्वास ही पवन है। वह आयु के लिए आकाश अर्थात् शून्य हो जाता है अर्थात् मृत तुल्य बन जाता है और (जितने दिन जीता है उतने दिनो तक) पाप के प्रकाश सदृश रहता है। उसके शरीर की शक्ति जाती रहती है, रूप भी लुप्त हो जाता है और वह हाडो का पूरा रूप (ठठरी मात्र) बन जाता है। उसका रूप (सौंदर्य) ऐसा निष्फल हो जाता है जैसे दिन का चन्द्रमा ज्योतिहीन हो जाता है। उसकी बुद्धि पर बिजली पड जाती है अथवा बिजली जैसी चचल हो जाती है और नेत्र बादल बन जाते हैं (आँसू बहाते रहते है)। उसकी छाती घडियाल बन जाती है अर्थात् जैसे घडियाल पीटा जाता है, वैसे वह भी अपनी छाती पीटता रहता है। उसका शरीर घावो का प्रयोगी हो जाता है अर्थात् मानो घावो के लिए ही बना होता है। उसका उदर मै बडवानल का घर मानता हूँ और हृदय को वज्र समझता हूँ।

१०—निश्चलवर्णन

दोहा

सती, समर भट, संतमन, धर्म, अधर्म निमित्त।
जहाँ तहाँ ये वरणिये, केशव निश्चल चित्त ॥२३॥

'केशवदास' कहते है कि सती, भट, संतमन, धर्म और अधर्म के कारणो का जहाँ जहाँ वर्णन किया जायगा, वहाँ-वहाँ इनके चित्त को निश्चल ही कहना चाहिए।

उदाहरण

सवैया

काय मनो वच काम न लोभ न छोभ नमोहै महाभजेता।
केशव बाल बयक्रम वृद्ध बिपत्तिनहूँ अति धीरज चेता ॥
है कलिमे करुणा वरुणालय, कौन गनै कृत द्वापर त्रेता।
येई तौ सूरजमडल बेधत, सूर सती अरु ऊरधरेता ॥२४॥

'केशवदास' कहते हैं कि शूर, सतीस्त्री और उर्द्धरेता (ब्रह्मचारी) ये लोग ही तो सूर्य मडल को भेदनेवाले हुआ करते है। इन्हे तन, मन और वचन से न काम होता है, न लोभ होता है, न क्षोभ होता है और न मोह होता है तथा ये महा-भय को भी जीतनेवाले होते है। ये लोग बाल से लेकर वृद्धावस्था तक विपत्तियो मे धैर्य धारण करने वाले होते है। ये लोग जब कलियुग तक मे करुणा के समुद्र होते है तब सतयुग, त्रेता और द्वापर की गिनती कौन करे।

११—चंचलवर्णन

दोहा

तरल तुरग, कुरंग, गन, बानर, चलदल पान।
लोभिन के मन, स्यारजन, बालक, काल विधान ॥२५॥
कुलटा कुटिल, कटाक्ष, मन, सपनो, जोबन, मीन।
खजन, अलि, गजश्रवण; श्री, दामिनि पवन प्रवीन ॥२६॥

हे प्रवीन घोडा, हिरन बादल, बन्दर पीपल के पत्ते लोभियो के मन, कायर मनुष्य बालक, समय का विधान, कुलटा स्त्री, कुटिल मनुष्यो के कटाक्ष, मन, स्वप्न, यौवन, मछली, खजन, भौंरा, हाथी के कान, लक्ष्मी, बिजली तथा वायु चचल माने जाते है।

उदाहरण

कवित्त

भौंर ज्यों भवत लोला, ललना लतान प्रति,
खंजन सो थल, मीन मानो जहाँ जल है।
सपनो सो होत, कहूँ आपनो न अपनाये,
भूलिए न बैन ऐन आक को सो फल है।
गहिय धौं कौन गुन, देखत ही रहियेरी,
कहिये कछू न, रूप मोह को महल है।
चपला सी चमकनि, सोहै चारु चहूँ दिसि,
कान्ह को सनेह, चल दल को सो दल है ॥२७॥

जिस प्रकार चचल भौंरा लता रूपी ललनाओ के प्रति घूमता रहता है और जैसे स्थल पर खजन तथा जहाँ जल होता है, वहाँ मछली चचलता धारण करती है, उसी प्रकार कृष्ण का स्नेह चचल है। वह सपने के समान होता है और अपनाने पर भी अपना नहीं होता इस लिए उनके आक के फल के समान नीरस बचनो मे न भूल जाना। हे सखी ! उसका कौन सा गुण ग्रहण किया जाय ? केवल देखती रह, कहना कुछ नहीं। वह रूप और मोह का महल है। उनका प्रेम बिजली की चमक की भाँति चारो ओर शोभित होता है और पीपल के पत्ते के समान चचल है।

१२—सुखदवर्णन

दोहा

पण्डित पूत, पतिव्रता, विद्या, वपुष निरोग।
सुखदा फल अभिलाष के, सपति, मित्र सँयोग ॥२८॥
दान, मान, धन योग, जप, राग बाग, गृह रूप।
सुकृति सौम्य सरवज्ञता, ये सुखदानि अनूप ॥२९॥

पण्डित-पुत्र पतिव्रता स्त्री, विद्या, नीरोग शरीर, अभिलाषा के अनुसार मिलनेवाला फल-सपत्ति मित्र मिलन, दान, मान और धन प्राप्ति का अवसर, जप, राग, वाग, गृह, रूप पुण्य, सौम्य स्वभाव और सर्वज्ञता सुख देने वाले माने जाते है।

उदाहरण

सवैया

पण्डितपूत सपूत सुधी, पतिनी पतिप्रेम परायण भारी।
जानै सबै गुण, मानै सबै जन, दानविधान दयाउरधारी ॥
केशव रोग नही सों वियोग, सँयोग सुभोगनि सों सुखकारी।
सांच कहै, जगमहिं लहै यश, मुक्ति यहै चहुँवेद विचारी ॥३०॥

'केशवदास' कहते है कि पण्डित और बुद्धिमान पुत्र, पति प्रेम परायणा स्त्री, सब गुणो का ज्ञान, सब लोगो से मान-प्राप्ति, दान देना, हृदय मे दया धारण करना, रोगो से वियोग, भोगो से सयोग, सत्य कहना, ससार मे यश प्राप्ति और युक्ति—ये वस्तुए सुख देने वाली होती है यह बात चारो वेद मे कही गई है।

१३—दुखदवर्णन

दोहा

पाप पराजय, झूठ, हठ, शठता, मूरख मित्त।
ब्राह्मण नेगी, रूप बिन, असहनशील चरित्त ॥३१॥
आधि, व्याधि अपमान, ऋण, परघर भोजन बास।
कन्या संतति, वृद्धता, बरषाकाल प्रवास ॥३२॥
कुजन, कुस्वामी, कुगति हय, कुपुरनिवास कुनारि।
परवश, दारिद, आदिदै, अरि, दुखदानि विचारि ॥३३॥

पाप, पराजय (हार), झूठ, हठ, शठता, मूर्ख मित्र, नेगी ब्राह्मण कुरूपता, असहनशील चरित्र, आधि (मानसिक रोग), व्याधि (शारीरिक रोग , अपमान, ऋण, दूसरे घर मे भोजन तथा वास, कन्या सन्तान, बुढापा, वर्षा काल मे विदेश मे रहना, बुरा या दुष्ट मनुष्य बुरा स्वामी, बुरी चाल का घोडा, बुरे नगर मे रहना, बुरी स्त्री, पराधीनता, दरिद्रता और बैर आदि को को दु.ख देने वाला समझिए।

उदाहरण

कवित्त

बाहन कुचाल, चोर चाकर, चपल चित,
मित्त मतिहीन, सूम स्वामी उर आनिये।
परघर भोजन निवास, वास कुपुरन,
'केशौदास' वरषा प्रवास दुख दानिये।

पापिन को अग संग, अगना अनंग बस,
अपयश युत सुत, चित हानिये।
मूढता, बुढाई, व्याधि, दारिद्, झुठाई आधि,
यह ही नरक नर लोकन बखानिये ॥३४॥

'केशवदास' कहते हैं कि बुरीचाल की सवारी (घोडा आदि) चोर सेवक, चचल चित्त, मूर्ख मित्र, सूम स्वामी, दूसरे के घर भोजन तथा निवास, बुरे गाव मे वास, वर्षा मे विदेश मे रहना, पापियो का साथ, काम वश स्त्री, अपकीर्ति देनेवाला पुत्र, मन-चाही वस्तु की हानि, मूर्खता, बुढापा, शारोरिक रोग, दरिद्रता, झूठ और मानसिक रोग, इन्हीं को इस नर-लोक ससार का नरक बतलाया गया है। अर्थात् ये नरक जैसी दुखदायी होती हैं।

१४—मंदगत वर्णन

दोहा

कुलतिय, हासबिलास, बुध, काम, क्रोध, मन मानि।
शनि गुरु, सारस, हस, गज, तियगति, मंद बखानि ॥३५॥

कुलवती स्त्री, हास-विलास, बुद्धिमान, काम, क्रोध, शनि, वृहस्पति, सारस पक्षी, हंस, हाथी और स्त्री की चाल-इन्हे मंदगति कहा गया है।

उदाहरण

कवित्त

कोमल विमल मन, विमला सी सखी साथ,
कमला ज्यों लीन्हे हाथ कमल सनाल को।
नूपुर की धुनि सुनि, भौरें कल हंसनि के,
चौंकि चौंकि परै चारु चेटुवा मराल को।
कचन के भार, कुच भारन, सकुच भार,
लचकि लचकि जाति कटि-तट बाल को।
हरे हरे बोलति विलोकति हँसति हरे,
हरे हरे चलति हरति मन लाल कौ ॥३६॥

जिसका कोमल और निर्मल मन है, सरस्वती जैसी सखी जिसके साथ है, और जो हाथ मे सनाल कमल लिए हुए लक्ष्मी जैसी प्रतीत होती है। जिसके बिछुओ की ध्वनि सुनकर, हंसो के धोखे मे, हसो के बच्चे चौंक-चौंक पडते है, जिसकी कमर बाल, कुच, तथा संकोच के भार से झुकी जाती है, वह बाला धीरे-धीरे बोलती, देखती और हसती है तथा धीरे-धीरे चलती हुई लाल (नायक) का मन हरती है।

१५—शीतलवर्णन

दोहा

मलयज, दाख कलिंद, सुख, ओरे, मिश्री मीत।
प्रियसंगम, घनसार, शशि, जल, जलरुह हिमि, शीत ॥३७॥

चदन, दाख, (किसमिस) कलिंद (तरबूज) सुख ओला, मिश्री प्रिय-सगम, कपूर, चन्द्रमा, जल मे उत्पन्न होनेवाली वस्तुऍ, बर्फ तथा शीत शीतल माने जाते है।

उदाहरण

कवित्त

सीतल समीर टारि, चन्द्र चंद्रिका निवारि,
'केशौदास' ऐसे ही तो हरषु हिरातु है।
फूलन फैलाय डारि, झार डारि घनसार,
चन्दन को टारि चित्त चौगुनो पिरातु है।
नीर हीन मीन मुरझानी, जीवै नीर ही पै,
छीर के छिरी के कहा धीरजु धिरातु है।
पाई है तैं पीर किधौ यो ही उपचार करै,
आग को तो दाध्यो अंग आगिही सिरातु है॥३८॥

('केशवदास' एक सखी की ओर से जो अपनी सखी के शीतल उपचार में लगी है, कहते है, कि) हे सखी! इस ठडी वायु को हटा और चन्द्रमा की चांदनी भी दूर कर, क्योकि इन्हीं मे तो मेरा आनन्द

लुप्त हो जाता है। फूलो को फेंक दे, कपूर को झाड कर अलग कर दे और चन्दन को हटा दे, क्योकि इनसे मेरा मन चौगुना पीडित होता है। पानी के बिना मुरझाई हुई मछली पानी ही से जीवित होती है, कहीं दूध छिडकने से उसे धीरज आ सकता है ? तुझे कभी ऐसी पीडा हुई भी है या तू यो ही उपचार कर रही है ? जानती नहीं कि आग का जला हुआ अग आग ही से शीतल होता है।

१६—तप्तवर्णन

दोहा

रिपुप्रताप, दुर्वचन, तप तप्त विरह संताप।
सूरज, आगि, बजागि, दुख, तृष्णा, पाप, विलाप ॥३९॥

बैरी का प्रताप, दुर्वचन, तप, विरह सताप, सूर्य, अग्नि, वज्राग्नि, दु ख, तृष्णा, पाप, और विलाप-तप्त माने जाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

'केशौदास' नीद, भूख, प्यास, उपहास, त्रास,
दुख का निवास विष मुखहू गह्यो परै।
वायु को वहन, वनदावा दहन, बड़ी,
वाड़वा अनल ज्वाल जाल मे रह्यो परै।
जीरन जनम जात जोर जुर घोर परि,
पूरण प्रगट परिताप क्यौ कह्यौ परै।
सहि हौ तपन ताप, पर को प्रताप रघु-
वीर को विरह बीर मोपे न सह्यौ परै ॥४०॥

'केशवदास' कहते है कि श्री सीता जी श्री हनुमान जी से कह रहीं हैं कि मै नीद, भूख, प्यास और उपहास का भय सह सकती हूँ तथा परम दुखदायी विष भी मुँह मे डाल सकती हूँ। मै आँधी के झोके और दावाग्नि की जलन भी सह सकती हूँ और बडवानल की ज्वालाओं के

बीच रह भी सकती हूँ। मैं जन्मभर रहने वाला घोर ज्वर-जिसके पूर्ण परिताप का वर्णन नहीं किया जा सकता-सह सकती हूँ। मै सूर्य की गर्मी तथा शत्रु का परिताप भी सह सकती हूँ, परन्तु मुझसे श्री रघुनाथ जी के विरह का संताप नहीं सहा जाता।

१७—सुरूपवर्णन

दोहा

नल, नलकूवर, सुरभिषक, हरिसुत, मदन, निहारि।
दमयन्ती, सीतादि तिय, सुन्दर रूप विचारि ॥४१॥

नल, नलकूवर (कुवेर का एक पुत्र), सुरभिषक (देवताओ के वैद्य) हरिसुत (श्रीकृष्ण के पुत्र-प्रद्युम्न), मदन (कामदेव) और दमयन्ती तथा श्री सीता आदि स्त्रियाँ सुन्दर माने जाते है।

उदाहरण

कवित्त

को है दमयन्ती, इन्दुमती, रति, राति दिन,
होहि न छबीली, छन-छवि जो सिङ्गारिये।
वदन निरूपन निरूपम निरूप भये,
चन्द बहुरूप अनुरूप कै बिचारिये।
'केशव' लजात जलजात जातवेद ओप,
जातरूप बापुरो, विरूप सो निहारिये।
सीता जी के रूप पर देवता कुरूप को है,
रूपही के रूपक तौ बारि बारि डारिये ॥४२॥

श्री सीता जी के रूप के सामने दमयन्ती, इन्दुमती और रति क्या हैं। यदि उन्हे बिजली की शोभा से रात दिन सजाया जाय तो भी वे वैसी सुन्दर न होगी। केशवदास' कहते है कि उनकी सुन्दरता से कमल लज्जित हो जाता है अग्नि की चमक छिप जाती है और बेचारा सोना तो कुरूप सा दिखलाई पडता है। चन्द्रमा बहुत से रूप रखने वाले बहु-रूपियो के समान ही जान पडता है। श्री सीता जी के रूप के आगे देव-

ताओं की कुरूप स्त्रियाँ क्या हैं? उनकी सुन्दरता पर तो सौदर्यकीसभी उपमाएँ निछावर कर देनी चाहिए।

१८—क्रूर स्वरवर्णन

दोहा

झींगुर, सांप, उलूक, अज, महिषी, कोल, बखानि।
भेडि, काक, वृक, करभ, खर, श्वान, क्रूर-स्वर जानि।

झींगुर, साँप, उल्लू, बकरा, भैंस, सूअर, भेड, कौआ, वृक, (भेडिया) ऊँट, गदहा और कुत्ता, क्रूर-स्वर वाले समझो।

उदाहरण

कवित्त

झिल्ली ते रसीली जीली, रांटी हू की रट लीली,
स्यारि ते सवाई भूत भामिनी ते आगरी।
'केशौदास' भैंसन की भामिनी ते भासै भास,
खरी ते खरीसी धुनि ऊँटी ते उजागरी।
भेड़नि की मीड़ी मेड़, ऐंड़ न्यौरा नारिन की,
बोकी हूँ ते बाँकी, बनी काकन की कागरी।
सूकरी सकुचि, संकि कूकरियो मूक भई,
घू घू की घरनि को है, मोह नाग नागरी ॥४४॥

किसी कठोरवाणीवाली स्त्री का वर्णन करते हुए 'केशवदास' व्यग्यपूर्वक कहते है कि उसकी वाणी झिल्लो से भी बढकर रसीली और महीन है। उसने टिटहरी की रटन को भी निगल लिया है। उसकी वाणी स्यारिनी की वाणी से सवाई है और भूतिनी की बोली से बढकर है। उसको बोली भैस से भी अच्छी, गधो से भी तेज, और ऊँटनी से भी स्पष्ट है। उसकी बोली ने भेडो की बोली की मर्यादा तोड दी है और नकुलो की बोली का अभिमान तोड डाला है। उसकी वाणी बकरी की भाषा से भी सुन्दर है और कौए की काँव काँव, काँव) तो उसकी बोली के आगे गल ही गई है। उसकी बोलो के आगे शूकरी सकुचित और कुतिया चुप हो गई है। उल्लू की बोली उसको बोली के आगे क्या है, उसकी वाणी को सुनकर हथिनी भी मोहित हो जाती है।

१६—सुस्वरवर्णन

दोहा

कलरव, केकी, कोकिला, शुक, सारो, कलहंस ।
तंत्री कठनि आदिदै, शुभसुर दुदुभिवस ।।४५।।

कबूतर, मोर, कोयल, तोता, मेना, हस, वीणा आदि तार वाले बाजे, दुदुँभी (एकबाजा) और बासुरी सुन्दर स्वरवाले माने जाते हैं।

उदाहरण

कवित्त

केकिन की केका सुनि, काके न मथित मन,
मनमथ मनोरथ रथपथ सोहिये ।
कोकिला की काकलीन, कलित ललित बाग,
देखत न अनुराग उर अवरोहिये ।
कोकन की कारिका, कहत शुक सारिकानि,
'केशौदास' नारिका कुमारिका हू मोहिये ।
हंसमाला बोलत ही, तान की उतारि माल,
बोलें नन्दलाल सों न ऐसी बाल को हिये ।।४६।।

(केशवदास किसी नायिका की ओर से कहते है कि वर्षा में मोरो की ध्वनि सुनकर किसका मन मथित (चचल) नहीं हो जाता। मोरो की वह ध्वनि काम के मनोरथो के रथ के लिए पथ (मार्ग) स्वरूप है अर्थात् उसे सुनकर काम वासनाए चलायमान होती है। (बसत में) जब कोयलो को बोली से उपवन गू ज उठते हैं तब उन्हे देखते ही हृदय मे अनुराग बढ जाता है। उसी ऋतु मे जब तोते और मैना प्रेम की बातें करते है, तब स्त्री तो क्या, कुमारी कन्याएँ तक मोहित हो जाती हैं। (पर इस शरदऋतु मे) हसो के बोलते ही अपने मान की माला को उतार कर (मान छोड़कर) नन्दलाल (श्रीकृष्ण) से न बोले, भला ऐसा हृदय किस स्त्री का होगा ?

२०—मधुरवर्णन

दोहा

मधुर प्रियाधर, सोमकर, माखन, दाख, समान।
बालक बातै तोतरी, कविकुल उक्ति प्रमान ॥४७॥
महुवा, मिश्री, दूध, घृत, अति सिङ्गार रस मिष्ट।
ऊख, महूख, पियूख, गनि, केशव सांचे इष्ट ॥४८॥

केशव कहते है कि प्रिया के ओठ, चन्द्रमा की किरणें, मक्खन, दाख (किसमिस), बालक की तोतली वाणी, कवियो की उक्तियाँ, महुवा, मिश्री दूध, घी, शृगार रस, ऊख, शहद और अमृत मधुर माने जाते है।

उदाहरण

सवैया

खारिक खात न, माखन, दाख न दाड़िमहूं सह मेटि इठाई।
केशव ऊख मयूखहु दूखत, आईहौं तोपहँ छाड़ि जिठाई॥
तो रदनच्छदको रसरंचक, चाखिगये करि केहूं ढिठाई।
तादिनते उन राखी उठाइ समेत सुधा बसुधाकी मिठाई ॥४९॥

'केशवदास' कहते है कि जिस दिन से वह तेरे ओठो का धृष्टता-पूर्वक थोडा सा रस चख गये है। उस दिन से वह न तो छुहारा खाते हैं, न मक्खन खाते हैं, और न दाख। अनार की मित्रता भी उन्होने छोड दी है अर्थात् अनार भी रुचिकर नहीं होता। वह ऊख और महूख की भी निन्दा करते हैं। यह बात मै तुझसे अपने जेठेपन का ध्यान छोडकर कहने आई हू।

२१—अबल वर्णन

दोहा

पंगु, गुंग, रोगी, वणिक, भीत, भूखयुत, जानि।
अंध अनाथ अजादि शिशु, अबला; अबल बखानि ॥५०॥

लगड़ा, गूगा, रोगी, बनिया, डरा हुआ, भूखा, अधा, अनाथ, बकरी आदि का बच्चा और स्त्री को निर्बल कहा गया है ।

उदाहरण

कवित्त

खात न अघात सब जगत खवावत है,
द्रौपदी के साग-पात खात ही अघाने हौ ।
"केशौदास" नृपति सुता के सत भाय भये,
चोर ते चतुर्भुज चहूँ चक जाने हौ ।
मांगनेऊ, द्वारपाल, दास, दूत, सूत सुनौ,
काठमाहि कौन पाठ वेदन बखाने हौ ।
और हैं अनाथन के नाथ कोऊ रघुनाथ,
तुम तौ अनाथन के हाथ ही बिकाने हौ ।।५१।।

आपको सारा ससार खिलाता है, और आप कभी तृप्त नहीं होते परन्तु द्रोपदी के शक-पात से ही आप तृप्त हो गये । 'केशवदास' कहते है कि एक राजकन्या के सद्भाव के कारण आपने एक चोर राजकुमार के बदले अपना चतुर्भुज रूप दिखलाया, यह बात चारो ओर के सब लोग जानते है । आप राजा बलि के लिए भिक्षुक बने, उग्रसेन के यहाँ द्वारपाल बने, सेन भक्त के रूप मे दास हुए, पाडवो के दूत बने, अर्जुन का रथ हाँक कर आपने दूत का काँम किया और सदीपनि ऋषि के लिए जो काठ [लकडी] तोडने के लिए गये उसमे वेद पाठ का कौन सा गुण था ? हे रघुनाथ ! और कोई तो अनाथो का नाथ ही होगा, परन्तु आप तो अनाथो के हाथ बिक ही गये हैं ।

२२—बलिष्ठवर्णन

दोहा

पवन, पवनको पूत, अरु, परमेश्वर, सुरपाल ।
काम, भीम, बाली, हली, बलिराजा, पृथु, काल ।।५२।।

सिंह, बराह, गयन्द, गुरु, शेष, सती सब नारि ।
गरुड़, वेद माता, पिता, बली अदृष्ट, विचारि ॥५३॥

पवन अथवा वायु, पवन के पुत्र (श्री हनुमान जी), परमेश्वर, इन्द्र, कामदेव, भीम, बाल, हली (बलराम), बलि, राजापृथु, काल, सिंह, बाराह, (सूअर), गयन्द (हाथी) गुरु, शेष, सब सती स्त्रिया गरुड, वेद, माता, पिता और अदृष्ट (प्रारब्ध) इन्हे बलिष्ट या बलवान समझिए ।

उदाहरण

सवैया

बालि बिध्यो बलिराउ बँध्यो, कर शूलीके शूल कपाल थली है ।
काम जर्‍यो जग, काल पर्‍यो बँदि, शेषधर्‍यो विष हालाहली है ।
सिंधु मथ्यो, किल काली नथ्यो, कहि केशव इन्द्र कुचालचली है ।
रामहूँ की हरी रावण बाम, तिहूँपुर एक अदृष्टबली है ॥५४॥

बालि (राजा रामचन्द्र के बाणो से) बिद्ध हुआ, राजा बलि बाँधा गया, शूलो अर्थात् श्री शंकरजी के पास केवल शूल और मुंड-माला ही है । काम जला, काल, रावण के बन्दीगृह मे पडा, शेष को हालाहल विष खाना पडा समुद्र मथा गया, काली नाग नाथा गया और (केशवदास कहते है कि) इन्द्र मे (अहल्या के साथ) कुचाल चली । श्रीराम की स्त्री को रावण ने हरण किया, इसलिए (इन बलवानो की दशाओ को देखकर यही निश्चय होता है कि) तीनो लोको मे एक अदृष्ट अर्थात् प्रारब्ध या भाग्य ही बलवान है ।

२३—सत्य झूठवर्णन

दोहा

केशव चारिहुँ वेदको, मन क्रम वचन विचार ।
साचो एक अदृष्ट हरि, झूठो सब संसार ॥५५॥

'केशवदास' कहते है कि चारो वेदो को मन, क्रम, वचन मे ध्यान पूर्वक मनन करके देखा तो अदृष्ट अर्थात् भाग्य और हरि (भगवान्) को सच्चा पाया और सारा ससार झूठा प्रतीत हुआ ।

उदाहरण (१)

सवैया

हाथी न साथी न घोरे न चेरे न, गाउँ न ठाउँ को नाउँ बिलैहै ।
तात न मात न पुत्र न मित्र, न वित्त न अंगऊ संग न रैहै ।
केशव कामको 'राम' बिसारत और निकाम न कामहिं ऐहै ।
चेतुरे चेतु अजौ चितु अंतर अंतकलोक अकेलोहि जैहै ॥५६॥

तेरे साथी ये हाथी-घोडे और नौकर-चाकर नहीं है । न गाँव और घर ही तेरा साथ देगे, इनका तो नाम तक लुप्त हो जायगा । पिता, माता, पुत्र मित्र और धन मे से कोई भी तेरे साथ न रहेगा । 'केशवदास' कहते हैं कि तू काम आनेवाले राम को भूल रहा है और तो सब व्यर्थ है, तेरे काम न आवेंगे । अब भी मन मे सावधान हो जा, क्योकि यमलोक को तो तुझे अकेला ही जाना पडेगा ।

उदाहरण (२)

अनही ठीक को ठग, जानै ना कुठौर ठौर,
ताही पै ठगावै ठेलि जाही को ठगतु है ।
वाके डर तू निडर ! डग न डगत डरि,
डर के डरनि डगि डोंगी ज्यों डगतु है ।
ऐसे बसोबास ते उदास होय 'केशौदास',
केशौ न भजत कहि काहे को भगतु है ।
झूठो है रे झूठो जग राम की दोहाई, काहू,
साँचे को कियो है ताते साँचो सो लगतु है ॥५७॥

तू बेठिकाने का ठग है, ठौर-कुठौर नहीं पहचानता । जिसे हठ-पूर्वक ठगना चाहता है, उससे स्वय ही ठगा जाता है । अर्थात् जिस

पृष्ठ २२६, कवित्त ६

जानु, कटि, नाभि कूल, कठ पीठ, भुजमूल,
उरज करज रेख, रेखी बहु भाँति है।
दलित कपोल, रद ललित, अधर रुचि,
रसना-रसित रस, रोस में रिसात है।
लेटि लेटि लौटि पौटि, लपटाति बीच बीच,
हा हां, हूँ हूँ, नेति, नेति वाणी होति जाति है।
आलिंगन अंग अंग पीड़ियत, पद्मिनी के,
सौतिन के अंग अंग पीड़नि पिराति है॥ ६॥

पृष्ठ २५६ सवैया ४१

हाथ गह्यो, ब्रजनाथ सुभावही, छूटिगई धुरि धीरजताई,
पान भखै मुख नैन रचोरुचि, आरसी देखि कह्यो हम ठाई।
दै परिरम्भन मोहन को मन, मोहि लियो सजनी सुखदाई,
लाल गुपाल कपोल नखत्तत, तेरे दिये ते महाछवि छाई ॥४१॥

पृष्ठ २६३ दोहा २३

परम तरुणि यों शोभियत, परम ईश अरधङ्ग।
कल्पलता जैसी लसै, कल्प वृत्त के सङ्ग॥

पृष्ठ ६१ सवैया १०

भोर जगी वृषभानुसुता, अलसी बिलसी निशि कुंजबिहारी।
केशव पोंछति अंचलछोरनि, पीक सुलीक गई मिटिकारी॥
वंकलगे कुचबीच नखत्तत, देखि भई दृग दूनी लजारी।
मानौ वियोगबराह हन्यो युग, शैलको संधि मे इंगवैडारी॥

× × ×

पृष्ठ २६४ कवित्त १०

दुरि है क्यो भूषन बसन दुति यौवन की,
देह ही की जोति होति द्यौस ऐसो राति है।
नाह की सुवास लागै ह्वै है कैसी "केशव",
सुभाव ही की वास भौरभीर फोरखाति है।
देखि तेरी मूरति की, सूरति बिसूरति हौ,
लालन को दृग देखिबे का ललचाति है।
चलिहैं क्यों चन्द्रमुखी, कुचनि के भार भये,
कुचन के भार ते लचकि लङ्क जाति है॥१०॥

ससार को तू ठगना चाहता है, उसके फदे मे स्वय पड जाता है। हे निडर! इसके (पाप के) डर से तू डगभर भी विचलित हो कर नहीं डरता और अन्य सासारिक डरो से डोगी की तरह काँपता रहता है। 'केशवदास' कहते है कि तू इस ससार से उदासीन होकर केशव (परमात्मा) को क्यो नहीं भजता और उनसे दूर क्यो भागता है? श्रीराम की सौगन्ध, यह सारा ससार झूठा है परन्तु किसी सच्चे का बनाया हुआ है, इसलिए सच्चा प्रतीत होता है।

२५—मडल वर्णन

केशव कुडल मुद्रिका, बलया, बलय, बखानि।
आलबाल, परिवेष, रवि, मडल मडल जानि ॥५८॥

'केशवदास' कहते है कि कुण्डल (कान का बाला), मुद्रिका अगूठी), बलया (चूडी), बलय (ककण या कडा), आल बाल (थाला , परिवेष सूर्य तथा चन्द्रमा के चारो ओर प्रकाशयुक्त घेरा) और सूर्य मडल को मडलाकार समझना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

मणिमय आल बाल जलज जलज रवि,
मण्डल मे जैसे मति मोहै कवितान की।
जैसे सविशेष परिवेष मे अशेष रेख,
शोभित सुवेष सोम सीमा सुख दानिकी।
जैसे बङ्क लोचनि कलित कर ककननि,
बलित ललित दुति प्रगट प्रभानि की।
'केशौदास' ऐसे राजै, रास तै रसिक लाल,
आस-पास मंडली विराजै गोपिकान की ॥५९॥

जिस प्रकार मणियो के थाले के बीच कोई पौधा या कमल खडा हो जिसे देखकर कवियो की प्रतिभा भी मोहित हो जाती है, जिस प्रकार

सुन्दर वेश वाले सुखदायी चन्द्रमा परिवेष (प्रकाश युक्त घेरे) के बीच दिखलायी पडते हो, और जिस प्रकार किसी तिरछी दृष्टिवाली स्त्री के हाथो मे ककरण पडा हो जिसकी द्यु ति प्रत्यक्षरूप से प्रकाशित हो रही हो 'केशवदास' कहते हे कि ठीक उसी प्रकार रसिक लाल (श्रीकृष्ण) रास-मडल मे खडे हुए दिखलायी पडते है। उनके चारो ओर गोपियो की मडली सुशोभित हो रही है।

२६, २७ अगति सदागति वर्णन

अगति सिधु, गिरि, ताल, तरु, वापी, कूप, बखानि।
महानदी, नद, पथ, जग, पवन सदागति जानि ॥६०॥

सिधु, पहाड, ताल, पेड, वापी (बावली) और कुआँ आदि को अगति अर्थात् अचल समझो तथा महानदी, नद, पथ, जग और पवन को सदागति (सदैव चलनेवाले) जानो।

उदाहरण

कवित्त

पथ न थकत मन मनोरथ रथन के,
'केशौदास' जगमग जैसे गाये गीत मै।
पवन विचार चक्र चक्रमन चित्त चढ़ि,
भूतल अकाश भ्रमै धाम जल शीत मै।
कोलौ राखौं थिर बपु बापी, कूप, सर सम,
हरि बिन कीन्हे बहु बासर व्यतीत मैं।
ज्ञान गिरि कोरि तोरि लाज तरु जाय मिलौ,
आपही ते आपगा ज्यो आपनिधि प्रीत मै ॥६१॥

'केशवदास' (किसी स्त्री की ओर से उसकी सखी से कहते हैं कि) मेरे मनोरथो के रथो का पथ कभी रुकता नहीं। अर्थात् मेरे मन मे अनेक मनोरथ उठा ही करते है और ससार का जैसा नियम है तथा गीताओ (ग्रन्थो मे) भी जैसा कहा गया है, मेरे विचार पवन पर

और मेरा चित्त दिशाओ के चाक पर चढ कर, घाम, वर्षा और जाडे का ध्यान न रखते हुए, पृथ्वी से लेकर आकाश तक का चक्कर लगाया करते है। मे अपने शरीर को (वापी, कुआँ और तालाब आदि की तरह कब तक स्थिर) रखू। इसलिए मैंने सोचा है कि मै ज्ञान के पहाड को फोडकर और लज्जा के वृक्ष को तोडकर उनसे (प्रियतम से) इस तरह जा मिलू जैसे नदी पहाडो और वृक्षो को तोडती हुई स्वय समुद्र मे जा मिलती है।

२८—दानि वर्णन

दोहा

गौरि, गिरीश, गणेश, विधि गिरा, ग्रहन को ईश।
चिन्तामणि सुरवृत्त, गो, जगमाता, जगदीश ॥६२॥
रामचन्द्र, हरिश्चन्द्र, नल, परशुराम दुखहर्ण।
केशवदास, दधीचि, पृथु, बलि, सुविभीषण, कर्ण ॥६३॥
भोज, विक्रमादित्य, नृप, जगदेव रणधीर।
दानिन हूँ के दानि, दिन, इन्द्रजीत बरवीर ॥६४॥

गौरी (श्री पार्वतीजी , गिरीश (श्री शङ्कर जी), श्री गणेश, विधि (श्री ब्रह्मा जी), सूर्यदेव, चिन्तामणि, सुरवृक्ष (कल्पवृक्ष), सुरगो (कामधेनु), जगमाता (श्री लक्ष्मीजी), जगदीश (श्री नारायण), श्रीरामचन्द्र, श्रीहरिश्चन्द्र, राजानल, श्री परशुराम, दधीचि, राजापृथु, राजा बलि, विभीषण, करण, राजा भोज, राजा विक्रमादित्य, राजा रणधीर जगद्देव (राजा इन्द्रजीत के बडे भाई) और दानियो के भी दानी प्रतिदिन दान करनेवाले इन्द्रजीत तथा बीरवल दानी माने जाते है।

उदाहरण

गौरी का दान

दोहा

पावक, फनि, विष, भस्म, मुख, हरपवर्गमय मानु।
देत जु है अपवर्ग कहुँ, पारवतीपति जानु ॥६५॥

पावक, फणि (शेषनाग विष, भस्म और मु ड धारण करनेवाले शङ्करजी पवर्गमय समझो अर्थात् उनके पास वे ही वस्तुएँ है जो पवर्ग (प, फ, ब, भ, म) से आरम्भ होती है, अत' वह क्या दे सकते है। वह जो अपवर्ग अर्थात् मुक्ति देते है, सो पार्वती के स्वामी होने के कारण जानो। भाव यह है कि अपवर्ग की देनेवाली वास्तव मे पार्वती है परन्तु वह स्वय न देकर अपने पति से दिलवाती है।

गणेश जी का दान वर्णन

कवित्त

बालक मृणालनि ज्यों तोरि डारै सब काल,
कठिन कराल त्यो अकाल दीह दुख को।
विपति हरत हठि पद्मिनी के पति सम,
पङ्क ज्यों पताल पेलि पठवै कलुष को।
दूर कै कलङ्क अङ्क भव सीस ससि सम,
राखत है 'केशौदास' दास के वपुष को।
साकरे की सांकरन सनमुख होत तोरै,
दसमुख मुख जावै, गजमुख मुख को ॥६६॥

जिस प्रकार कमल नाल को, हाथी का बच्चा, प्रत्येक दशा मे तोड डालता है, उसी प्रकार श्रीगणेशजी अकाल के भयकर दुखो को तोड डालते है। विपत्तियो को, कमल के पत्ते की भाँति, सरलता पूर्वक तोड डालते है और पापको, कीचड की तरह दबाकर, पाताल मे भेज देते है। 'केशवदास' कहते है कि वह अपने दास (भक्त) के शरीर से कलक को दूर करके श्रीशिवजी के मस्तक पर रहनेवाले (कलक रहित) चन्द्रमा के समान करके उसकी रक्षा किया करते है। सामने जाते ही वह विपत्तियो की जजीर को तोड डालते है? इसीलिए दशोदिशाओ के लोग श्री गणेश जी का मुख देखा करते है।

महादेव जी का दान वर्णन

कवित्त

कांपि उठ्यो आप निधि, तपनहि ताप चढी,
सीरी ये शरीर गति भई रजनीश की ।
अजहूँ न ऊँचौ चाहै अनल मलिन मुख,
लागि रही लाज मुख मानो मन बीस की ।
छबि सो छबीली, लच्छि छाती मे छपाई हरि,
छूट गई दानि गति कोटिहू तैतीस की ।
'केशौदास' तेही काल कारोई ह्वै आयो काल,
सुनत श्रवण बकसीस एक ईश की ॥६७॥

'केशवदास' कहते है कि श्री शकर जी के एक दान का समाचार कानो से सुनते ही समुद्र काँप उठा, (क्योकि उसे भय हुआ कि मै रत्ना कर ठहरा, मेरे सभी रत्न दान मे न दे डाले)। सूर्य को बुखार चढ आया। उन्हे अपने घोडे का भय लगा कि दान मे न दे दें)। चन्द्रमा का शरीर ठडा पड गया (कि कहीं मेरा असृत न दे डाले)। मलिन मुख वाले अग्नि तो अब भी (मारे भय के) अपना सिर ऊँचा नही करते और उनके मुख मे जो कालिख लगी रहती है वह मानो बीसोमन लज्जा की कारिख है और हरि (विष्णु) ने सुन्दरी लक्ष्मी जी को छाती मे छिपा लिया (कि कहीं इन्हे भी न दे डालें) तथा वे तेतीसो करोड देवताओ की दानशीलता भूल गई और काल भी उसी समय काला पड गया।

विधि का दान वर्णन

कवित्त

आशीविष, राकसन, दैयतन दै पताल,
सुरन, नरन, दियो दिवि, भू, निकेतु है।
थिर चर जीवन को दीन्ही वृत्ति 'केशौदास'
दीवे कहँ और कहो कोऊ कहा हेतु है।

सीत, बात, तोय, तेज आवत समय पाय,
काहू पै न नाखो जाइ ऐसो बांधो सेतु है।
अब, तब, जब, कब, जहाँ देखियत,
विधिही को दीन्हो, सब सबही को देतु है ॥६८॥

सर्पो, राक्षसो और दैत्य को पाताल लोक दिया तथा देवातओ को स्वर्ग और मनुष्यो को रहने के लिए भू लोक प्रदान किया। 'केशवदास' कहते है कि चर और अचर जीवो की वृत्ति (जीवका) प्रदान की। बतलाओ, अब दान का और दूसरा हेतु क्या हो सकता है ? (क्योकि जीवका जो सबसे बढकर दान है, वह तो वह दे ही चुके)। अपने-अपने समय पर शीत, वायु, पानो (वर्षा) और तेज (गरमी) सभी प्राप्त होते है और इनका ऐसा सेतु (मर्यादा) बाँध है कि कोई उल्लघन नहीं कर सकता। अभी या भूत काल मे, जहाँ-कहीं दान दिया जाता है, वह सब ब्रह्माजी ही का दिया हुआ है, जिसे सब लोग सब को दिया करते है।

गिरा का दान वर्णन

कवित्त

बानी जगरानी की उदारता बखानी जाय,
ऐसी मति उदित उदार कौन की भई।
देवता प्रसिद्ध सिद्ध ऋषिराज तप वृद्ध,
कहि कहि हारे सब कहि न काहू लई।
भावी, भूत, वर्त्तमान, जगत बखानत है,
'केशौदास' क्यों हूँ न बखानी काहू पैगई।
वर्णे पति चारिमुख, पूत वर्णे पाँच मुख,
नाती वर्णे षटमुख, तदपि नई नई ॥६९॥

जगत की स्वामिनी श्री सरस्वती जी की उदारता का जो वर्णन कर सके, ऐसी उदार बुद्धि किसकी हुई है ? बडे-बडे प्रसिद्ध देवता,

सिद्ध लोग, तथा तपोवृद्ध ऋषिराज उनकी उदारता का वर्णन करते करते हार गये, परन्तु कोई भी वर्णन न कर सका। भावी, भूत, वर्त्तमान जगत सभी ने उनकी उदारता का वर्णन करने की चेष्टा की परन्तु किसी से भी वर्णन करते न बना। उस उदारता का वर्णन उनके पति ब्रह्माजी चार मुख से करते है, पुत्र महादेव जी पाँच मुख से करते है और नाती (सोमकार्त्तिकेय) छ मुख से करते है, परन्तु फिर भी दिन-दिन नई ही बनी रहती है।

सूर्य का दान वर्णन

बाधक विविधि व्याधि, त्रिविध अधिक आधि,
वेद उपवेद बध बधन विधानु है।
जग पारावार पार करत अपार नर,
पूजत परम पद पावत प्रमानु है।
पुरुष पुरान कहै, पुरुष पुराने सब,
पूरण पुराण सुने निगम निदान है।
भोगवान, भागवान, भगतन भगवान,
करिवे को 'केशौदास' भानु भागवान, है ॥७०॥

'केशवदास' कहते हैं कि सूर्यदेव विविध व्याधियो के बाधक या रोकने वाले है, और अधिकतर आधियो (मानसिक रोगो) को भी दूर करते है तथा वेद और उपवेद के नियमो के विधायक है अर्थात् वैदिक कार्य उन्हीं की चाल पर निर्भर रहते है। पुराने सभी लोग उन्हे सबसे पुराना कहते है और सम्पूर्ण पुराणो के मूल कारण है अर्थात् वे भी उन्हीं की चाल पर निर्भर रहते है। सूर्य भगवान अपने भक्तो भोगवान भाग्यवान और ऐश्वर्यशाली बनाने के लिए ही है।

परशुरामजी को दान

सवैया

जो धरणी हिरण्याक्ष हरी, वरयज्ञ वराह छड़ाइ लई जू।
दानव मानव देवनिके जु, तपोबल केहूँ न हाथ भजी जू॥

जालगि केशव भारतभो भुव, पारथ जीवनि बीजु बई जू।
सातौ समुद्रनि मुद्रित राम, सो बिप्रन बार अनेक दई जू ॥

केशवदास कहते हैं कि जिस पृथ्वी को हिरण्याक्ष ने हरण किया और जिसे वाराजी ने छीना। जिसके लिए राक्षस, मनुष्य और देवताओ ने अनेक तप किये परन्तु किसी के हाथ की न हुई। जिसके लिए महाभारत का युद्ध हुआ जिसमे अर्जुन ने जीवो के बीज से बो दिये अर्थात् इतने जीव मारे कि पृथ्वी खेत की तरह हो गई। उस सातो समुदो से युक्त पृथ्वी को परशुराम ने ब्राह्मणो को अनेक बार दान म दिया।

श्री रामचन्द्र का दान वर्णन (१)

कवित्त

पूरन पुराण अरु पुरुष पुराने परि—
पूरन बतावै न बतावै और उक्ति को।
दरसन देत जिन्हे दरसन रामझै न,
नेति नेति कहै वेद छाड़ि आन युक्ति को।
जानि यह केशवदास' अनुदिन राम राम
रटत रहत न डरत पुनरुक्ति को।
रूप देई अनमाही, गुन देइ गरिमाहि,
भक्ति देई महि माहि, नाम देइ मुक्ति को ॥७२॥

सभी पुराण ग्रन्थ और पुराने लोग जिन्हे सब प्रकार से पूर्ण बतलाते है और इस उक्ति को छोड कर कुछ नहीं कहते। जिनके रहस्य को दर्शनशास्त्र भी नहीं जान पाते, वह (अपने भक्तो को दर्शन देते हैं। जिनके सम्बन्ध मे वेद और कुछ न कह सकने के कारण केवल 'नेति, नेति, अर्थात् (इनके रहस्य का कोई अन्त नहीं है) कहा करते हैं। 'केशवदास' कहते है कि यही जान कर (कि वेद भी उनका रहस्य नहीं बतला सकते) मै दिन प्रति दिन "राम-राम" रटता रहता हूँ

और पुनरुक्ति (एक ही शब्द को बारबार दुहराने के) दोष को नहीं डरता, (क्योकि पुनरुक्ति दोष माना गया है)। उन राम का रूप-दर्शन अणिमा सिद्धि देता है, उनका गुणगान गरिमा सिद्धि प्रदान करता है, उनकी भक्ति महिमा प्रदान करती है और उनका नाम मुक्ति प्रदान करता है।

सवैया

जो शतयज्ञ करे करी इद्रसो, सो प्रभुता कपिपुज सों कीनी।
ईश दई जु दये दशशीश, सुलक विभीषणै ऐसेहि दीनी ॥
दानकथा रघुनाथ की केशव, को बरनै रस अद्भुत भीनी।
जो गति ऊरधरेतन की सुतो औधके सूकर कूकर लीनी ॥७३॥

जो प्रभुता इन्द्र को सौ यज्ञो के करने पर दी, वह बन्दरो को यो ही प्रदान कर दी। जिस लका को शिवजी ने रावण को अपने दशो शिरो को चढाने पर दिया, उसे उन्होने विभीषण को ऐसे ही दे दिया। 'केशवदास' कहते है कि इसलिए श्री रामचन्द्र की अद्भुत रस मे सनी हुई दान की कथा का कौन वर्णन कर सकता है? जो गति उद्धरेता अर्थात् योगियो को प्राप्त होती है, वही अयोध्या के सुअरो और कुत्तो तक ने (उनकी कृपा से) प्राप्त कर ली।

राजा बलिका दान वर्णन।

सवैया

कैटभ सो, नरकासुर सो, पल मे मधु सो, मुर सो जेहि मारयो।
लोक चतुर्दश रक्षक केशव, पूरण वेद पुराण विचारयो ॥
श्री कमला-कुच-कुकुम मडन पडित देव अदेव निहारयो।
सो कर मागन को बलि पै करतारहु को करतार पसारयो ॥७४॥

जिस हाथ ने कैट, नरक, मधु और मुर जैसे राक्षसो को पल भर में मार डाला। 'केशवदास' कहते हैं कि वेद तथा पुराणो मे जिसे चौदहो लोको का रक्षक कहा है। जो हाथ श्री लक्ष्मी जी के कुच मडल

पर कु कुम लगाने मे बडा पडित है और जिसके प्रभाव के देव, अदेव (सुरअसुर) सबो ने देखा है, ब्रह्मा को भी बनाने वाले ईश्वर ने उसी हाथ को राजा बलि के आगे फैलाया ।

हरिचंद का दान वर्णन

मातुके मोह पिता परितोपन, केवल राम भरे रिसभारे ।
औगुण एकही अर्जुनके, छितिमडल के सव छत्रिन मारे ॥
देवपुरी कह औधपुरी जन, केशवदास बड़े अरु बारे ।
सूकर कूकर और सबै हरिचदकी सत्य सदेह सिधारे ॥७५॥

अपनी माता के अपराध पर और पिता को सतुष्ट करने के लिए परशुराम अत्यन्त क्रोध मे भर गये और एक सहस्त्रार्जुन के अपराध करने पर उन्होने पृथ्वी भर के सब क्षत्रियो को मार डाला । 'केशवदास' कहते है कि उधर राजा हरिश्चन्द्र के सत्य के कारण अयोध्या के बडे छोटे सभी मनुष्य तथा कुत्ते सुअर तक स्वर्ग पहुँच गये ।

राजा अमरसिंह का दान वर्णन

कवित्त

कारे कारे तम कैसे, प्रीतम सुधारे बिधि,
बारि बारि डारेगिरि 'केशौदास' भाखे है ।
थोरे थोरे मदनि कपोल फूले थूले थूले,
डोलै जल, थल बल थानुसुत नाखे है ।
घंटे घननात, छननात घने घुघुरुन,
भौंरे भननात भुवपति अभिलाषे है ।
दुवन दरिद्र दल दलन अमरसिंह,
ऐसे ऐसे हाथी ये हथ्यार करि राखे है ॥७६॥

'केशवदास' कहते है कि जो काले-काले और जिन्हे ब्रह्मा ने तम अर्थात् राहु के मित्र जैसा बनाया है । जिनपर बडे-बडे पहाड़ निछावर कये जा सकते है । जिनके कपोल थोडे-थोडे मद से अच्छी तरह फूले

हुए है, जो जल, थल मे घूमते है और बल मे जो श्रीगणेश से बढ गये है। जिनकी पीठो पर घन्टे घनघनाते रहते है तथा जिनके घुँघरू छन-छन करके बजते रहते है तथा भौंरे जिनके मस्तको पर (मद के) कारण। चारो ओर गूँजते रहते है, जिनके पाने की इच्छा बडे बडे राजा करते हैं, ऐसे-ऐसे अनेक हाथियो को राजा अमरसिह ने दरिद्रो की दरिद्रता के दल को मिटाने के लिए हथियार बना रखा है, अर्थात् इतने हाथी देते है कि उनकी दरिद्रता दूर हो जाती है।

वीरवर का दान (१)

सवैया

पापकै पुंज पखावज केशव शोकके शख सुने सुखमा मै।
भू ठिकी झालरि झाझ अलोककी आवझयथन जानी जाममै ॥
भेदकी भेरि बड़ेडरके डफ, कौतुकभो कलिके कुरमामै।
जूझतही बर बीरवजे बहुदारिदके दरबार दमामै ॥७७॥

'केशवदास' कहते है कि वीरवर 'बीरबल' के युद्ध मे मरते ही कलि-युग के घर मे उत्सव होने लगे। पाप के पखावज और शोक के शख बजने लगे। झूठ की झालरें लटकाई गई, निन्दा के झांझे बजीं तथा और भी कुविचार के ताशो को बजते हुए मैने देखा। भॆद की भेरी तथा डर का डफ बजा और दरिद्रता के दरबार मे तो नगाडे ही बजने लगे। क्योकि वह उसी के बडे भारी शत्रु थे।

(२)

नाक रसातल भूधर सिधु नदी नद लोक रचे दिशिचारी।
केशव देव अदेव रचे, नरदेव रचे रचना न नेवारी ॥
रचिकै नरनाह बलीबर बीर भयो, कृतकृत्य बडो व्रतधारी।
दै करतारपनो कर ताहि दई, करतार दुवौ कर तारी ॥७८॥

'केशवदास' कहते है कि ब्रह्मा ने स्वर्ग, नर्क, पहाड, समुद्र, नदी, नद और चौदहो लोक बनाये। फिर देवता राक्षस और मनुष्य बनाये

और अपना निर्माण कार्य बन्द नहीं किया। परन्तु जब उन्होने वीर वृतधारी वीरबल को बनाया तो उन्हे बनाने के बाद वह कृतकृत्य हो गये और अपना करतारपन इनको देकर दोनो हाथो से ताली बजा दी। (अपना समकक्ष व्यक्ति पाकर और अपने कार्य का भार उसे देकर लोग ताली बजाकर कहते है कि 'चलो छुट्टी हुई' और सतोष की सास लेते है, यही भाव है)

विभीषण का दान वर्णन।

केशव कैसहु बारिधि बांधि कहा भयो ऋच्छनि जो छितिछाई।
सूरज को सुत बालि को बालक को नल नील कहो यहि ठाई॥
को हनुमन्त कितेक बली यमहुँ पहँ जोर लई जो न जाई।
दूषण दूषण भूषण भूषण लक विभीषण के मत पाई॥७६॥

'केशवदास' कहते है कि किसी प्रकार समुद्र का पुल बाधकर रीछ लका की सब भूमि पर छा गये तो क्या हुआ। सुग्रीव तथा नल नील ने भी जाकर वहाँ क्या किया? हनुमान जी कितने जैसे, बलवानो से भी जो प्राप्त न की गई, उसी लका को दूषण के दूषण और भूषण के भूषण श्री रामचन्द्र ने विभीषण के मत से ही प्राप्त की।

———

सातवाँ- प्रभाव

भूमि-भूषण वर्णन

दोहा

देश, नगर बन, बाग गिरि, आश्रम, सरिता, ताल ।
रवि, शशि सांगर, भूमिके, भूषण, ऋतु सब काल ।।१।।

देश नगर, वन, बाग, पर्वत, आश्रम, नदी, तालाब, सूर्य और चन्द्रमा का उदय-अस्त, समुद्र, छहो ऋतुए तथा बारहो मास-ये भूमि भूषण कहलाते है ।

देश वर्णन ।

दोहा

रत्नखानि, पशु, पच्छि, वसु, वसन, सुगन्ध, सुवेश ।
नदी, नगर, गढ़, वरणिये, भूपित भाषा देश ।।२।।

किसी देश के वर्णन करने मे रत्नखानि, पशु, पक्षी, धन, वस्त्र, सुगन्ध, सुन्दर शोभा, नदी, नगर, किले, भाषा तथा पहनावे का वर्णन करना चाहिए ।

उदाहरण

कवित्त

आछे आछे असन, बसन, बसु' वासु, पशु,
दान, सनमान, यान, बाहन बखनिये ।
लोग, भोग, योग, भाग बाग राग रूप युत,
भूषनति भूपित, सुभाषा मुख जानिये ।
सातौ पुरी तीरथ, सरित, सब गगादिक,
'केशौदास, पूरण पुराण गुण गानिये ।
गोपाचल ऐसो दुर्ग राजा मान सिंह जू को,
देशनि की मणि महि मध्यदेश मानिये ।।३।।

'केशवदास' कहते है कि जहाँ अच्छे-अच्छे भोजन, वस्त्र, धन घर तथा पशु प्राप्त होते है। जहाँ दान, सम्मान होता रहता है और जहाँ अच्छी-अच्छी सवारियाँ और रथ इत्यादि तथा वाहन घोडे इत्यादि मिलते है। जहाँ के लोग, भोग योग, भाग्य, राग प्रेम) तथा रूप (सौंदर्य) से युक्त रहते है और जिनके मुख मे अलकारो से युक्त सुन्दर भाषा रहती है। अर्थात् जो अलकारमयी सुन्दर भाषा बोलते है। जहाँ राजा मानसिह का 'गोपाचल' ऐसा दुर्ग है, उसी मध्य देश को देशो का मुकुटमणि अर्थात् सब देशो मे श्रेष्ठ समझना चाहिए।

नगर वर्णन

दोहा

खाई, कोट, अटा, ध्वजा, वापी, कूप, तड़ाग।
वारनारि, असती, सती, वरणहु नगर सभाग ॥४॥

हे सभाग ! नगर का वर्णन करते समय खाई, कोट (किला) अटा, ध्वाजा, वापी, कुआ, तालाब, वेश्या, असती (परकीया ' तथा सती (स्वकीया) का वर्णन करो। [सभाग को सम्बोधन न माना जाय तो यह अर्थ होगा कि 'नगर को भिन्न भिन्न भागो सहित वर्णन करो']

उदाहरण

कवित्त

चहूँ भाग बाग गन मानहु सघन घन,
शोभा की सी शाला, हंस माला सी सरित बर।
ऊँचे ऊँचे अटनि पताका अति ऊँची जनु,
कौशिक की कन्ही गंग खेलत तरलतर।
आपने सुखनि आगे निन्दत नरेन्द्र और,
घर घर देखियत देवता से नारि नर।
'केशौदास' त्रास जहां केवल अदृष्ट ही को,
बारिये नगर और ओरछा नगर पर ॥५॥

जहाँ पर चारो ओर सुन्दर बाग और वन ऐसे छाए रहते है मानो घने बादल छाये हो, जहाँ शोभा की घर तथा हसमाला जैसी सुन्दर नदी (बेतवा) बहती है। ऊँचे-ऊँचे महलो पर ऊँची-ऊँची पताकाए तरल कौशिकी नदी सी खेलती हुई जान पडती है। जहाँ अपने सुखो के आगे राजाओ के सुखो की भी निन्दा करनेवाले अर्थात् राजाओ से भी बढकर सुखी, देवता जैसे स्त्री-पुरुष घर-घर मे दिखलाई पडते है। 'केशवदास' कहते है कि जहाँ केवल अदृष्ट (प्रारब्ध या भाग्य) का ही त्रास है, उस ओरछा नगर पर ससार के और नगरो को निछावर कर देना चाहिए।

वनवर्णन

दोहा

सुरभी, इभ, वनजीव बहु, भूतप्रेत भय भीर।
भिल्लभवन, वल्ली, विटप, दव वन वरणहु धीर ॥६॥

हे धीर ! वन का वर्णन करते समय सुर भी (चमरी गाय), इभ (हाथी), बनैले जीव-जन्तु, भूत-प्रेतो की भीड़ भीलो के घर, लताए, वृक्ष और दावाग्नि का वर्णन करो।

उदाहरण

कवित्त

'केशौदास' ओड़छे के आस-पास तीस कोस,
'तु गारण्य, नाम वन बैरी को अजीत है।
विंध्य कैसो बंधु वर वारन वलित, बाघ,
बानर, बराह बहु, भिल्लन अभीत है।
यम की जमाति किधौं जामवंत कैसो दल,
महिष सुखद स्वच्छ रिच्छन को मीत है।
अचल अनलवंत, सिंधु सुरसरित युत,
शंभु कैसो जटाजूट परम पुनीत है ॥७॥

'केशवदास' कहते है कि ओडछा नगर के आस-पास तीस कोस तक 'जो तुङ्गारण्य' नाम का वन है, वह शत्रुओ के लिए अजीत है अर्थात् शत्रु उसे नहीं जीत सकते। वह जङ्गल विध्य वन का भाई सा प्रतीत होता है और वहाँ बहुत से हाथी, बाघ, बन्दर और सूअर रहते है तथा वह जङ्गल भीलो के लिए निडर स्थान है। (वहाँ लुटेरे भील बिना किसी डर के छिप सकते है)। यमराज के दल अथवा जामवन्त के गण जैसे भैसे वहाँ हैं और स्वच्छद विचरने वाले रीछो का वह मित्र है अतएव उन्हे सुख देनेवाला है। वहाँ के पहाड अग्नि युक्त है और वहाँ सिंधु नदी बहती है इसलिए ऐसा जान पडता है कि वह वन श्रीशकर के गङ्गा युक्त जटा जूट के समान पवित्र है क्योकि उनके मस्तक पर भी अनल और गङ्गाजी हैं।

बाग वर्णन

दोहा

ललित लता, तरुवर, कुसुम, कोकिल, कलरव, मोर।
बरनि बाग अनुराग स्यों, भँवर भँवत चहुँ ओर ॥८॥

सुन्दर लताए, पेड, पुष्प, कोयल, कबूतर और मोर पक्षी तथा चारो ओर घूमते हुए भौंरो का उल्लेख करते हुए अनुरागपूर्वक बाग का वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण
(कवित्त)

सहित सुदरशन करुणा कलित कम,
लासन बिलास मधुवन मीत मानिये।
सोहिये अपर्णा रूप मंजरी और नीलकंठ,
'केशौदास' प्रगट अशोक उर आनिये।
रंभा स्यौ सदंभ बोलै मंजु घोषा उरबसी,
हंस फूले सुमन स सब सुखदानिये।
देव को दिवान सो प्रवीणराय जू को बाग,
इन्द्र के समान तहाँ इन्द्रजीत जानिये ॥९॥

'केशवदास' कहते है कि देवसभा के समान ही प्रवीण राय का बाग भी है, जिसमे इन्द्र के समान राजा इन्द्रजीत सिंह रहा करते हैं। देव सभा मे जिस प्रकार सुदर्शन-चक्रधारी भगवान करुणाशील श्रीविष्णु रहते है, उसी प्रकार इस बाग मे भी सुदर्शन और करुणा के वृक्ष हैं। वहाँ (देव-सभा मे) कमलासन (ब्रह्मा) का विलास है तो यहाँ (इस बाग मे भी) कमल तथा असना (एक प्रकार का वृक्ष) की छटा है। देवसभा मे मधुवन-मीत (श्रीकृष्ण) रहते हैं और इस बाग को स्वय मधुवन का मित्र समझिए। वहाँ रूपमन्जरी और अपर्णा (पार्वतीजी) सहित नीलकठ (श्रीशंकर जी) सुशोभित होते हैं तो यहाँ भी अपर्णा (करील), रूप मंजरी, और नीलकण्ठ (मोर अथवा नीलकठ पक्षी) शोभा देते हैं। देवसभा में सभी प्रकटरूप से अशोक अर्थात् शोक रहित या आनन्दित रहते हैं तो यहाँ (इस बाग मे) अशोक के वृक्ष हैं, देवसभा मे रभा, मजुघोषा, उरवसी अप्सराएँ अभिमान भरी बातें करती है तो यहाँ इस बाग मे रंभा (केला) के वृक्ष है और मजुघोषा (सुमधुर बोलने वाली कोयल) है, जिसकी वाणी लोगो के उरवसी (हृदय मे बसी) रहती है। वहाँ हस अर्थात् सूर्य देवता हैं तो यहाँ (इस बगीचे मे भी) हस पक्षी हैं। वहाँ सुमनस अर्थात् प्रसन्न मनवाले देवता सब सुख देने वाले है तो यहाँ भी सुमन अर्थात् पुष्प खिले हुए जो सबको सुख दिया करते हैं।

गिरि वर्णन

दोहा

तुङ्ग शृङ्ग दीरघ दरी, सिद्ध, सुन्दरी, धातु।
सुर नरयुत गिरि वरणिये, औषधि निरझर पातु ॥१०॥

पहाड का वर्णन करते समय ऊँची चोटी, गहरी गुफाएँ, सिद्धो की स्त्रियाँ, धातु (लोहा, सोना इत्यादि) देवता और मनुष्य, औषधियाँ तथा झरनो के गिरने का वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

रामचन्द्र कीन्हें तेरे अरिकुल अकुलाइ,
मेरु के समान आन अचल घरीनि मे।
सारो, शुक, हंस, पिक, कोकिला, कपोत, मृग,
"केशौदास" कहूँ हय करभ करीनि मे।
डारे कहूँ हार टूटे राते पीरे पट छूटे,
फूटे है सुगन्ध घड़ू स्रवत तरीनि मे।
देखियत शिखर शिखर प्रति देवता से,
सुन्दर कुँवर और सुन्दरी दरीनि मे ॥११॥

'केशवदास' कहते है कि 'हे रामचन्द्र जी ! आपके शत्रुओ ने व्याकुल होकर अन्य पहाडो को ही कुछ भी घड़ियो मे (अल्पकाल मे) सुमेरु जैसा बना दिया है। वे शत्रुगण अपने साथ (भागते समय) मैना, तोता, हस, पिक, कोयल, कबूतर, हिरन, घोडे और बच्चे सहित हाथी ले आये हैं। (वे सब जहाँ देखो वहाँ दिखलाई देते हैं) कहीं पर किसी का हार टूटा पडा है तो कहीं लाल-पीले कपडे छितराये हुये दिखलाई पडते हैं। कहीं सुगन्धित द्रव्यो से भरे घडे फूट गये हैं जिनमे से वह सुगन्धित द्रव पदार्थ तलहटी तक बह रहा है वहाँ के शिखर-शिखर पर बैठे हुए सुन्दर राजकुमार देवता से दिखलाई पडती है और गुफाओ मे उनकी सुन्दरी स्त्रियाँ दिखलाई पडती है ।

आश्रम वर्णन

होमधूम युत वरणिये, ब्रह्मघोष मुनिवास।
सिंहादिक मृगमोर अहि, इभ शुभ बैर विनास ॥१२॥

आश्रम का वर्णन करते समय धुआ सहित होम, ब्राह्मणो का वेद पाठ, मुनियों का निवास, तथा सिंह आदि हिंसकजन्तुओ और मृगो (पशुओ) तथा हाथियो के, मोर और साँपो के स्वाभाविक बैर-

विनाश का वर्णन करना चाहिए। (भाव यह है कि आश्रम मे जन्तुओ का स्वाभाविक बैर भी नष्ट हो जाता है और वे प्रेम पूर्वक रहने लगते हैं।

उदाहरण

कवित्त

'केशवदास' मृगज बछेरू चूषैं बाघनीनि,
चाटत सुरभि बाघ बालक बदन है।
सिंहन की सटा ऐंचै कलभ करनि करि,
सिंहन को आसन गयद को रदन है।
फणी के फणनि पर नाचत मुदित मोर,
क्रोध न विरोध जहाँ मद न मदन है।
बानर फिरत डोरे डोरे अन्ध तापसन,
ऋषिको निवास कैधौं शिवको सदन है ॥१३॥

'केशवदास' कहते हैं कि मृगो के बच्चे बाघिनियो का दूध पी रहे हैं और गाय बाघ के बच्चे का मुख चाटती है। सिंहो की जटाओ को हाथी के बच्चे सूँडो से खींच रहे हैं और हाथी के दाँतो पर सिंह का आसन है। साँपो के फनो पर मुदित मोर नाच रहे हैं। यहाँ न क्रोध है, न किसी का किसी से विरोध या वैर है, न मद है और न मदन अर्थात् काम पीडा ही है। यहाँ पर बन्दर अन्धे तपस्वियो को हाथ पकड कर जहा वे जाना चाहते हैं, वहाँ ले जाते हुये दिखलाई पड़ते हैं। यह ऋषि का आश्रम है अथवा श्री शकर जी का निवास स्थान है; क्योकि वहाँ भी नन्दी (बैल) (शिवाजी का वाहन) सिह (पार्वती जी का वाहन), मोर (सोमकार्त्तिकेय का वाहन), चूहा (श्रीगणेशजी का वाहन) और गजमुख होने के कारण स्वय गणेशजी अपना स्वाभाविक वैर-विरोध छोडकर प्रेम से रहते हैं।

सरिता वर्णन

दोहा

जलचर, हय, गय, जलज तट, यज्ञ कुण्ड मुनिवास ।
स्नान, दान, पावन, नदी, वरनिय केशौदास ।।१४।।

'केशवदास' कहते हैं कि पवित्र सरिता का वर्णन करते समय जल के जीव, जल के हाथी तथा घोडे, कमल, किनारे पर बने हुए यज्ञ कुण्ड तथा मुनियो का निवास, स्नान और दान इत्यादि का वर्णन करना चाहिए ।

उदाहरण

सवैया

ओरछे तीर तरंगनी बेतवै, ताहि तरै रिपु केशव कोहै ।
अर्जुन बाहु प्रवाह प्रबोधित, रेवा ज्यों राजन की रज मोहै ।
ज्योति जगै यमुना सी लगै, जग-लोचन ललित पाप विपो है ।
सूर सुता शुभ सगम तुंग, तरग तरगित गंग सी सो है ।।१५।।

'केशवदास' कहते है कि ओरछा के निकट वेतवा नदी है; उसे पार कर सके, ऐसा शत्रु कौन सा है ? यह सहस्रार्जुन की भुजाओ द्वारा बढाये हुए प्रवाहवाली नर्मदा नदी के समान है, क्योकि इसका प्रवाह भी अर्जुनपाल राजा के द्वारा बढाया गया है । इसके सामने राजाओ का राजापन मूर्छित हो जाता है अर्थात् इमके प्रवाह पर राजाओ का कोई वश नहीं चलता कोई भी राजा इस पर पुल नहीं बँधवा सकता । यह बेतवा नदी अपनी ज्योति (शोभा) के कारण यमुना जैसी लगती है क्योकि जमुना जल जग लोचन (सूर्य) के द्वारा लालित है और यह जग लोचन (संसार के मनुष्यो के लोगो से) लालित है अर्थात् इसे सब बड़े प्रेम से देखते हैं । जैसे यमुना पापो को नष्ट कर देती है, वैसे यह भी पापो को दूर कर देती है । सूर्य-सुता (यमुना) मे मिलने के कारण यह ऊँची तरगोवाली गगा सी सुशोभित होती है । क्योकि गगा जी भी यमुना मे मिली है ।

तड़ाग वर्णन

दोहा

ललित लहर, खग, पुहुप, पशु, सुरभि, समीर, तमाल।
करभकेलि, पंथी प्रकट, जलचर वरणहुँ ताल ॥१६॥

ताल का वर्णन करते समय सुन्दर लहरें, जल-पक्षी, पुष्प, जलपशु, सुन्दर सुगन्धितवायु, तमाल आदि वृक्षो, हाथियो के बच्चो की क्रीड़ा, यात्रियो तथा जलचरो का वर्णन कीजिए।

उदाहरण
कवित्त

आपु धरैं मल औरनि केशव निर्मलगात करैं चहुँओरैं।
पंथिन के परिताप हरैं हठि, जे तरुतूल तनोरुह तोरैं॥
दुखहु एक स्वभाव बड़ो, बड़भाग तड़ागनि को बित थौरैं।
ज्यावत जीवनिहारिनिको, निज बंधनकै जगबंधन छोरैं ॥१७॥

'केशवदास' कहते है कि तालाब दूसरो का मल स्वय लेकर, चारो ओर के जीवो को निर्मल गात (स्वच्छशरीर वाला) बना देते है। जो पथिक किनारे के पेड़ और उनकी शाखाओ को हठपूर्वक तोडते है, उनके दुःखो को भी दूर करते है। (उन्हे भी निर्मलजल मे स्नान करा कर स्वस्थ बनाते हैं)। इन बड़भागी तालाबो के सुन्दर स्वभाव को देखो कि वे अपने थोडे से धन से, अपने जीवन (जल) को हरने वाले को भी जिलाते हैं और अपने बन्धन से ससार के बन्धन को दूर करते हैं अर्थात् बाँध आदि अपने ऊपर बँधवा कर स्वय तो बधन मे पडते हैं और उससे ससार के लोगो को जो पार करने मे रुकावट होती है, उसे दूर करते हैं अथवा पुराणो के अनुसार तालाबादि पर बाँध बाधने वालो को मुक्ति प्रदान करते हैं।

समुद्र वर्णन

दोहा

तुंगतरंग गंभीरता, रतन ऽजलज बहुजंत।
गंगासंगम देवतिय, यान विमान अनन्त ॥१८॥
गिरि बड़वानल वृद्धि बहु, चन्द्रोदयते जानु।
पन्नग देव अदेव गृह, ऐसो सिन्धु बखानु ॥१९॥

समुद्र का वर्णन करते समय, ऊँची लहरें, गभीरता, रत्न, कमल, बहुत से जन्तु, गगा का सगम, देवताओ की स्त्रियाँ, अनेक प्रकार के यान तथा विमान, पहाड, बडवाग्नि, चन्द्रोदय से वृद्धि होना, साँप, देवता और राक्षसो का घर, आदि बातो का वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण (१)

सवैया

शेष धरे धरणी, धरणी धर केशव जीव रचे विधि जेते।
चौदहलोक समेत तिन्हैं, हरिके प्रतिरोमनि मे चित चेते॥
सोवत तेऊ सुनै इनहीं मे, अनादि अनन्त अगाधहैं येते।
अद्भुत सागर की गति देखहु सागरही महँ सागर केते॥२०॥

'केशवदास' कहते हैं कि शेष पृथ्वी को धारण किये हुये है और जितने जीव ब्रह्मा ने बनाये है उन सबको पृथ्वी धारण करती है। वे जीवो सहित चौदहो लोक, हरि (विष्णु) के रोम-रोम मे समाये हुए हैं यह बात (पुराणो के अनुसार) मन मे आती है। परन्तु ये समुद्र इतने अनन्त और अगाध है कि वे विष्णु भी इन्हीं मे सोया करते हैं, ऐसा सुना जाता है। समुद्र की अद्‌भुत गत तो देखा कि समुद्र में कितने ही समुद्र भरे पडे है।

(२)

भूति विभूति पियूषहुकी विष, ईशशरीर कि पाप बिपोहै।
है किधौ केशव कश्यपको घरु, देव अदेवनिके मन मोहै॥
संतहियो कि बसैं हरि संतत, शोभअनन्त कहै कवि कोहै।
चंदननीर तरंग तरंगित, नागर कोउ कि सागर सोहै॥ २१ ॥

यह समुद्र है या शकर जी का शरीर है ? क्योकि जिस प्रकार शकर जी के शरीर मे विभूति (भस्म), विष (अमृत) और पीयू की भूति (अधिकता) है, उसी प्रकार इसमे भी विभूति (धन-रत्नादि), पियूष (अमृत) और विष (कलाकूट अथवा जल) का प्राबल्य है । जिस प्रकार शकर जी के दर्शन से पाप दूर होते है, उसी प्रकार इससे भी पापो का छेदन होता है । 'केशवदास' कहते हैं कि यह कश्यप का घर है, क्योकि जैसे उनके घर मे देवता और राक्षस रहते हैं, वैसे इसमें भी रहते है । अथवा यह सन्तो का हृदय है क्योकि उनके हृदयो में सदाहरि बसते हैं और इसके हृदय मे भी सदाहरि का निवास रहता है । अत इस समुद्र की ऐसी अनन्त शोभा है कि ऐसा कौन कवि है जो उसका वर्णन कर सके । अथवा यह समुद्र है या कोई नागर पुरुष (नगर निवासी व्यक्ति) है क्योकि जैसे उसका शरीर चन्दन की तरग से तरगित (सुगध से सुगधित) रहता है, वैसे इसका शरीर भी उस चन्दन से युक्त रहता है जो व्यापारी लोग पहाड से काट-काट कर इसके जल द्वारा बहा ले जाया करते हैं ।

अथ सूर्योदय वर्णन

दोहा

सूर उदयते अरुणता, पय पावनता होइ ।
शख वेदधुनि मुनि करैं, पंथ चलै सबकोइ ।।२२।।
कोक कोकनद शोकहर, दुख कुबलय कुलटानि ।
तारा, औषधि, दीप, शशि, घुघू चोर तमाहानि ।।२३।।

सूर्योदय होने पर अरुणता (लालिमा) और पय (जल) की पवित्रता होती है । मुनि लोग वेद-ध्वनि करने लगते हैं और सब लोग मार्ग पर चलना आरम्भ करते हैं । कोक (चक्रवाक पक्षी) और कोकनद (कमल) का दुख दूर हो जाता है, कुमुदिनी और कुलटास्त्रियों को दुख होता है । तारा, औषधि, दीपक, चन्द्रमा, उल्लू, चोर तथा अन्धकार की हानि होती है ।

उदाहरण

कवित्त

कोकनद मोदकर मदनवदन किधौं,
दशमुख मुख, कुबलय दुखदाई है।
रोधक असाधु जन, शोधक तमोगुण की,
उदित प्रबुद्धबुद्धि 'केशौदास' गाई है।
पावन करन पय हरिपद-पंकज कै,
जगमगै मनु जगमग दरसाई है।
तारापति तेजहर तारका को तारक की,
प्रगट प्रभातकर ही की प्रभुताई है ॥२४॥

'केशवदास' कहते है कि यह प्रभाकर (सूर्य) की प्रभुताई है या कामदेव का मुख है क्योकि जैसे सूर्योदय कोकनद (कमल) के लिए मोद कर (आनन्द दायक) होता है, वैसे ही कामदेव का मुख कोकनद (कोकशास्त्र पढने वालो को) को मोदकर (आनन्ददायी) है। अथवा यह रावण का मुख है क्योकि जैसे वह कुबलय पृथ्वी मंडल को दुख देने वाला है, वैसे यह भी कुवलय (कुमुदिनी) को दु खदायी है। अथवा यह प्रबोध-बुद्धि का उदय है क्योकि जिस प्रकार सूर्य की प्रभा असाधु (दुष्टो, चोरो, लुटेरो) को रोकने वाली होती है और तमोगुण (अन्धकार) को दूर करती है, उसी तरह प्रबोद्ध-बुद्धि (ज्ञान-बुद्धि का उदय) भी असाधुओ का रोधक (पापो से हटाने वालो) और तमोगुण की शोधक होती है। अथवा यह सूर्य का प्रकाश है या श्रीविष्णु के चरण कमल है क्योकि जैसे यह (सूर्य का प्रकाश) पेय (जल) को पवित्र करता है, वैसे उनके (श्रीविष्णु के) चरण-कमल भी करते हैं। अथवा यह मनु महाराज की जगमगाती हुई ज्योति है क्योकि सूर्य की प्रभा जैसे जग-मग (ससार का मार्ग) दिखलाती है, वैसे यह मनुमहाराज की ज्योति भी जग-मग (ससार के लोगो को धर्म का मार्ग दिखलाने वाली) है।

अथवा यह सूर्योदय है या ताड़का के ताडक (ताड़ना करने वाले) श्रीराम हैं, क्योंकि जैसे यह (सूर्योदय) तारापति (चन्द्रमा) का तेजहर (तेज हरने वाला) और तार का (तारो या नक्षत्रो) का तारक (ताडक या ताडन करने वाला है,) वैसे श्री रामचन्द्र भी तारापति (तारा के स्वामी बालि) के तेज-हर (तेज को हरने वाले) और तारका के तारक (ताडका को तारने वाले) हैं।

चन्द्रोदय वर्णन

दोहा

कोक, कोकनद, बिरहि, तम, मानिनि, कुलटनि दु.ख ।
चन्द्रोदयते कुवलयनि, जलधि, चकोरनि सुख ।।२५।।

चन्द्रोदय से कोक (चकवा पक्षी), कोकनद (कमल), विरही, तम (अन्धकार), मानिनो नायिका तथा कुलटाओ को दुख होता है और कुबलय, समुद्र तथा चकोर पक्षी को सुख होता है।

उदाहरण

कवित्त

'केशौदास' है उदास कमलाकर सों कर,
शोषक प्रदोष ताप तमोगुण तारिये।
अमृत अशेष के विशेष भाव बरषत,
कोकनद मोद चंड खंडन विचारिये।
परम पुरुष पद विमुख पुरुष रुख,
सनमुख सुखद विदुष उर धारिये।
हरि हैं री हिय में न हरिन हरिन नैनी,
चन्द्रमा न चन्द्रमुखी नारद निहारिये ।।२६।।

'केशवदास' कहते है कि श्रीरामचन्द्र चन्द्रमा की ओर देखकर सीता जी से कहते है कि 'हे चन्द्रमा जैसे मुखवाली सीता! यह चन्द्रमा नहीं है? यह तो नारद दिखलाई पडते है क्योकि जिस प्रकार चन्द्रमा

के कर (किरणे) कमलो के समूह से उदासीन रहते है, उसी प्रकार नारद के हाथ भी धन समूह से विरक्त रहा करते हैं। जिस प्रकार, चन्द्रमा प्रदोष (सध्याकाल) और ताप, (गरमी) का शोषक (नाश करने वाला) तमोगुण (अधकार) की ताडना करने वाला होता है, उसी प्रकार नारद भी प्रदोष (बडे-बडे दोष) और ताप (दैहिक, दैविक, भौतिक) दूर करते है और तमोगुण अर्थात् अज्ञान को हटाते है। चन्द्रमा, जिस प्रकार अशेष (परिपूर्ण) अमृत को बरसाता है, उसी प्रकार नारद भी अमृत (अमर) और अशेष (परिपूर्ण) श्रीविष्णु भगवान् के भाव अर्थात् चरित्रो की बरसाया करते है अर्थात् उनका चरित्रगान किया करते है ? जिस प्रकार चन्द्रमा चक्रवाको की ध्वनि के आनन्द का प्रचड खडन करने वाला है, उसी प्रकार नारद भी कोक-शास्त्र के शब्दो के आनन्द के प्रचड खडनकर्त्ता हैं अर्थात् विषयचर्चा के विरोधी है। जिस प्रकार चन्द्रमा परम पुरुष अर्थात् पति के पदो (चरणो) से विमुख या रूठी हुई माननी नायिका से परुष (कठोर) रुख प्रवृत्ति) रखता है, उसी प्रकार नारद भी परम पुरुष अर्थात् श्री विष्णु भगवान से विमुख जनो से पुरुष रुख (कठोर प्रवृत्ति) रखते है। हे मृगनयनी ! और जो यह काला दाग दिखलाई पडता है, वह हरिण नहीं है प्रत्युत श्याम कान्ति धारण करने वाले विष्णु है जो नारद के हृदय म निवास करते है।

षट्ऋतु वर्णन

(१) बसन्त

दोहा

वरणि बसत सपुहुप अलि, बिरहि बिदारण वीर।
कोकिल कलरव कलितबन, कोमल सुरभि समीर ॥२७॥

वसत मे सुन्दर पुष्प, भौंरे कोयल की ध्वनि, सुन्दर वन, कोमल अर्थात् मद और सुरभि अर्थात् सुगधित वायु का वर्णन करना चाहिए क्योकि ये वस्तुएँ वियोगियो के हृदयो को विदारण करने वाले बसन्त के वीर योद्धा है।

उदाहरण

कवित्त

शीतल समीर शुभ गङ्गा के तरंग युत,
अंबर विहीन वपु वासुकी लसंत है।
सेवत मधुपगण गजमुख परभृत,
बोल सुन होत सुखी सत और असंत है।
अमल अदल रूप मञ्जरी सुपद रज,
रञ्जित अशोक दुख देखत नसंत है।
जाके राज दिसि दिसि फूले हैं सुमन सब,
शिव को समाज किधौं केशव वसंत है ॥२८॥

'केशवदास' कहते हैं कि शिवजी का समाज है या वसंत ऋतु है? शिवजी के समाज मे जिस प्रकार पवित्र गङ्गाजी की लहरो से युक्त शीतल समीर (ठन्डी वायु) बहा करती है। वह स्वय अवरविहीन वपु (वस्त्र रहित शरीर वाले) है और उनके शरीर पर वासुकी (साँप) सुशोभित रहते हैं। मधुप (देवता), गजमुख (श्रीगणेश) और परभृत (षटमुख-सोमकार्त्तिकेय) उनकी सेवा करते हैं, जिनकी वाणी को सुनकर सन्त और असन्त (रावण जैसे) सुखी होते हैं। वहाँ अमल निर्मल चरित्र वाला) अदल (अपर्णा-पार्वतीजी) जैसी रूपमञ्जरी (सुन्दरी) के सुपदो की रज (धूल) से लोग अशोक (शोकरहित) हो जाते हैं, क्योकि उन चरणो के देखते ही दु ख नष्ट हो जाते हैं। वहाँ-शिवजी के राज्य मे—दिशाओ-दिशाओ के सुमन (देवतागण) फूले प्रसन्न रहते है। उसी प्रकार—

वसत मे गगाजी की लहरो के स्पर्श से युक्त हो शीतल समीर बहा करती है। अबर (आकाश), विहीनवपु (कामदेव) और बासुकी (पुष्प हार) सुशोभित होते है। गजमुख, अर्थात् हाथियों के मुख की सेवा मधुपगण (भौंरे) किया करते हैं, क्योकि वसंत मे ही हाथी

मतवाले हो जाते हैं और मदयुक्त होने के कारण उनके मस्तकों पर भौंरे मडराते रहते है। परभृत अर्थात् कोयलो की बोली सुनकर सभी सन्त और असन्त सुखी होते है। अमल (निर्मल) और अदल (अद्वितीय) रूप मजरी (सुन्दरी स्त्रियो) के पदरज से सुशोभित अशोक के वृक्षो को देखते ही दु ख नष्ट हो जाते है और सब प्रकार के सुमन (फूल) फूलते है।

(२) ग्रीष्म वर्णन

दोहा

ताते तरल समीर मुख, सूखे सरिता ताल।
जीव अबल जल थल विकल, ग्रीषम सफल रसाल ॥२६॥

ग्रीष्मऋतु मे गर्म और चचल वायु बहती है। लोगो के मुख, नदी और तालाब सूखने लगते हैं। जल-थल के जीव-जन्तु अशक्त और व्याकुल हो जाते हैं। केवल रसाल अर्थात् आम ही सफल होता है अर्थात् गर्मी की ऋतु मे केवल आम ही फलता है।

उदाहरण

कवित्त

चंडकर कलित, बलित वर सदागति,
कंद मूल, फलफूल दलनि को नासु है।
कीच बीच बचै मीन, व्याल बिल कोल कुल,
द्विरद दरीन दिनकृत को विलासु है।
थिर, चर जीवनहरन, वन वन प्रति,
'केशौदास' मृगशिर श्रवन निवासु है।
धावत बली धनुस, सोहत निपानिसर,
शवर समूह कैधो ग्रीषम प्रकासु है ॥३०॥

यह शवर-समूह (भीलो या जङ्गली मनुष्यो का दल) है या ग्रीष्म ऋतु ? क्योकि जिस प्रकार शवर समूह चडकर कलित (बलवती भुजाओं से युक्त) और बलितवर (बल से युक्त और सदागति (सदा घूमने

वाला होता है। वह कद, मूल, फल और दलो या पत्तो का नाश करता है और उसके मारे कीचड़, मछलिया, बिलो मे घुसे सांप और गुफाओ मे घुसे हुये हुए कोल (बाराह) तथा द्विरद (हाथी) कहीं बच पाते हैं। अर्थात् नहीं बच पाते। यह तो उनका दिन कृत अर्थात् दिन प्रतिदिन का विलास या मनोरजन है। वह (शवरदल) वन-वन मे घूमकर चर और अचर जीवो का जीवन हरण करता रहता है और (केशवदास कहते हैं) कि उनका निवास स्थान मृगशिर (हिरनो के सिर) तथा श्रवण (कानो) से भरा रहता है अर्थात् उनके निवास स्थान मे हिरनो के कटे हुए अग प्रत्यङ्ग मिला करते है या मृगो के शिरो से श्रवित (टपकता हुआ) रक्त भरा रहता है। वह थल बली (शवरदल) हाथ मे धनुष और निपानि (अचूक) सर (बाण) लिए घूमता रहता है।

उसी प्रकार—

ग्रीष्म भी चडकर कलित (सूर्य की प्रचड किरणो से युक्त) रहता है और सदागति अर्थात् श्रेष्ठवायु या लू के झोको से युक्त रहता है। उसमे कन्द, मूल, फल, फूल और पत्तो का नाश होता रहता है। ग्रीष्म मे दिवकृत (सूर्य) का विलास (प्रभाव) ऐसा रहता है कि कीचड़ मे मछलिया, बिल मे घुसकर सर्प और गुफाओ मे घुसकर कोल (सूअर) तथा द्विरद (हाथी) किसी प्रकार बच पाते है। ग्रीष्म थल और जल के चर अचर जीवो का जीवन (जल) हरने वाला होता है। इसमे मृगशिरा नक्षत्र तपता है और श्रवन अर्थात् बरसता नहीं। इसमे बली (गैंडाजन्तु) धनुष अर्थात् मरु-भूमि की भाति हत-प्यासा होकर निपानि सर (पानी रहित) तालाब की ओर दौड़ता रहता है।

(२) वर्षा वर्णन

दोहा

बरषा हँस पयान, बक, दादुर, चातक मोर।
केतिक पुष्प, कदम्ब, जल, सौदामिनी घनघोर ॥२१॥

वर्षा मे हसो का मानसरोवर को पयान, बक (बगुला) दादुर, (मेढक), चातकपक्षी, और मोर, केतकी पुष्प, कदम्ब, जल (वर्षा) बिजली तथा बादलो की गडगडाहट का वर्णन किया जाता है ।

उदाहरण

कवित्त

भौहैं सुरचाप चारु प्रमुदित पयोधर,
 भूख न जराय जोति तड़ित रलाई है।
दूरि करी सुख मुख सुखमा ससी की नैन,
 अमल कमल दल दलित निकाई है।
'केशौदास' प्रबल करेनुका गमन हर,
 मुकुत सुहंसक-सबद सुखदाई है।
अबर बलित मति सो है नीलकंठ जू की,
 कालिका कि वर्षा हरिष हिय आई है ॥३२॥

यह कालिका देवी है या हृदय को हरषाती हुई वर्षा ऋतु आई है, क्योकि इन्द्रधनुष ही उनकी सुन्दर भौहे है, बादल उन्नत कुच है, बिजली की चमक उनके जडाऊ गहनो की ज्योति है। उन्होने अपने मुख की शोभा से चन्द्रमा की शोभा को दूर कर दिया है और उनके नेत्रो ने स्वच्छ कमलो की पखुडियो की शोभा को भी दलित कर दिया है। 'केशवदास' कहते हैं कि वह मतवाली हथिनी की चाल को भी हरने वाली है। उनके बिछुओ की ध्वनि स्वच्छन्द रूप से हो रही है। जो सुख देने वाली है। उन्होने नीला कपड़ा पहन लिया है और नीलकठ (श्रीशंकरजी) की मति को मोहित करती है। उसी प्रकार—

वर्षा मे भी (भय) है अर्थात् अनेक तरह के कीडे पतगो का भय है। सुर-चाप (इन्द्रधनुष) दिखलाई पडता है, उमडे हुए बादल दृष्टिगोचर होते हैं और बिजली की चंचल चमक दिखलायी पडती है। चन्द्रमा के मुख की शोभा दूर हो गई है और (नैन अमल) नदियाँ

स्वच्छ नहीं रहती। 'केशवदास' कहते हैं कि प्रबलक अर्थात् प्रबल जलधारा रेनुका हर धूल को बहा ले जाने वाली) हो जाती है और गमन अर्थात् चलना फिरना रुक जाता है। हंसो के सुखदाई शब्दो से देश भर रहित हो जाता और भौरो की मति मोहित होती है ।

(४) शरद वर्णन

दोहा

अमल अकास प्रकास ससि, मुदित कमल कुल काँस।
पंथी, पितर पयान नृप, शरद सु केशवदास ॥३३॥

'केशवदास' कहते हैं कि शरद ऋतु मे आकाश निर्मल हो जाता है, चन्द्रमा का प्रकाश उज्जवल दिखलाई पड़ता है, कमल तथा कास मुदित होते हैं (फूलते हैं) और पथिक, पितर तथा राजाओ का पयान (गमनागमन) आरम्भ होता है ।

उदाहरण

कवित्त

सोभा को सदन, ससि बदन मदन कर,
बंदै नर देव कुबलय बरदाई है।
पावन पद उदार, लसति हंस के मार,
दीपति जलज हार दिसि दिसि धाई है।
तिलक चिलक चारु लोचन कमल रुचि,
चतुर चतुर मुख जग-जिय भाई है।
अमर अंबर नील लीन पीन पयोधर,
'केशौवदास' शारदा कि शरद सुहाई है ॥३४॥

'केशवदास' कहते है कि यह श्री शारदा जी हैं या सुन्दर शरद ऋतु हैं, क्योकि जिस प्रकार श्री शारदा जी का मुख शोभा युक्त चन्द्रमा की भाँति होता हुआ भी मद या अभिमान उत्पन्न करने वाला नहीं है अर्थात् (उन्हे अपने मुख की शोभा का तनिक भी अभिमान नहीं है)

देवता और मनुष्य सभी उनको बदना करते है और वह कुबलय अर्थात् पृथ्वी मडल को वर दिया करती है अथवा बल प्रदान करती हैं। उनके पवित्र चरणो मे सुन्दर भूषण सुशोभित होते है और उनके मोतियो के हार की चमक सुन्दर है तथा चारो दिशाओ मे छाई हुई है। उनके तिलक की चमक भी सुन्दर है और नेत्र कमल जैसे हैं तथा नीलाम्बर मे उनसे पुष्ट कुच छिपे हुए हैं। उसी प्रकार. -

शरद ऋतु का मुख शोभा युक्त है तथा चन्द्रमा जैसा है तथा वह मदन कर अर्थात् कामोद्दीपन करनेवाला है। नर-देव या राजा लोग शरद ऋतु की वदना करते है क्योकि इसी ऋतु मे वे विजय यात्रा को निकलते है। वह कुवलय (कमलो) को वरदाई अर्थात् बल देने वाली है। शरद् ऋतु मे, पवित्र स्थानो पर हसो की पक्तियां शोभा देती हैं और दिशाओ, दिशाओ मे कमलो की शोभा दिखलाई पडती है। तिलक वृक्षो की चमक आँखो को रुचिकर होती है तथा चारो ओर मनुष्यो को अच्छी लगती है। नीले विस्तृत आकाश में बादल लीन दिखलाई पडते है।

(५) हेमंत वर्णन

तेल, तूल, तांबूल तिय, ताप, तपन रतिवंत।
दीह रजनि लघु द्यौस सुनि, शीत सहित हेमंत ॥३५॥

हेमन्त मे तेल, तूल (रूई), तिय (स्त्री), ताप (अग्नि), तपन (सूर्य) अच्छे लगते है और मनुष्य रतिवत (कामपीडित) हो जाते हैं। रातें बडी होती हैं और दिन छोटा होता है तथा शीत बहुत पडता है।

उदाहरण

कवित्त

अमल कमल दल लोचन ललित गति,
जारत समीर सीत, भीत दीह दुख की।
चंद्रक न खायो जाय, चंदन न लायो जाय,
चंदन चितयो जाय प्रकृति वपुष की।

घट की घटित जाति घटना घटीहू घटी,
छिन छिन छीन छबि रविमुख सुख की ।
सीकर तुषार स्वेद सोहत हेमन्त ऋतु,
किधौ 'केशौदास' प्रिया प्रीतम विमुख की ।।३६।।

'केशवदास' कहते है कि यह हेमन्त ऋतु है या अपने प्रियतम से अलग वियोगिनी स्त्री है । क्योकि हेमन्त ऋतु मे जिस प्रकार निर्मल कमल दलो मे लोचन अर्थात् शोभा नहीं रहती और शीत समीर उन्हे धीरे-धीरे जलाये डालता है और इसमे दु खो का बडा डर रहता है । लोगो से मारे ठड के न तो पानी पिया जाता है और न चन्दन लगाया जाता है तथा न चन्द्रमा की ओर देखा ही जाता है । इस ऋतु मे शरीर की ऐसी ही प्रकृति हो जात्ती है । दिन की घडिया दिन-दिन घटती जाती है अर्थात् दिन छोटा होता जाता है । और सूर्य के मुख की शोभा क्षण क्षण क्षीण होती जाती ह । अर्थात् सूर्य ताप मे बल नहीं रहता । इस हेमन्त ऋतु मे तुषार के सीकर (कण) लोगो को अच्छे लगते है और किसी प्रकार गर्मी पाकर शरीर मे पसीना आने लगे तो वह अच्छा लगता है ।

उसी प्रकार—वियोगिनी स्त्री के कमल-दल जैसे लोचनो (नेत्रो) तथा उसकी ललित गति (सुन्दर चाल) को, शीत वायु जलाएँ डालता है । उसे दु खो का बड़ा भय लगा रहता है । उसके शरीर का कुछ ऐसा स्वभाव हो जाता है कि न तो उससे पानी पिया जाता है न खाया जाता है और न चन्दन लगाया जाता है और न चन्द्रमा की ओर देखा ही जाता है । उसके शरीर की रचना दिन-दिन घटती जाती है अर्थात् वह दुबली-पतली होती जाती है तथा उसके सूर्य जैसे चमकीले मुख की चमक तथा सुख क्षण-क्षण क्षीण होता जाता है और उसे (वियोग की तपन के मारे) तुषार की सीकर (कण) पसीने की बूदो जैसे भासित होते हैं ।

(६) शिशिर वर्णन

दोहा

शिशिर सरस मन वरणिये, देखत राजा रक।
नाचत गावत हँसत दिन, खेलत रैनि निशंक ॥३७॥

'शिशिर ऋतु' मे राजा से लेकर रक तक का मन प्रसन्न दिखलाई पडता है और वे दिन-रात निशक होकर नाचते गाते और हँसते है, इसलिए इस ऋतु मे इन्हीं का वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

सरस असम सरि, सरसिज लोचनि विलोकि,
लोक लीक लाज लोपिवे का आगरी।
ललित लता सुबाहु जानि जून ज्वान बाल,
बिटप उरनि लागै उमगि उजागरी।
पल्लव अधर मधु पीवत ही मधुपन,
रचित रुचिर पिक रुक सुखसागरी।
इति. विधि सदागति बास बिगलित गात,
शिशिर की शोभा किधौ बारिनारि नागरी ॥३८॥

यह शिशिर ऋतु की शोभा है या चतुर बारिनारि (गणिका) है? शिशिर ऋतु मे जिस प्रकार सरस (अधिक या ऊँचे) असम जो बराबर के नहीं अर्थात् नीचे) सब बराबर हो जाते है (एक साथ ऊँच नीच का भाव छोड कर होली खेलते है)। कमल जैसे नेत्र वाली स्त्रियाँ लोक-मर्यादा तथा लज्जा को लुप्त करने मे निपुण हो जाती है। सुन्दर लताए ही इस शरद ऋतु की बाहे है, जो बूढे, जवान तथा बाल वृक्षो से उमग मे भरी हुई लपटती है। नये पत्ते ही इस ऋतु के ओठ है। भौरो के हृदय-मधु को पीते ही अनुराग से रग जाते है और कोयल की ध्वनि सुख उत्पन्न करने वाली होती है। शिशिर मे ऐसी

शोभा रहती है कि वायु के सा' अग मे सुगंध फैली रहती है अर्थात् इस ऋतु मे सुगधित वायु बहा करती है ।

उसी प्रकार —

गणिका अधिक असमसर अर्थात् कामवती होती है और लोक मर्यादा तथा लज्जा को मेटने मे बडी निपुण दिखलाई पडती है । वह अपनी लतारूपी बाहुओ के द्वारा बूढे, जवान, बालक तथा धूर्त सभी के हृदयो मे उमग पूर्वक लपटती है । जब मधुप (शराबी) लोग उसके ओठो के मधु को पीते है तब उसे रुचिकर प्रतीत होता है । और वह कोयल जैसी बोली वाली तथा सुख की सागर ही होती है । उसके शरीर की गति सदा यही रहती है कि उससे सुगन्ध निकलती रहे ।
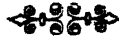
आठवां-प्रभाव

राज्य श्री भूषण वर्णन

(दोहा)

राजा, रानी, राजसुत, प्रोहित, दलपति दूत ।
मत्री, मंत्र, पयान, हय, गय, संग्राम अभूत ॥१॥
आखेटक, जल केलि, पुनि, विरह, स्वयबर जानि ।
भूषित सुरतादिकनि करि, राज्यश्रीहि बखानि ॥२॥

राज्यश्री के वर्णन मे राजा, रानी, राजकुमार, पुरोहित, सेनापति, दूत, मत्री, मत्र (सम्मति), प्रयाण विजय करने के लिए सेना का गमन) घोडे, हाथी तथा अपूर्व सग्राम का उल्लेख करना चाहिए । इनके अतिरिक्त आखेट, जल क्रीडा, वियोग, स्वयवर और सुरत आदि विषयो का वर्णन भी करना चाहिए ।

राजा वर्णन

प्रजा, प्रतिज्ञा, पुण्यपन, धर्म, प्रताप, प्रसिद्धि ।
शासन नाशन शत्रु के, बल विवेक की वृद्धि ॥३॥
दड, अनुग्रह, धीरता, सत्य, शूरता, दान ।
कोश, देश युत बरणिये, उद्यम, क्षमा निधान ॥४॥

राजा का वर्णन करते समय प्रजा का ध्यान, दृढ प्रतिज्ञा, पुण्य करने का प्रण, धर्म, प्रताप, प्रसिद्धि, शासन, शत्रुओ का नाश, बल और विवेक की वृद्धि, दण्ड, अनुग्रह (दया), धीरता, सत्य, शूरता, दान, कोष, देश, उद्यम (प्रयत्न) तथा रक्षा आदि विषयो का वर्णन करना चाहिए ।

उदाहरण
(कवित्त)

नगर नगर पर घन ही तौ गाजै घोर,
ईति की न भीति, भीति अघन अधीर की ।
अरि नगरीन प्रति करत अगम्या गौन,
भावै व्यभिचारी, जहाँ चारी परपीर की ।
शासन को नाशन करत एक गंधवाह,
'केशौदास' दुर्ग नही दुर्गति शरीर की ।
दिसि-दिसि जीति पै अजीति द्विजदीननिसों,
ऐसी रीति राजनीति राजै रघुवीर की ।।५।।

श्री रामचन्द्र जी की राजनीति से देशभर मे ऐसी सुख शान्ति विराज रही है कि नगरो पर चढाई करनेवाला कोई नहीं है, केवल बादल ही उनपर घोर गर्जना किया करते हैं। ईतियो (खेती को हानि पहुचाने वाले सात प्रकार के भय) का कोई भय नहीं है। भय है तो केवल पाप और अधीरता का है। अगम्या गमन केवल शत्रुओ की नगरी पर ही किया जाता है। केवल भाव ही व्यभिचारी है (अर्थात् केवल भावो का उल्लेख करते समय व्यभिचारी शब्द सुनाई पडता है, नहीं तो वास्तविक व्यभिचारी कोई है ही नहीं) और दूसरो की पीडा की ही चोरी की जाती है अन्यथा चोरी है ही नहीं। शासन (आज्ञा) का नाश (उल्लघन) केवल वायु करती है अर्थात् चाहे जहाँ बिना रोक-टोक जाया करती है। 'केशवदास' कहते है कि उनके राज्य मे केवल दुर्गो (किलो) ही के शरीरो की दुर्गति रहती है, क्योकि उन्हीं के शरीर टेढे-मेढे रहते है अन्यथा किसी की भी दुर्गति नहीं होती उनकी राजनीति सभी स्थानो मे जीतती है परन्तु केवल ब्राह्मणो और दीनो से नहीं जीत पाती ।

राज पत्नी वर्णन ।

दोहा

सुन्दरि, सुखद, पतिव्रता, शुचि रुचि, शील समान ।
यहिविधि रानी वरणिये, सलज, सुबुद्धि, निधान ॥६॥

रानी को सुन्दरी, सुख देनेवाली, पतिव्रता, शुचिरुचि (पवित्र (रुचिवाली) शीलवती, समान (मान का ध्यान रखनेवाली), सलज, लज्जाशीला) और सुबुद्धि-निधान (अत्यन्त बुद्धिमती) वर्णन करना चाहिए ।

उदाहरण

कवित्त

माता जिमि पोषति, पिता ज्यों प्रतिपाल करै,
प्रभु जिमि शासन करति, हेरि हियसों ।
भैया ज्यों सहाय करै, देति है सखा ज्यों सुख,
गुरु ज्यों सिखावै सीख, हेत जोरि जियसों ।
दासी ज्यों टहल करै, देवी ज्यों प्रसन्न ह्वै,
सुधारै परलोक लोक नातो नहिं बियसों ।
छाके हैं अयान मद छिति के छितीश छुद्र,
और सो सनेह करै छोड़ि ऐसी तियसों ॥७॥

जो रानी (अपनी प्रजा और सेवक वर्ग को) माता के समान पालती है, पिता की तरह उनकी देख-भाल करती है तथा स्वामी की तरह उनपर शासन करती हुई भी हृदय से उन्हे अपना समझती हैं । जो (परिवार वर्ग के लोगो की) भाई की तरह सहायता करती है मित्र की तरह सुख देती है, गुरु की भाँति मनसे प्रेम पूर्वक उपदेश देती है । जो रानी (अपने पति की) दासी की तरह टहल सेवा करती है, और देवी की भाँति प्रसन्न होकर लोक-परलोक दोनो को सुधारती है तथा किसी दूसरे से सम्बन्ध नहीं रखती । ऐसी पत्नी को छोड़कर जो राजा

लोग दूसरी स्त्रियो से प्रेम करते है, उन्हे क्षुद्र, अज्ञानी तथा राज्य के नशे मे चूर समझना चाहिए।

(२)

कवित्त

काम के है आपने ही, कामरति, काम साथ,
रति न रतिकौ जरी, कैसे ताहि मानिये।
अधिक असाधु इन्द्र, इन्द्रानी अनेक इन्द्र,
भोगवती, 'केशौदास' वेदन बखानिये।
विधिहू अविधि कीनी, सावित्रीहू शाप दीनी,
ऐसे सब पुरुष युवति अनुमानिये।
राजा रामचन्द्र जू से राजत न अनुकूल,
सीता सी न पतिव्रता नारी उर आनिये ॥८॥

कामदेव और रति का साथ केवल अपने ही काम के लिए रहता है अर्थात् अपने स्वार्थसाधन का ही साथ है, क्योकि (कामदेव के जलने पर) रति रत्तीभर भी नहीं जली, तब उसे पतिव्रता कैसे माना जाय। इन्द्र बडे असाधु हैं और इन्द्रानी अनेक इन्द्रो से भोग करती है। 'केशवदास' कहते है कि यह बात तो वेद मे ही वर्णित है। ब्रह्मा ने भी अनियमित कार्य किया (अपनी कन्या सरस्वती पर मन चलाया), और सावित्री (सरस्वती) ने भी शाप दिया (कि तुम्हारी पूजा न हुआ करेगी)। इस तरह ज्ञान हुआ कि न तो राजा रामचन्द्र जी सा कोई अनुकूल राजा है और न सीताजी के समान कोई दूसरी पतिव्रता स्त्री है।

राजकुमार वर्णन

दोहा

विद्या विविध विनोद युत, शील सहित आचार।
सुन्दर, शूर, उदार बिभु, बरणिय राजकुमार ॥९॥

राजकुमार को विविध विद्याओ का ज्ञाता विनोद युत (विनोदी अर्थात् सदा प्रसन्न रहने वाला) शीलवान, आचारवान, सुन्दर, शूर, उदार, और सामर्थ्यशाली वर्णन करना चाहिए ।

उदाहरण

कवित्त

दानिन के शील, परदान के प्रहारी दिन,
दानवारि ज्यों निदान देखिये सुभाय के ।
दीप दीप हू के अवनीपन के अवनीप,
पृथु सम 'केशौदास' दास द्विज गाय के ।
आनँद के कंद, सुरपालक से बालक ये,
परदार प्रिय साधु मन, वच, काय के ।
देह धर्म धारी पै विदेह राज जू से राज,
राजत कुमार ऐसे दशरथ राय के ॥१०॥

दानियो के स्वभाव वाले है, शत्रुओ से प्रहार पूर्वक दान लेनेवाले है और अन्त मे विष्णु जैसे स्वभाव के दिखलाई पडते है । 'केशवदास' कहते है कि द्वीप-द्वीपो के राजाओ के भी पृथु के समान चक्र वर्त्ती राजा है परन्तु फिर भी ब्राह्मण और गाय के सेवक है । ये बालक आनन्द के कद (आनन्ददायक) और सुरपालक (इन्द्र) के समान हैं । लक्ष्मी अथवा पृथ्वी के प्यारे तथा मन, वचन और कर्म से पवित्र हैं । हे राजा ! देह धर्म-धारी (शरीरधारी) होने पर भी विदेह जैसे ये राजा दशरथ के राजकुमार है ।

पुरोहित वर्णन

दोहा

प्रोहित नृपहित वेद-विद, सत्यशील शुचि अग ।
उपकारी, ब्रह्मण्य, ऋजु, जीत्यो जगत अनंग ॥११॥

पुरोहित को राजा का हितैषी, वेद का ज्ञाता, सत्यवक्ता, पवित्र, उपकारी, ब्रह्म मे लीन, सीधे स्वभाव वाला तथा कामजित जितेन्द्रिय) होना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

कीन्हों पुरहूत मीत, लोक लोक गाये गीत,
पाये जु अभूतपूत, अरि उर त्रास है।
जीते जु अजीत भूप, देस-देस बहुरूप,
और को न 'केशौदास' बल को बिलास है।
तोरयो हर को धनुष, नृप गण गे विमुख,
देख्यो जो बधू को मुख सुखमा को बास है।
ह्वै गये प्रसन्नराम, बाढो धन, धर्म, धाम,
केवल वशिष्ठ के प्रसाद को प्रकास है ॥१२॥

राजा दशरथ ने इन्द्र को जो मित्र बनाया, लोक-लोक मे जो उनकी प्रशसा के गीत गाये गये। उन्हे जो अभूतपूर्व पुत्रो की प्राप्ति हुई तथा उन्होने देश-देश के अनेक अजीत (न जीते जाने योग्य) राजाओ को जीता, सो 'केशवदास' कहते है कि यह किसी और के बल के कारण नहीं हुआ, यह केवल वशिष्ठमुनि की प्रसन्नता के प्रभाव के कारण ही हुआ। इसी प्रकार श्रीरामचन्द्र ने शिवजी का धनुष तोडा, अन्य राजागण विमुख होकर चले गये, अति सुन्दर वधू का मुख देखा, परशुराम भी प्रसन्न होकर गये, और धन तथा धर्म की वृद्धि हुई, यह भी उन्हीं वशिष्ठ गुरु की प्रसन्नता के प्रभाव के कारण ही हुआ।

दलपति वर्णन

दोहा

स्वामिभगत, श्रमजित, सुधी, सेनापती अभीत।
अनालसी, जनप्रिय, जसी, सुख, सग्राम, अजीत ॥१३॥

सेनापति को स्वामिभक्त, अथक परिश्रमी, बुद्धिमान, निडर, आलस्य रहित, लोक-प्रिय, यशस्वी और युद्ध मे सुखपूर्वक न जीता जानेवाला होना चाहिए ।

उदाहरण
सवैया

छांड़िदियो सब आरस, पारस, केशव स्वारथ साथ समूरो ।
साहस सिंधु प्रसिद्ध सदा जलहू थलहू बल बिक्रम पूरो ॥
सोहिए एक अनेकनि माहॅ, अनेकन एक बिना रणरूरो ।
राजति है तेहि राजको राज सुजाकी चमूमें चमूपतिशूरो ॥१४॥

'केशवदास' कहते है कि जिसने सब आलस्य छोड दिया हो और समस्त स्वार्थ का परित्याग कर दिया हो । जो साहस का समुद्र अर्थात् बडा साहसी हो तथा जल-थल सभी स्थानो मे पूरा बल-विक्रम दिखलाने वाला हो । जो अनेक मनुष्यो मे एक ही वीर हो और उस एक के बिना अनेक वीर भी सुन्दर युद्ध न कर सकें । जिसके राज्य मे ऐसा शूर सेना पति हो उसी राजा का राज्य सुशोभित होता है ।

दूतवर्णन
दोहा

तेज बढ़ै निज राज को, अरिउर उपजै छोभ ।
इगित जानहि समयगुण, बरणहुॅ दूत अलोभ ॥१५॥

जो दूत—'अपने राज्य का तेज बढे और बैरियो के हृदयो मे दु.ख हो' इसका विचार रखे, संकेत को समझनेवाला हो, समयानुसार गुण अवगुण का पारखी तथा लालच रहित हो, उसी का वर्णन करना चाहिए ।

उदाहरण
कवित्त

स्वारथ रहित, हितसहित, विहितमति,
काम, क्रोध, लोभ, मोह छोभ मदहीने है ।
मीत हू अमीत पहिचानिवे को, देशकाल,
बुद्धि बल जानिबे को परम प्रवीने हैं ।

आपनी उकति अति ऊपरी दै औरनिकी,
दूर दूर दुरी मति लै लै बशकीने है।
'केशौदास' रामदेव देश-देश अरिदल,
राजनि को देखिवे को दूत दृगदीने हैं ॥१६॥

जो मित्र तथा अमित्रो को पहचानने तथा देश काल के अनुसार अपनी बुद्धि के बल से जानने मे परम चतुर है। जो अपना भेद तो ऊपरी ढङ्ग से बताते है और दूसरो अर्थात् शत्रुओ का दूर-दूर तक छिपा हुआ भेद ले-लेकर, वश मे कर लेते है। 'केशवदास' कहते हैं श्री रामचन्द्र जी देश-देश के बैरी राजाओ को देखने के लिए दूत रूपी आँखे लगाए रहते है। (अर्थात् उन्हीं के द्वारा सब का हाल जानते रहते है)

मत्रीवर्णन

दोहा

राजनीतिरत, राजरत, शुचि सरवज्ञ, कुलीन।
क्षमा, शूर, यश, शीलयुत, मंत्री मत्र प्रवीन ॥१७॥

मत्री को राजनीति का ज्ञाता, राज-भक्त, पवित्र मन वाला, सर्वज्ञ कुलीन (उच्चकुलोत्पन्न), क्षमाशील, शूर (वीर), यश और शील युत अर्थात् यशस्वी और शीलवान तथा मन्त्र (सम्मति) देने मे प्रवीण होना चाहिए।

उदाहरण (१)

सवैया

केशव कैसहूँ बारिधि बांधि, कहाभयो रीछनि जो छिति छाई।
सूरज को सुत बालि को बालक, को नलनील कहौ केहि ठाई ॥
को हनुमत कितेकबली, यमहूँ पर जोर लई नहि जाई।
भूषणभूषण दूषणदूषण लंक विभीषण के मत पाई ॥१८॥

'केशवदास' विभीषण की प्रशसा मे श्रीरामचन्द्र की ओर से भरत से कहते हैं कि किसी प्रकार समुद्र का पुल बाधकर रीछो से लका की भूमि को छा दिया, तो क्या हुआ ? सूर्यसुत-सुग्रीव और बालिपुत्र अगद तथा नल-नील क्या थे और उनकी गिनती ही क्या थी। हनुमान भी कितने बलवान थे ? बलपूर्वक तो यमराज से भी लका नहीं ली जा सकती थी। मैंने जो लका को प्राप्त किया वह अच्छी बात मडन करने वाले तथा दूषणो (बुरी बातो) की निन्दा करने वाले, विभीषण के मत से ही प्राप्त की।

(२)

युद्धजुरे दुरयोधनसों कहि कौन, कौन करी यमलोक बसीत्यो।
कर्ण, कृपा, द्विजद्रोणसों बैर कै काल बचै बर कीजै प्रतीत्यो॥
भीम कहा बपुरो अरु अर्जुन, नारि नंग्यावतही बल रीत्यो।
केशव केवल केशव के मत भूतल भारत पारथ जीत्यो॥१६॥

दुर्योधन से युद्ध करके, बतलाओ, कौन ऐसा है जो यमलोक को बसती या निवास-स्थान न बनाता ? अर्थात् कौन ऐसा है जो यमलोक न जाता ? कर्ण, कृपाचार्य, और द्रोणाचार्य से बैर करके काल भी अपने बल से बच सकता इसका कहीं विश्वास किया जा सकता है ? भीम और अर्जुन बेचारे क्या थे—उनका बल तो स्त्री-द्रोपदी के नगी होते समय ही समाप्त हो गया था। 'केशवदास' कहते है कि केवल श्रीकृष्ण के मत्र से ही युधिष्ठिर ने महाभारत को जीता था।

मत्री मतिवर्णन

दोहा

पांच अंग गुण सग षट, विद्या युत दश चारि।
आगस सगम निगम मति, ऐसे मत्र विचारि॥२०॥

जिस मत्री को राजनीति के पाँच [(१) साहाय्य, (२) साधन, (३) उपाय, (४) देशज्ञान, और (५) काल ज्ञान] अग और राजाओ से

व्यवहार करने के छः [(१) सधि (२ विग्रह (३) यान (४) आसन (५) द्वैधीभाव और (६) (सश्रय)] अग का ज्ञान हो। जो चौदहो [(१) ब्रह्मज्ञान (२) रसायन (३ स्वरसाधन (४) वेद पाठ (५) ज्योतिष (६) व्याकरण (७) धनुर्विद्या (८) जलतरण (९) वैद्यक (१०) कृषविद्या (११) कोकविद्या, (१२) अश्वोरोहण (१३) नृत्य और (१४) समाधान करण चातुर्य] विद्याओ को जानता हो तथा जिसे आगम (भविष्य) सगम (वर्तमान) और निगम (भूत) की जानकारी हो, उसी से राजा को सम्मति लेनी चाहिए।

उदाहरण

सवैया

केशव मादक क्रोध विरोध तजो सव स्वारथ बुद्धि अनैसी।
भेद, अभेद, अनुग्रह, विग्रह, निग्रह सधि कही विधि जैसी ॥
बैरिन को बिपदा प्रभु को प्रभुता करै, मत्रिन की मति ऐसी।
राखत, राजन, देवन ज्यों दिन दिव्य विचार विमानन वैस ॥२१॥

'केशवदास' कहते हैं कि जिस मन्त्री ने मादक वस्तुओ का उपयोग, क्रोध, विरोध तथा स्वार्थ साधन की बुरी बुद्धि को छोड दिया हो, जो भेद, अभेद, अनुग्रह, विग्रह, निग्रह और सधि के बतलाए हुए नियमो का जानकार हो और जिसकी बुद्धि बैरियो पर विपत्ति डालने वाली तथा अपने स्वामी की प्रभुता को बढाने वाली हो, उसकी बुद्धि तथा दिव्य विचारो से राजा इस प्रकार रक्षित रहते है, जिस प्रकार विमानो से देवता गण सुरक्षित रहा कहते है।

पयान वर्णन

दोहा

चवॅर, पताका छत्ररथ, दुदुभि ध्वनि बहु यान।
जल थल मय भूकंप रज, रंजित वरणि पयान ॥२२

प्रयाण (युद्ध के लिए गमन) का वर्णन करते समय, चमर, पताका, छत्र, रथ, दुदुभि बाजे की ध्वनि, बहुत सी सवारियाँ, जल, थल और भूकप तथा धूल से रगे हुए वातावरण का उल्लेख करना चाहिए।

उदाहरण (१)

सवैया

राघव की चतुरग चमू चय, का गनै केशव राज समाजनि।
सूर तुरंगन के उरझै पग, तुङ्ग पताकनि के पट साजनि॥
टूटि परै तिनते मुकता, धरणी उपमा वरणा कविराजनि।
बिदुमनौ मुख फेनन के किधौं, राजसिरी श्रवैमगल लाजनि॥२३॥

युद्ध के लिए प्रयाण करते समय श्रीरामचन्द्र जी के चतुरगिणी सेना के अपार समूह मे, केशवदास कहते है कि, राजाओ को कौन गिन सकता है? उस सेना की पताकाएँ इ नी ऊची है कि उनमे सूर्य के घोडो के पैर उलझ जाते है। (घोडो पर पैर उलझने के कारण) उन पताकाओ मे लगे हुए मोती टूट-टूट कर पृथ्वी पर गिर पडते हैं। (उन गिरते हुए मोतियो की) उपमा कविराजो ने इस प्रकार दी है कि मानो वे घोड़ो के मुखो से निकले हुए फेन की टपकती हुई बूँदे है अथवा राज्यश्री मगल-सूचक लावा (धान का लावा) बरसा रही है।

(२)

कवित्त

नाद पूरि, धूरिपूरि, तूरि वन, चूरि गिरि,
सोखि सोखि जल-भूरि, भूरि थल गाथ की।
"केशौदास" आस पास ठौर-ठौर राखिजन,
तिन की सपति सब आपने ही साथ की।
उन्नत नवाय, नत उन्नत बनाय भूप,
शत्रुन की जीविका सुमित्रन के हाथ की।
मुद्रित समुद्र सात, मुद्रा निज मुद्रित कै,
आई दस दिसि जीति सेना रघुनाथ की॥२४॥

(समस्त पृथ्वी मडल को) कोलाहल और धूल से भरकर, बनो को तोड फोड कर और पहाडो को चूर्ण करके तथा जल को सुखा-सुखा कर थल कर दिया। 'केशवदास' कहते हैं कि आस-पास के राज्यो मे स्थान स्थान पर अपने कर्मचारियो को नियुक्त करके, वहाँ की सम्मति को अपने हाथ मे कर लिया। जो राजा उन्नत सिर किए हुए थे अर्थात् अभिमान से अपना सिर ऊचा किए हुए थे, उनको झुका कर नम्र बना दिया और जो नत अर्थात् नम्र हुए उन्हे बडा बनाया तथा शत्रुओ की जीविका छीन कर अति मित्र (राजाओ) को दे दी। इस तरह सातो समुद्रो से घिरी पृथ्वी पर अपना आतक जमाकर, श्रीरामचन्द्र जी की सेना सब दिशाओ को जीतकर आ गई।

हय वर्णन

दोहा

तरत तताई, तेजगति मुख सुख, लघुदिन लेख।
देश सुवेश सुलच्छणौ, वर्णहु बाजि विशेख ॥२५॥

घोडे के वर्णन मे चपलता, तीखापन, द्रुतगति, मुख सुख (मुँह जोर न होना), उत्तम देशवासी, सुन्दर-वेषवाला और अच्छे लक्षणो से युक्त आदि गुणो का उल्लेख करना चाहिए।

उदाहरण

(कवित्त)

बामनहि द्वुपद जु नाप्यो नभ ताहि कहा,
नापै पद चारि थिर होत यहि हेत है।
छेकी छिति छीरनिधि छांड़ि धाम छत्रतर,
कुड ली कतर लोल चाकै मोल लेत है।
मन कैसे मीत, वीर वाहन समीर कैसे,
नैनन के न्वैनी, नैन नेह के निकेत है।
गुणगण बलित, ललितगति 'केशौदास'
ऐसे बाजि रामचन्द्र दीनन को देत है ॥२६॥

'जिस आकाश को वामन ने दो पैरो से ही नाप लिया था, उसे हम चार पैर वाले होकर क्या नापे' यह सोचकर घोडे पृथ्वी पर स्थिर रहते है। समुद्र ने (जो हमारे पिता है) समस्त पृथ्वी को घेर रखा है, तब हम क्या घेरें, यह सोच कर राजा के छत्र के नीचे ही, अपनी दौड छोडकर, इस तरह चचलता पूर्वक चक्राकार घूमते है कि मानो चाक को मोल लिए लेते है अर्थात् चाक से भी बढ कर घूमते है। जो मन के मित्र अर्थात् वेगमयी है, जो समीर (वायु) के वीर-वाहन है अर्थात् अत्यन्त द्रुतगति वाले है, जो नेत्रो को बाँधने के लिए रस्सी स्वरूप हैं अर्थात् जिन्हे देखकर आँखें उन्हीं को देखती रह जाती हैं और जो नेत्रो के प्रेम का स्थान है अर्थात् आँखें उनको प्रेम पूर्वक देखना चाहती है, जो गुणो (शुभ लक्षणो) से युक्त और 'केशवदास' कहते हैं कि सुन्दर चाल चलने वाले है, ऐसे घोडो को श्रीरामचन्द्र जी दीनो को दिया करते है।

गजवर्णन

(दोहा)

मत्त, महावत हाथ में मन्द्चलनि, चल कर्ण।
मुक्तामय, इभकुंभ शुभ सुन्द्र शूर, सुवर्ण ॥२७॥

हाथी को मत्त (मतवाला), महावत के वश मे, धीमी चाल वाला, हिलते हुए कानो का, गज-मुक्ता युक्त, सुन्दर मस्तक का, शुभ, सुन्दर, शूर और सुवर्ण (देखने मे अच्छा) होना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

जल कै पगार, निज दल के सिगार, अरि,
दल को विगारि करि, पर पुर पारै रौरि।
ढाहै गढ़, जैसे घुन, भट ज्यों भिरत, रन,
देति देखि आशिष गणेश जू के भोरे गौरि।

बिंध के से बांधव, कलिंदनंद से अमंद,
बंदन कै सूड भरे, चन्दन की चारु खौरि।
सूर के उदोत, उदै गिरि से उदित अति,
ऐसे गज राज राजै राजा रामचन्द्र पौरि ॥२८॥

राजा रामचन्द्र जी की पौर (दरवाजे) पर ऐसे हाथी सुशोभित हो रहे है जो जल के पगार अर्थात् गहरे पानी को पैदल ही पार करने वाले, अपने दल की शोभा और बैरियो के दल को बिगाड कर उनके नगरो मे कोलाहल मचा देनेवाले है। वे दुर्गो को ढहा देने वाले है बादल जैसे (काले) है, युद्ध मे योद्धाओ की भाति लडते है और जिन्हे गरोशजी के धोखे मे, पार्वती जी आशीर्वाद दिया करती है। जो विन्ध्याचल पहाड जैसे (ऊँचे) है कलिन्द पहाड के पुत्र जैसे (काले-काले) है, सुन्दर है, जिनकी सू डे बदन (सिन्दूर) से रगी हुई है। जिनके चन्दन की सुन्दर खौरे लगाई गई है और जो सूर्योदय के समय उदयाचल जैसे अति सुन्दर प्रतीत होते है।

संग्राम वर्णन

दोहा

सेना स्वन, सनाह, रज, साहस, शस्त्रप्रहार।
अंग-भंग, संघट्ट भट, अधकबन्ध अपार ॥२९॥
केशव बरणहु युद्ध मे, योगिनगणयुत रुद्र।
भूमि भयानक रुधिरमय सरवर सरित समुद्र ॥३०॥

'केशव' कहते है सग्राम का वर्णन करते समय सेना, कोलाहल, कवच, (उडती हुई) धूल, साहस, शस्त्रो का प्रहार, अङ्ग-भङ्ग, योद्धाओ का समूह, अन्धकार, सिर कटे हुए धड, योगिनियो के साथ रुद्र और रुधिरमय भयानक भूमि-आदि को तालाब, नदी, तथा समुद्र का रूपक देते हुए वर्णन करो।

उदाहरण

(कवित्त)

शोणित सलिल, नर बानर, सलिलचर,
गिरि हनुमंत, बिष विभीषण डार्‌यो है।
चॅवर पताका बड़ी बड़वा अनलसम,
रोगरिपु जामवन्त केशव विचार्‌यो है।
वाजि सुवाजि, सुरगज से अनेक गज,
भरत सबधु इंदु अमृत निहार्‌यो है।
सोहत सहित शेष रामचन्द्र, कुश, लव,
जीति कै समर सिन्धु सांचेहू सुधार्‌यो है ॥३१॥

(इस युद्ध रूपी समुद्र मे) रक्त ही जल है तथा नर और बानर ही पानी मे रहने वाले जीव-जन्तु हैं। हनुमान जी पहाड है और विभीषण (रग में विष के रग के समान काले होने के कारण) विष है। चमर और पताकाऍ ही बडवाग्नि है और केशवदास कहते है कि जामवन्त ही रोगरिपु अर्थात् धन्वन्तरि वैद्य है। उच्चैश्रवा जैसे बहुत से घोडे और ऐरावत जैसे बहुत से हाथी है तथा भाई (शत्रुघ्न) सहित भरत, चन्द्रमा और अमृत है। लक्ष्मण के सहित श्री रामचन्द्र ही इसके शेषनाग और नारायण है, (क्योकि लक्ष्मण शेष के अवतार हैं और श्रीरामचन्द्र स्वय नारायण ही है)। इसलिए कुश और लव ने इस युद्ध भूमि को जीत कर समुद्र का सच्चा रूप दे दिया है।

आखेट वर्णन

दोहा

जुर्रा, बहरी, बाज, बहु, चीते, श्वान, सचान।
सहर, बहिलिया, भिलल्युत, नील निचोल विधान ॥३२॥
बानर, बाघ, बराह, मृग, मीनादिक, बनजन्त।
बध बन्धन बेधन बरणि, मृगया खेल अनन्त ॥३३॥

आखेट का वर्णन करते समय जुर्रा, बहरी, बाज, चीता, कुत्ता, सचान, सहर, बहेलिया, भील, नीले कुरते को पहनने का नियम, बन्दर, बाघ, बाराह (सूअर), मृग (हिरन), मछली आदि वन जन्तुओं का मारना, फँसाना तथा बेधना आदि का उल्लेख करना चाहिए।

उदाहरण (१)
(कवित्त)

तीतर, कपोत, पिक, केकी, कोक, पारावत,
कुररी, कुलंग, कल हंस गहि लाये है।
केशव शरभ, स्याह गोस, सिह रोष गत,
कूकरन पास शश शूकर गहाये हैं।
मकर समूह बेधि, बांधि गजराज मृग,
सुन्दरी दरीन भील भामनीन भाये हैं।
रीझि-रीझि गुंजन के हार पहिराये देखो,
काम जैसे राम के कुमार दोऊ आये हैं ॥३४॥

तीतर, कबूतर, चिक, मोर, चकवा, पारावत (पिंडकी), कुररी, मुर्गा और सुन्दर हस को पकड लाये है। 'केशवदास' कहते है कि शरभ, स्याह गोस, क्रुद्ध सिंह तथा कुत्तो के द्वारा उन्होने खरगोश और शूकरो को भी पकड़ लिया है। मगरो के समूह को बेधकर तथा गजराज और हिरनो को बाँधकर लाते समय सुन्दर गुफाओ मे भील की स्त्रियो के मनो को अच्छे लगे, इसलिए उन्होने प्रसन्न हो-होकर घुघुंचियो के हार पहना दिए है। दोनो कामदेव के समान रूपवान श्रीरामचन्द्र के कुमार (लव कुश) आखेट करके आये है।

(२)
कवित्त

खलक में खैल भैल, मनमथ मन ऐल,
शैलजागैल के शैल गैल प्रति रोक है।

सेनानी के सट पट, चन्द्र चित चटपट,
अति अति अटपट अतक के ओक है।
इन्द्रजू के अकबक, धाताजू के धकपक,
शंभु जू के सकपक 'केशौदास' को कहै।
जब जब मृगया को राम के कुमार चढै,
तब तब कोलाहल होत लोक लोक है ॥३५॥

जब जब मृगया के लिए श्रीरामचन्द्र जी के कुमार (लव और कुश) जाते है, तब तब ससार मे खलबली मच जाती है। कामदेव के मन मे उदासी छा जाती है (क्योकि उसे इस बात का भय लगता है कि मेरी सवारी के मकर का शिकार न कर लें) और पार्वती के पर्वत-कैलाश की तो गली-गली मे रोक हो जाती है। (क्योकि वहाँ पार्वती जी को भय होता है कि मेरी सवारी सिह का आखेट न कर बैठे, या हाथी के धोखे श्रीगणेश जी को न बाध डालें)। सेनानी अर्थात् शिवजी के बडे पुत्र सोम कार्त्तिकेय जी सटपटा गये है कि मेरे मोर की खबर न ले बैठे, चन्द्रमा के मन मे चटपटी मची है कि मेरा हिरन न मारा जाय और यमराज महाराज के घर तो बडी अटपट कठिनाई का अनुभव होने लगता है क्योकि उन्हे अपने भैंसे की चिन्ता सवार हो जाती है कि कहीं वही उनके दाव मे न आ जाय। इन्द्र अकबका जाते है कि मेरा ऐरावत हाथी उनकी दृष्टि मे न आ जाय, ब्रह्माजी के मन मे अपने हस के लिए धक पक मच जाती है और 'केशवदास' कहते है कि श्री शकर जी अपने नदी के लिए ऐसे सकपका जाते हैं कि उसका वर्णन कोई क्या कर सकता है।

जलकेलि वर्णन

दोहा

सर, सरोज, शुभ, शोभ भनि, हिय सों पिय मन मेलि।
गहिबो गत भूषणनिको, जलचर ज्यों जल केलि ॥३६॥

जल-क्रीडा के वर्णन मे तालाब, कमल, सुन्दर शोभा, प्रियतम से हृदय से हृदय मिलाकर गोता लगाने, गिरे हुए गहनो को नीचे तक पहुँचने के पहले पकडने तथा जलचरा की भाति जल मे क्रीडा करने का वर्णन करना चाहिए।

उदाहरण

कवित्त

एक दमयन्ती ऐसी हरै, हँसि हँस बस,
एक हसिनी सी बिसहार हिय रोहिये।
भूषण गिरत एक लेत बूड़ि बीचि बीच,
मीन गति लीन, हीन उपमान टोहिए ॥
एकै मत कै कै कंठ लागि बूड़ि बूड़ि जात,
जल देवता सी दृग-देवता विमोहिये।
'केशौदास' आस-पास भँवर भँवत जल—
केलि मे जलज मुखी जलज सी सोहिये ॥३७॥

'केशवदास' कहते है कि जल-क्रीड़ा मे कमल-मुखी सुन्दरियाँ कमल के समान सुशोभित हो रही है। उनमे से कोई दमयन्ती के समान हसती हुई हस के बच्चो को पकडने दौडती है, किसी हसिनी जैसी सुन्दरी के गले मे मृणाल का हार सुशोभित हो रहा है। कोई गिरे हुए गहनो को, लहरो मे गोता लगाकर निकाल लेती है। उसकी चचलता के आगे मछली की गति भी कुछ नहीं है अत उसकी उपमा खोजना व्यर्थ है। कुछ आपस मे सलाह करके, पानी मे गले तक डूब जाती है, वे जल-देवता जैसी प्रतीत होती हैं और जिन्हे देखकर नेत्र विमोहित हो जाते है। उनके आस-पास भँवरचक्कर काटते है।

विरह वर्णन

दोहा

श्वास, निशा, चिन्ता बढ़ै, रुदन परेखे बात ।
कारे, पीरे होत कृश, ताते सीरे गात ।।३८।।
भूख प्यास सुधि बुधि घटै, सुख निद्रा द्युति अंग ।
दुखद होत है सुखद सब, केशव विरह प्रसंग ।।३६।।

'केशवदास' कहते है कि विरह के समय श्वास, निशा तथा चिन्ता बढ जाती है । (श्वास तेज चलती है, रात बडी जान पडती है और चिन्ता अधिक हो जाती है) । रुदन और प्रतीक्षा की बात ही हर समय रहती है, काला, पीला, दुबला गर्म और ठडा शरीर होता रहता है । भूख, प्यास तथा सुध-बुध घटने लगती है और सुख, नींद तथा शरीर की शोभा आदि सुखद बाते दुखद हो जाती है ।

उदाहरण (१)

(कवित्त)

बार बार बरजी मै, सारस सरस मुखी,
आरसी लै देख सुख या रस मे बोरिहै ।
शोभा के निहोरे तौ निहारितन नेकहू तू,
हारी है निहोरि सब कहा केहू खोरि है ।
सुख को निहोरो जो न मान्यो सोभली करीन,
'केशौ राय' कीसौ तोहि जोऽब मानमोरि है ।
नाह के निहोरे किन मानति निहोरति है,
नेह के निहोरे फेरि मोहि तो निहोरि है ।।४०।।

(नायिका की भेजी हुई सखी रूठे हुए नायक से कहती है कि जब मेरी सखी मानकर बैठी थी और आप मनाने गये थे तब उसने मान नहीं छोडा और आप रूठ कर चले आये । मुझे तभी इस बात का भान हो रहा था कि मुझे आना पडेगा, अत मैंने उसे समझाते हुए कहा था कि)

हे कमल से भी बढकर सुन्दर मुख वाली ! मैंने तुझे बार-बार मना किया। (परन्तु तू मान नहीं छोडती) ? तनिक दर्पण लेकर अपना मुख देख ! (जिससे मान के आभास का तुझे पता तो चले। तू फिर इसी प्रेम रस मे डूबेगी (अभी मान किये बैठी है) शोभा देखने के बहाने ही तू नायक की ओर तनिक भी नहीं देखती। हम सब मना-मना कर हार गईं (पर तू नहीं मानती इसमे अब किसी का दोष नहीं। अपने को ही सुख देने वाली बातो को तू नहीं मानती, यह अच्छा नहीं करती। तुझे सौगध है जो तू मान छोडे। अभी तो तू नायक के मानने पर मानती नहीं, फिर (जब नायक चला जायगा) प्रेम न आकर, तू (नायक को मानने के लिए) मुझसे विनती करेगी।

(२)

हरित हरित हार, हेरत हियो हेरात,
हारी हौं हरिन नैनी हरि न कहूं लहौ।
वनमाली ब्रज पर, बरसत वनमाली,
वनमाली दूर दुख केशव कैसे सहौ।
हृदय कमल नैन, देखिकै कमल नैन,
होहुँगी कमल नैनी, और हौ कहा कहौ।
आप घने घनश्याम, धन ही से होत घन,
सावन के द्यौस घन स्याम बिनु क्यों रहौ ॥४१॥

(एक सखी से अपनी विरहावस्था का उल्लेख करती हुई नायिका कहती है कि) जिन हरे-हरे जगलो को देखकर हृदय विमुग्ध होता है, उन्हे देख-देख कर मै हरिन जैसे नेत्रवाली हार गई, परन्तु हरि (श्रीकृष्ण) कहीं पर भी नहीं मिलते। वनमाली (वनो से घिरे हुए) ब्रज पर बनमाली अर्थात् बादल बरस रहे है और बनमाली--श्री कृष्ण--दूर है। मै इस दुख को कैसे सहूँ ? और यदि हृदय-कमल के नेत्रो मे कमल नयन (कमल जैसे नेत्र वाले) श्री कृष्ण को देखकर स्थिर रहूँ—तो

कमल-नैनी (जल से भरे हुए नेत्र वाली) हो जाऊँगी । अर्थात् ध्यान मे देखने पर और भी रोऊँगी । और अधिक क्या कहूँ ? ये आप (पानी) के भरे घनश्याम (बादल) मेरे लिए तो घन (हथौडे) के समान हो रहे है । मै सावन के दिनो मे घनश्याम के बिना कैसे रहूँ ?

(३)

सवैया

मेह के है सखि आँसू उसासनि, साथ निशा सुविसासिनि बाढ़ी ।
हास गयो उड़ि हंसिनि ज्यो, चपलासम नींदगई गति काढ़ी ।।
चातक ज्यों पिवपीव रटै चढ़ि, तापतरंगिनि ज्यो अति गाढ़ी ।
केशव वाकी दशा सुनिहौ अब आगि बिना अँगअंगनि डाढ़ी ।।४२।।

हे सखी ! उसके आँसू क्या है; मानो मेह है (वर्षा हो रही है) । उसकी श्वासो के साथ ही यह विश्वासघातिनी रात भी बढ गई है । उसकी हँसी तो हस की तरह कहीं उड कर चली गई है और नींद तो चचला (बिजली) की गति से भी आगे बढ गई है । जैसे बिजली क्षण मात्र के लिए चमक जाती है, वैसे क्षण मात्र को ही आकर चली जाती है वह चातक की तरह बार बार 'पी, पी' की पुकार करती रहता है और उसके शरीर मे ताप (जलन) की अति गाढी (बहुत तीव्र) तरगे उठ रही है । (शरीर वियोग्नि से जल रहा है) । 'केशवदास' (सखी की ओर से सखी की दशा का वर्णन करते हुए सखी से) कहते है कि तुम उसकी दशा क्या सुनोगी ? बिना आग के ही बेचारी के अग-अग जले जा रहे है ।'

(४)

सवैया

भूलि गयो सबसों रसरोष, मिटे भवके भ्रम रैनि विभातो ।
को अपने परको पहिचानत, जानत नाहिनै शीतल तातो ।।
नीकही मे वृषभानललोकी भईसु, न जीकी कहीपरै बातो ।
एकहिबेर न जानिये केशव काहेते छूटगये सुख सातो ।।४३।।

उसका सबसे प्रेम और क्रोध करना भूल गया। ससार के भ्रम स्वरूप रात-दिन के ज्ञान का आभास भी मिट गया। (अर्थात् रात और दिन की पहचान भी नहीं रही) । 'कौन अपना है ? कौन पराया ?' इसकी भी पहचान नहीं रही। ठड और गर्म की पहचान भी जाती रही थोडी ही देर मे राधा की ऐसी दशा हो गई कि कुछ कहते नहीं बनता। हे केशव (कृष्ण) ! पता नहीं, एकही बार मे (अचानक) उसके सातो सुख क्यो छूट गये हैं ?

स्वयवरवर्णन

दोहा

शची स्वयम्बर रक्षिणी, मण्डल मंचबनाव।
रूप, पराक्रम, वंशगुण, वर्णिय राजा राव ॥४४॥

स्वयवर की रक्षिणी या अधिष्ठात्री शची (इन्द्राणी), मडलाकार मच की बनावट और राजा-रावो के रूप, पराक्रम, वश तथा गुणो का उल्लेख स्वयबर के वर्णन मे करना चाहिए।

उदाहरण

सवैया

मण्डली मंचनिकी नृपमण्डल, मण्डित देखिये देव सभासी।
दन्तनिकी द्युति देहकी दीपति, भूषणज्योति समेत अभासी ॥
फूलनिकी छवि अम्बर की छवि छत्रनकी छवि तत्त्वण भासी।
सोहत है अति सीयस्वयम्वर आनन चन्द्र प्रवेश प्रभासी ॥४५॥

सीताजी के स्वयबर मे मचो की मडली है। उन पर बैठी हुई राजाओ की मण्डली देव-सभा सी जान पडती है। उनके दाँतो की द्युति, शरीरो की चमक तथा गहनो की कान्ति अनन्त आभा सी जान पडती है। फूलो की शोभा, आकाश की छवि तथा राजछत्रो की शोभा भी उस समय प्रकाशित हो रही है। उस स्वयबर के बीच में सीता

जी चन्द्रमा जैसी और यह राज मडली चन्द्रमा के परिवेष (चन्द्रमा के चारो ओर का ज्योर्तिमय घेरा) सी जान पडती है ।

सुरति वर्णन

दोहा

सुरति सात्त्विकीभावमणि, मणित रुनित मंजीर ।
हाव, भाव, बहि, अंतरति, अलज सलज्ज शरीर ।।४६।।

सुरति के वर्णन मे सात्त्विक भाव, तत्कालीन उच्चरित होने वाले शब्द, बजते हुए बिछुए, हाव भाव, वहि और अत रति, शरीर की निर्लज्जता और लज्जा का उल्लेख करना चाहिए ।

उदाहरण

कवित्त

'केशौ दास, प्रथमहि उपजत भय भीरु,
रोष, रुचि, स्वेद, देह कंपनगहत है ।
प्राण-प्रिय बाजीकृत वारन पदाति क्रम,
विविध शबद द्विज दानहि लहत है ।
कलित कृपा न कर सकति सुमान त्रान,
सजि सजि करन प्रहारन सहत हैं ।
भूषन सुदेश हार दूषन सकल होत,
सखि न सुरति रीती, समर कहत हैं ।।४७।।

[किसी सखी की ओर से, उसकी अतरग सखी से सुरति का वर्णन करते हुए] 'केशवदास' कहते है कि पहले तो भय उत्पन्न होता है । (परन्तु नायक के साहस दिखलाने पर, भीरुता जाती रहती है) और रोष, रुचि, स्वेद तथा देह कप आदि भाव उत्पन्न होते है । तब बाजी करण औषधियो से पुष्ट (नायक) मना करते रहने पर भी पैरो का अतिक्रमण करता है । फिर (सुरति-समयानुकूल) तरह-तरह के शब्द उच्चारित होने लगते है तथा दाँतो का दान होने लगता है अर्थात् दाँतो

से अधरो का खडन होता है) तब (नायक मे निर्दयता आजाती है और) वह कृपा नहीं दिखाता परन्तु साथ ही भरसक मान की रक्षा भी करता जाता है। तब (कुच) भली-भाँति नखो का प्रहार सहते है। ऐसे समय सुन्दर हार आदि भूषण, दूषण (दोष युक्त या बुरे) प्रतीत होने लगते है। (क्योकि आलिगन में अडचन डालते हैं) । हे सखी ! यह सुरति की रीत अच्छी होती है ! इसी समय किसी बाहरी सखी ने पूछा — 'क्या सुरति का वर्णन कर रही हो ?' उसने उत्तर दिया—'नहीं सखी ! समर या युद्ध का वर्णन कर रही हू ।' देखो—

युद्ध मे पहले तो भीरु लोग भय खाते है अर्थात् डर कर भाग जाते है फिर शूरो की रोष रुचि जागृत होती है जिससे क्रोध की गर्मी से उन्हे पसीना आ जाता है परन्तु वे काँपते नहीं। वे लोग अपने प्यारे प्राणो की बाजी लगा देते है। हाथी तथा पैदल सिपाही चलते दिखाई पडते है और तरह तरह के (उत्साहवर्द्धक) शब्द होने लगते है और पक्षी (गिद्ध आदि) माँस का दान पाते है। हाथो मे सुन्दर कृपाण (तलवार) रहती है जो मान की रक्षा कर सकती है। वीर लोग सज सजकर शत्रुओ के) हाथो के प्रहार सहते है। उस समय वीर लोग, स्वदेश को ही भूषण समझते है और हार अर्थात् पराजय को बडा भारी दूषण मानते है। (समर का वर्णन करते समय) हे सखी ! लोग इन्हीं बातो का वर्णन करते है ।

नवाँ-प्रभाव

[विशिष्टालंकार वर्णन]

जानि, स्वभाव, विभावना, हेतु, विरोध, विशेष।
उत्प्रेक्षा, आक्षेप, क्रम, गणना, आशिष लेष ॥ १ ॥
प्रेम, सुश्लेष, सभेद है, नियम विरोधी मान।
सूक्ष्म, लेश, निदर्शना, ऊर्ज सुर सब जान ॥ २ ॥
रस, अर्थांतरन्यास है, भेद सहित व्यतिरेक।
फेरि अपह्नुति उक्ति है, वक्रोकति सविवेक ॥ ३ ॥
अन्योकति व्यधिकरन है, सुविशेषोकति भाषि।
फिरि सहोक्तिको कहत है, क्रमही सों अभिलाषि ॥ ४ ॥
व्याजस्तुति निंदा कहै, व्याजनिंदा स्तुतिवंत।
अमित, सुपर्यायोक्ति पुनि, युक्ति, सुनै सबसंत ॥ ५ ॥
सुसमाहित जुप्रसिद्ध है, और कहे विपरीत।
रूपक, दीपक, भेदपुनि, कहि प्रहेलिका मीत ॥ ६ ॥
अलंकारपरवृत्त कहै, उपमा, जमक, सुचित्र।
भाषा इतनै भूषणनि, भूषित कीजै मित्र ॥ ७ ॥

हेमित्र ! स्वभाव, विभावना, हेतु, विरोध, विवेष, उत्प्रेक्षा, आक्षेप क्रम, गणना, आशिष, प्रेम, श्लेष (नियम और विरोधी), सूक्ष्म, लेष, निदर्शना, ऊर्जस्वर, रसवत, अर्थान्तिन्यास, व्यतिरेक अपन्हुति, उक्ति-(वक्र, अन्य, व्याधिकरण, विशेष और सह) व्याजस्तुति, व्याजनिन्दा अमित, पर्यायोक्ति, युक्ति, समाहित, प्रसिद्ध, विपरीत, रूपक, दीपक, प्रहेलिका, परिवृत्त, उपमा, यमक और चित्र अलंकारो से, अपनी भाषा को सजाइए।

१—स्वभाव

जाको को जैसो रूप गुण, कहिये ताही साज।
तासों जानिस्वभाव कहि, बरणत है कविराज ॥८॥

जिस व्यक्ति या वस्तु का जैसा रूप अथवा गुण हो उसको उसी प्रकार से वर्णन करने को कविराज 'स्वभाव' या 'स्वभावोक्ति' कहते है।

उदाहरण (१)

रूप वर्णन

(कवित्त)

पीरी पीरी पाट की पिछौरी कटि केशौदास,
पीरी पीरी पागै पग पीरीये पनहियां।
बड़े-बड़े मोतिन को माला बड़े-बड़े नैन,
भृकुटी कुटिल नान्ही-नान्ही बघनहियां।
बोलनि, चलनि मृदु हँसनि चितौनिचारु,
देखत ही बनै पै न कहत बनैहियां।
सरजू के तीर तीर खेलै चारों रघुवीर,
हाथ द्वै द्वै तीर राती रातियै धनुनियां ॥९॥

'केशवदास' कहते है कि पीले पीले कपडे की पीली-पीली पिछौरी कमर मे कसे हुए है, पीली ही पगडियाँ पहने हुए हैं और पैरो मे भी पीले ही जूते पहने है। बडे-बड़े मोतियो की मालाएँ गले मे पडी हुई है। बडी बडी उनकी आँखें हैं भौहे टेढी है और छोटे छोटे बाघ के नख पहने हैं। उनका बोलना, चलना, मृदु मुसकाना और सुन्दरता के साथ देखना देखते ही बनता है, कहते नहीं बनता। सरयू के किनारे रघुवश के चारो कुमार (श्रीराम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघन) खेल रहे है। उनके हाथो मे लाल-लाल तीर हैं और लाल-लाल ही धनुष भी हैं।

उदाहरण—२
गुण वर्णन
(कवित्त)

गोरे गात, पातरी, न लोचन समात मुख,
उर उरजातन की बात अब रोहिये।
हँसति कहत बात, फूल से झरत जात,
ओंठ अवदात राती देख मन मोहिये।
स्यामल कपूरधूर की ओढनी ओढ़े उड़ि,
धूरि ऐसी लागी 'केशो' उपमा न टोहिये।
काम ही की दुलही सी काके कुलउलहीसु,
लहलही ललित लतासी लोल रोहिये ॥१०॥

गोरा शरीर है पतली-दुबली है लोचन मानो मुख मे समाते ही नहीं और कुचो की बात तो हृदय मे अकित कर लेना चाहिए। जब हँसती हुई बाते करती है, तब फूल से झडते जाते है। सुन्दर ओठो की लाल लाल रेखा मन को मोहे लेती है। 'कपूरधूर' की काली ओढनी ओढे हुए है। वह ऐसी लगती है मानो कपूर की धूल ही उडकर अग पर आ लगी हो। 'केशवदास' कहते है कि उसकी उपमा ही ढूँढना व्यर्थ है। कामदेव की दुलही-रति के समान न जाने यह किसके कुल मे उत्पन्न हुई है। वह लहलही लता के समान सुन्दर और चचल है।

२—विभावना
दोहा

कारज को बिनु कारणहि, उदौ होत जेहि ठौर।
तासों कहत विभावना, 'केशव' कविसिरमौर ॥११॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ बिना कारण ही कार्य का उदय होता है, वहाँ श्रेष्ठ कविगण उसे विभावना कहते है।

उदाहरण

(कवित्त)

पूरन कपूर पान खाये जैसी मुख-बास,
अधर अरुण रुचि सुधा सों सुधारे है।
चित्रित कपोल, लोल लोचन, मुकुट, ऐन,
अमल झलक, झलकनि मोहि मारे है।
भृकुटी कुटिल जैसी न करहू होसि,
आंजी ऐसीआंखै 'केशौराय' हेरि हारे है।
काहे के सिगार कै बिगारति है मेरी आली,
तेरे अङ्ग बिनाही सिङ्गार के सिङ्गारे हैं ॥१२॥

तेरे मुख की सुगंध कपूर (अथवा पान खाये हुए मुख की तरह है।) तेरे लाल ओठ मानो अमृत मे सने हुए है । तेरे चित्रित गालो तथा चचल नेत्रो ने अपनी निर्मल झलक से दर्पण तथा हिरणो को मोहित करके मार डाला है । तेरी भौंहे ऐसी टेढी है कि वैसी बनानें पर भी नहीं बन पातीं। आँखें मानो काजल लगी हुई सी है जिन्हे देख केशवराय (श्रीकृष्ण) भी हार गये है। हे सखी ! तू शृगार करके अपने अगो को क्यो बिगाडती है ? तेरे अग तो बिना शृगार किये ही शृगार किये से जान पडते है ।

विभावना दूसरी

दोहा

कारण कौन हु आनते, कारज होय जु सिद्ध ।
जानौ अन्य विभावना, कारण छोड़ि प्रसिद्ध ॥१३॥

जहाँ प्रसिद्ध कारण को छोडकर किसी दूसरे कारण से कार्य सिद्ध होता है, वहाँ दूसरे प्रकार की विभावना समझो ।

उदाहरण
सवैया

नेकहू काहू नवाई न वानी, नवाये बिनाही सुवक्र भई है।
लोचनश्री विझुकाये बिना, विझुकीसी बिना रँगरागमई है ॥
केशव कौनकी दीनी कहो यह, चद्रमुखी गति मद लई है।
छोली न, होहि गई कटि छीन सुयौवन की यह युक्ति नईहै ॥१४॥

उसकी वाणी को किसी ने नवाया (झुकाया) नहीं है, बिना झुकाये ही यह टेढी हो गई है। इसी तरह आँखो की शोभा भी बिना चचल किए हो चचल हो रही है और बिना रग के ही रजिन सी प्रतीत हो रही है। 'केशवदास' कहते है कि बतलाओ, इस चन्द्रमुखी ने किसकी दी हुई मदचाल प्राप्त की है? अर्थात् इसकी यह धीमी चाल किसकी दी हुई है? बिना छीले ही इसकी कमर क्षीण हो चली है। यौवन (युवावस्था) की यह युक्ति अद्भुत है।

३—हेतु

हेतु होत है भांति द्वै, वरणत सब कविराव।
'केशवदास' प्रकाश करि, वर्णि सुभाव अभाव ॥१५॥

'केशवदास' कहते है कि सभी कविराज 'हेतु' को दो तरह का बतलाते हैं। एक 'अभाव' और दूसरा सभाव।

उदाहरण—१
सभाव

केशव चंदनवृंद घने, अरविंदन के मकरंद शरीरो।
मालती, बेलि, गुलाब सुकेतकी केतिक चपक को बन पीरो ॥
रंभनि के परिरभन संभ्रम, गर्व घनो घनसार को सीरो।
शीतल मन्द सुगन्ध समीर हरयो इनसो मिली धीरज धीरो ॥१॥

केशवदास' कहते है कि चदन से सुगन्धित होकर कमलो का मकरद अपने शरीर मे लेकर, मालती, बेला, गुलाब, केतकी तथा चपक के पीले बन से लदने के कारण मन्द होकर और दौड-दौडकर केलो से

मिलकर, उनके कपूर की शीतलता का गर्व हरण करने से शीतल होकर, शीतल मन्द, सुगन्ध वायु ने इनका दृढ धैर्य हर लिया। (भाव यह है कि वायु ने स्वतः धैर्य हरण नहीं किया प्रत्युत ऊपर लिखे हुए हेतुओ से ही उसे इतना बल प्राप्त हुआ।)

उदाहरण—२

अभावहेतु।

जान्यो न मै यौवनको, उतरयो कब काव को काम गयोई।
छांड़ न चाहत जीव कलेवर, जोरि कलेवर छाड़ि दयोई॥
आवत जाति जरा दिन लीलति रूप जरा सब लीलि लयोई।
केशव राम ररौ न ररौ अनसाधेही सामन साध भयोई॥१७॥

मेने जान ही न पाया कि युवावस्था का मद कब उतर गया। काम की भावनाएँ कब लुप्त हो गई। जीव, शरीर को छोडना ही चाहता है और शरीर ने शक्ति को छोड ही दिया है। आते-जाते दिनो को जरा (वृद्धावस्था) लीलती जाती है। जरा (वृद्धावस्था) ने सारे सौंयद को लील ही लिया है। 'केशवदास' कहते हैं कि मै राम रटू या न रटू, बिना साधन किये ही (वृद्धावस्था के कारण) साधु तो हो ही चुका हूँ।

उदाहरण—३

सभाव-अभाव हेतु

जादिनते वृषभानलली ही अली मिलये मुरलीधर तेही।
साधन साधि अगाधि सबै, बुधि शोधि जे दूत अभूतन मेंही॥
ता दिनते दिनमान दुहून को केशव आवति बातै कहेही।
पीछे अकाश प्रकाशै शशी, चढ़ि प्रेम समुद्र बढ़ै पहिलेही॥१८॥

जिस दिन से सखी ने राधा को, अनेक साधनो को काम मे लाकर अभूतपूर्व दूतो की बुद्धिमानी से, श्रीकृष्ण से मिला दिया, उसी दिन से, 'केशवदास' कहते है कि दोनो के मान अभिलाषाओ) के मान ऐसे

बढे है कि कहते ही बनता है। आकाश मे चन्द्रमा पीछे निकलता है, उनके दृश्यो का प्रेम समुद्र पहले ही उमडने लगता है।

४—विरोध

दोहा

'केशवदास' विरोधमय,। रचियत वचन विचारि।
तासों कहत विरोध सब, कविकुल सुबुधिविचारि ॥१९॥

'केशवदास' कहते है कि इसमे विचार पूर्वक विरोधमय रचना की जाती है इसी से कवि लोगो ने अपनी बुद्धि को सुधार कर अर्थात् खूब सोच-समझकर इसका नाम 'विरोध' रखा है।

उदाहरण

कवित्त

सोभत सुबास हास सुधा सों, सुधारयो विधि,
विष को निवारा जैसा तैयो मोहकारी है ॥
'केशवदास' पावन परम हसगति तेरी,
पर होय हरन प्रकृति कौन पारी है।
वारक बिलोकि बलबीर से बलीन कहँ,
करत बरहि वश, ऐसी वैसावारी है।
ऐसी मेरी सखी तेरी कैसे कै प्रतीत कीजै,
कृष्णानुसारी दृग करणानुसारी है ॥२०॥

वे सखी! तेरा हास्य सुगन्धित है, मानो अमृत मे साना हुआ है परन्तु विषैले पदार्थों की भाँति मूर्छा उत्पन्न करने वाला है। 'केशवदास' कहते है परम पवित्र हम जेसी तेरी चाल है, परन्तु दूसरो के हृदयो को हरण करने का स्वभाव तेरा किसने बनाया है? तू एक बार मे ही कृष्ण को देखते ही हठपूर्वक वश मे कर लेती है, यद्यपि तेरी इतनी छोटी वयस है। हे सखी! तेरा विश्वास कैसे किया जाय? तेरे करणानुसारी (कानो तक फैले हुए) नेत्र कृष्णानुसारो (कृष्ण के अनुगामी) है।

इस कवित्त के पहले चरण म 'अमृत मे सना हुआ हास्य, विष की भाँति मूर्छा उत्पन्न करता है,' अत विरोध है। दूसरे चरण मे 'परम पवित्र हस' के दो अर्थ हस और परमहस होने के कारण विरोध है। परमपवित्र परम हस जैसा स्वभाव होने पर दूसरो का हृदय हरण करे—यही विरोध है। तीसरे चरण मे छोटी वयस मे बली को वश मे करने का उल्लेख है अतः विरोध है और चौथे मे कृष्ण तथा करण परस्पर विरोधी थे, इस दृष्टि से 'कृष्णानुसारी' तथा 'करणानुसारी' शब्दो मे 'विरोधाभास' है।

उदाहरण (२)

आपु सितासित रूप, चितै चित, श्याम शरीर रगै रगराते।
'केशव' कानन ही न सुनै, सु कहै रस की रसना बिनु बाते।
नैन किधौ कोउ अतरयामी री, जानति नाहिन बूझति ताते।
दूर लौ दोरत है बिनु पायन, दूर दुरी दरसै मति जाते ॥२१॥

तेरे नेत्र काले और श्वेत हैं परन्तु श्याम-शरीर (कृष्ण) की ओर देखकर, उनके चित्त को अनुराग के रग मे रग मे देते है। (अनुराग का रग लाल माना जाता है)। 'केशवदास' कहते है कि वे कानहीन होने पर भी बात सुन लेने है और बिना जीभ के ही प्रेम की बातें किया करते है। तेरी ये आँखें या कोई अन्तर्यामी (मन का भद जानने वाले) महात्मा पुरुष है ? मै जानती नहीं, इसलिए पूँछती हूँ। बिना पेरो के होने पर भी दूर तक दौड जाते है और दूसरो के हृदयो मे छिपी हुई बुद्धि भी इन्हे दिखलाई पड जाती है अर्थात् (दूसरो के मन का अभिप्राय जान लेते है)।

विरोधाभास लक्षण

दोहा

बरनत लगै विरोध सो, अर्थ सबै अविरोध।
प्रगट विरोधाभास यह, समझत सबै सुबोध ॥२२॥

जो वर्णन करते समय विरोध सा जान पडे, परन्तु अर्थ करने पर विरोध न हो उसे सभी बुद्धिमान, विरोधाभास कहते है।

उदाहरण

कवित्त

परम पुरुष कुपुरुष सग शोभियत,
दिन दानशील पै कुदान ही सो रति है।
सूर कुल कलश पै राहु को रहत सुख,
साधु कहै साधु, परदार प्रिय अति है।
अकर कहावत धनुष धरे देखियत,
परम कृपालु पै कृपान कर पति है।
विद्यमान लोचन द्वै, हीन वाम लोचन सों,
'केशौराय' राजाराम अद्भुत गति हैं॥२३॥

'केशवदास' कहते है कि राजा रामचन्द्र जी की गति अद्भुत है। उन्हे स्वयं परम पुरुष होते हुए भी कुपुरुषो (पृथ्वी के मनुष्यो) का सग अच्छा लगता है। प्रतिदान दान देते है परन्तु कुदान (पृथ्वीदान) मे ही अधिक रुचि रहती है। वह सूर्य-कुल-कलश अर्थात् सूर्यवश मे श्रेष्ठ है परन्तु राहु (मार्ग) का उनके राज्य मे सुख रहता है। साधु अथवा सज्जन उन्हे सज्जन कहा करते है परन्तु उन्हे वह परदार प्रिय (लक्ष्मी के वल्लभ) है। अकर (बिना हाथ वाले) कहलाते है पर हाथ मे धनुष धारण किये रहते है। परम कृपालु है, परन्तु कृपान कर पति (कृपाणधारियो के स्वामी है)। उनके दो नेत्र विद्यमान है परन्तु वाम-लोचन (कुलटा स्त्री) से हीन है (अर्थात् उससे सम्पर्क नहीं रखते)।

[इस कवित्त मे—पहले परम पुरुष होते हुए भी कुपुरुष अच्छे लगते है, दानशील होते हुए भी कुदान से रति रखते है, सूर्यकुल के होकर भी राहु को सुखदायी है, साधु कहलाने पर भी परदार प्रिय है, अकर (हाथ रहित) होने पर, धनुष धारण किये है और आँखे रहने

'र भी वामलोचन से हीन है—आदि परस्पर विरोधी अर्थो का आभास होता है, परन्तु जब ऊपर लिखा हुआ वास्तविक अर्थ निकल आता है, तब विरोध चला जाता है, इसलिए यह 'विरोधाभास' कहलाता है, क्योकि इसमे 'विरोध' का आभास मात्र रहता है, वास्तविक विरोध नहीं]

५—विशेष

दोहा

साधन कारण विकल जहँ होय साध्य की सिद्धि ।
'केशवदास' बखानिये, सो विशेष परसिद्धि ।।२४।।

'केशवदास' कहते है कि जहाँ पर (कार्य को सम्पन्न करने वाला) साधन अर्थात् कारण के अपूर्ण रहने पर भी साध्य (कार्य) की सिद्धि हो जाय, वहाँ पर विशेष अलकार होता है ।

उदाहरण (१)

सवैया

साँपको ककण, माल कपाल, जटानि की जूटि रही जटि आँतै ।
खाल पुरानी पुरानोई बैल, सुऔरकी और कहै विष मातै ।।
पारवती पति सपति देखि, कहै यह केशव सभ्रम तातै ।
आपुन मांगत भीख भिखारिन देत, दई मुँह मागी कहांतै ।।२५।।

उनके पास साप का ककण और कपोलो की माला रहती है तथा वह जटाये धारण किये हुए रहते हैं। (मारे भूख के) उनकी आँते पेट मे चिपटी रहती है । पुरानी खाल ओढते है, एक पुराना बैल उनके पास है, और विष खाये हुए की तरह और की और बातें किया करते है । 'केशवदास' कहते है कि पार्वती पति की यह सपत्ति देखकर मुझे भ्रम होता है, इसीलिए कहता हूँ कि वह स्वय तो भीख माँगते है और भिखारियो को मुँहमाँगी भीख कहाँ से दे देते है ?

उदाहरण (२)

कवित्त

तमोगुण ओप तन ओपित, विषम नैन,
लोकनि विलोप करै, कोप के निकेत है।
मुख विष भरे, विषधर धरे, मुण्डमाल,
भूषित विभूति, भूत प्रेतनि समेत हैं।
पातक पता के युत, पात की ही को तिलक,
भावै गीत काम ही को, कामिनि के हेत है।
योगिन की सिद्धि, सब जग की सकल सिद्धि,
'केशौदास' दासि ही ज्यौ दासन को देत है ॥२६॥

उनका शरीर तमोगुण की शोभा से भूषित है। वह स्वय विषमनैन अर्थात् तीन नेत्र वाले है। लोको का नाश करनेवाले (प्रलयकारी) है तथा कोप (क्रोध) के तो घर ही है अर्थात् बडे क्रोधी है। मुख मे विष रखे हुए है, शरीर पर साँपो को धारण करते है गले मे मुडमाला पहने है, अग मे भस्म लगी रहती है और भूत-प्रेतो का साथ रहता है। उन्हे पिता के शिर काटने का पाप लगा है और पातकी (कलकी) चन्द्रमा को ही तिलक बनाये हुए है और जिन्हे काम का ही गीत अच्छा लगता है (अर्थात् जिन्हे काम-दहन की प्रशसा ही सुहाती है) तथा जो कामिनी (गौरी पार्वती) के हितैषी है। 'केशवदास' कहते है कि स्वय अमगलरूप होते हुए भी वह अपने दासो भक्तो) को योगियो की सिद्धि तथा ससार की सभी सिद्धियो को, दासी की भाँति दे डालते है।

उदाहरण (३)

सवैया।

बाजि नही, गजराज नही, रथपत्ति नहीं, बल गात विहीनो।
केशवदास कठोर न तीक्षण, भूलिहू हाथ हथ्यार न लीनो ॥
जोग न जानति मंत्र न जाप, न तत्र न पाठ पढ्यो परवीनो।
रक्षक लोकन के सुगॅवारिन, एक विलोकनि ही वश कीनो ॥२७॥

जिसके पास न घोडा है, न हाथी है, न रथ है, न पैदल सिपाही है और स्वय भी जो बलहीन है। 'केशवदास' कहते हे कि जिसने भूलकर भी हाथ मे कठोर या तीक्ष्ण हथियार नहीं लिया। न वह योग जानती है और न मत्र अथवा यत्र ही जानती है और न उसने तत्र का ही प्रवीण पाठ पढा है। फिर भी उस गवारिनो ने तीनो लोको के रक्षक (श्रीकृष्ण) को एक ही दृष्टि से, वश मे कर लिया है।

उदाहरण—४

कवित्त

ब्रज की कुमार कुमारिका वै लीने शुक शारिका,
पढावै कोक कारिकान 'केशव' सवै निबाहि।
गोरी गोरी, भोरी भोरी, थोरी थोरी वैस फिरि,
देवता सी दौरि दौरि आई चारों चोरी चाहि।
विनगुन, तेरी आन, भ्रकुटी कमान तान,
कुटिल कटाच्छ वान, यह अचरज आहि।
एतेमान ढीठ, ईठ मेरे को अदीठ मन,
पीठ दै दै मारती पै चूकती न कोऊ ताहि ॥२८॥

'केशवदास' (किसी सखी की ओर से) कहते हैं कि व्रज की कुमारिया (कन्याएँ), तोता-मैना को लिए, कोक-शास्त्र की परिभाषाओ को भली-भाँति पढाती है। वे लोग गोरी-गोरी, भोली-भाली और थोड़ी वयस की हैं। सबकी सब दौड़कर (श्रीकृष्ण) को छिपे-छिपे ऐसे देख आई, जैसे कोई देवता। (क्योकि देवता सबको छिपे छिपे देख लेते है और उन्हे कोई नही देखता)। तेरी सौगन्ध, बिना डोरी के भौंह रूपी धनुषो को खींचकर और उनपर कुटिल कटाक्ष के वाण रखकर, मेरे मित्र (श्रीकृष्ण) के अदृश्य मन पर ऐसा प्रहार करती है कि आश्चर्य होता है। वे अपना निशाना सामने से नहीं, पीठ दे-देकर अर्थात् पीछे से छिपे रूप से मारती है, परन्तु उनका एक भी निशाना नहीं चूकता।

उदाहरण—५

दोहा

बाँचि न आवै लिखि कछू, जानत छांह न घाम ।
अर्थ, सुनारी, बैदई करि जानत पतिराम ॥२६॥

'पतिराम' (सुनार) को न तो पढना आता है और न वह कुछ लिखना ही जानता है तथा न उसे धूप तथा छाया अर्थात् गर्मी-सर्दी का ही ज्ञान है । परन्तु फिर भी वह कविता का अर्थ लगाना, सुनारी करना तथा वैद्यक का काम भली भाँति जानता है ।

[पतिराम केशवदास' के पडोस मे रहने वाला एक सुनार था। कहते है कि विद्वानो की सत्सगति से उसे कविता का अर्थ लगाने का सुन्दर आभास हो गया था। अत केशवदास जी ने उक्त दोहा उसके सम्बन्ध मे लिखकर उसे अमर बना दिया ।

ऊपर के पाँचो उदाहरणो मे अपूर्ण कारणो से कार्यो की सिद्धि हुई है, अत विशेष अलकार है ।]

६—उत्प्रेक्षा

दोहा

केशव औरहि वस्तु मे, औरै कीजै तर्क ।
उत्प्रेक्षा तासों कहै, जिन की बुधि सपर्क ॥३०॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ और वस्तु मे और की कल्पना की जाती है वहाँ बुद्धिमान लोग उत्प्रेक्षा कहते है ।

उदाहरण (१)

हर को धनुष तोरयो, रावण को वंश तोरयो,
लंक तोरी, तोरै जैसे वृद्ध बश बात है ।
शत्रुन के सेल, शूल, फूल, तूल, सहे राम,
सुनि 'केशोराय' कीसो हिये हहरात है ।

काम तीर हू ते तिक्ष तारे तरुणीन हू के
लागि लागि उचरि परत ऐसे गात है।
मेरे जान जानकी तू जानति है जान कछू,
देखत ही तेरे नैन मैन से ह्वै जात है ॥३१॥

जिन्होने महादेव जी का धनुष तोडा, रावण के वश का नाश कर दिया और लका ऐसे तोड डाली (नष्ट कर डाली) जैसे वृद्ध की कमर को वात रोग तोड डालता है अथवा जैसे वायु पुराने बास को तोड डालती है। श्रीराम ने शत्रुओ के सेल और शूलो को फूल तथा रूई की तरह सहन कर लिया, जिसे सुनकर केशवराय (ईश्वर) की सौगध हृदय कपित हो जाता है। उनके शरीर पर, युवतियो के काम-बाणो से भी तेज नेत्र-तारे (तीखीदृष्टि), लग-लग कर उचट जाते है अर्थात् कोई प्रभाव नहीं पडता। मेरी समझ मे, हे जानकी, तू कुछ जादू जानती है कि वह श्रीराम तेरे नेत्रो के देखते ही मोम से हो जाते है।

उदाहरण (२)

कवित्त

अंक न, शशंक न, पयोधिहू को पंक न सु,
अंजन न रजित, रजनि निज नारी को।
नाहिनै झलक झलकति तमपान की न,
छिति छांड़ छाई, छिद्र नाही सुखकारी को।
'केशव' कृपानिधान देखिये विराजमान,
मानिये पमान राम बैन बनचारी को।
लागति है जाय कंट, नाग दिगपाजत के,
मेरे जान सोई कच्छ कीरति तिहारी को ॥३२॥

(चन्द्रमा के कलक के सम्बन्ध मे अपने विचार प्रकट करते हुए श्रीहनुमान जी श्रीरामचन्द्र से कहते है कि) न तो यह दाग है, न, जैसा लोग समझते है, मृग का चिन्ह है, न समुद्र का कीचड लगा है, और न

अपनी स्त्री रात्रि के काजल से ही यह रगा हुआ है। यह तमपान (पिये हुए अधकार) की झलक भी नहीं है। न पृथ्वी की छाया है और न इस चन्द्रमा मे छेद ही है, जिससे नीले आकाश की छाया दिखलायी पड़ती हो। 'केशवदास' (श्रीहनुमान जी की ओर से) कहते है कि 'हे कृपानिधान ! श्रीरामचन्द्र उस दाग को देखिए ! और मुझ बनचारी के बचनो को इस सबध मे सच मानिए। मेरी समझ मे दिग्गजो तथा दिग्पालो के कठो से निकली हुई आपकी कीर्त्ति को सुनकर चन्द्रमा को उत्पन्न हुई ईर्ष्या का यह काला दाग है।
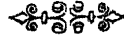
दसवाँ-प्रभाव

आक्षेपालंकार

दोहा

कारज के आरभ ही, जहँ कीजत प्रतिषेध ।
आक्षेपक तासों कहत, बहुविधि बरणि सुमेध ॥१॥

जहाँ कार्य के आरम्भ मे ही, उसका प्रतिषेध कर दिया जाता है, वहाँ विद्वान आक्षेप अलकार मानते है ।

तीनहुँ काल बखानिये, भयो जु भावी होइ ।
कविकुल कोऊ कहत है, यह प्रतिषेधहि दोइ ॥२॥

यह प्रतिषेध तीनो कालो अर्थात् भूत, भविष्य और वर्त्तमान मे वर्णित हो सकता है । परन्तु कुछ कवि लोग इसे दो ही कालो (भावी और भूत) मे वर्णन करते हैं ।

भूत कालिक प्रतिषेध

बरज्योंही हरि, त्रिपुरहर, बारक करि भ्रू भंग ।
सुनो मदनमोहनि ! मदन, ह्वैही गयो अनग ॥३॥

(कामदेव की स्त्री रति से उसकी सखी कहती है) कि मैने कामदेव को मना किया था कि त्रिपुरारि शिवजी से शत्रुता न करो । (परन्तु मेरा कहना उसने नही माना और परिणाम यह हुआ कि) हे मदन मोहनी (रति) ! उनके तनिक भ्रूभग (टेढी भौंहे करते ही मदन अनग (शरीर रहित) हो ही गये । [इसमे 'बरज्यो' भूत काल सूचक क्रिया है, अतः भूत कालिक प्रतिषेध है]

भावी प्रतिषेध

ताते गौरि न कीजिये, कौनहुँ विधि भ्रूभंग ।
को जानै ह्वैजाय कह, प्राणनाथ के अंग ॥४॥

(पार्वतीजी की सखी उन्हे समझाती हुई कहती है कि) हे गौरी ! कौन जानें तुम्हारे प्राणनाथ (शिवजी) के अग पर क्या बीते, इसलिए तुम किसी प्रकार भी टेढी भौंहे न करो अर्थात मान न दिखलाओ ।

[इसमे 'को जानै ह्वै जाय कह' भविष्य सूचक क्रिया है, अत यह भावी प्रतिषेध है]

वर्त्तमान प्रतिषेध

कोविद ! कपट नकार शर, लगत न तजहु उछाह ।
प्रतिपल नूतन नेहको, पहिरै नाह सनाह ।।५।।

नायक को समझाती हुई सखी कहती है कि हे कोविद ! इन न कार (नहीं, नहीं करने के) बाणो के लगने से अपना उत्साह न छोडो । क्योकि नाह (नायक) तो प्रतिपल वयेस्नेह का कवच पहनते हैं ।

[इसमे 'न तजहु' बर्तमान कालिक क्रिया है, अतः यह वर्तमान प्रतिषेध है]

आक्षेप के भेद

पेम, अधीरज, धीरजहु, सशय, मरण, पकास ।
आशिष, धर्म, उपाय कहि, शिक्षा केशवदास ।।६।।

'केशवदास' कहते है कि (आक्षेप मे प्रतिषेध (रोक) का कार्य) प्रेम, अधैय, धैर्य, सशय, मरण, आशिष, धर्म, उपाय और शिक्षा द्वारा किया जाता है ।

१—प्रेमाक्षेप

दोहा

प्रेम बखानतही जहाॅ, उपजत कारजबाधु ।
कहत प्रेम आक्षेप तह, तासों केशव साधु ।।७।।

'केशवदास' कहते है कि प्रेम का वर्णन करते ही, कार्य मे बाधा उत्पन्न हो जाय, वहाँ साधु (विद्वान) लोग 'प्रेमाक्षेप' बतलाते है ।

उदाहरण

कवित्त

ज्यों ज्यों बहु बरजी मै, प्राणनाथ मेरे प्राण,
अग न लगाइये जू, आगे दुख पाइबो।
त्यों त्यों हँसि हँसि अति शिर पर उर पर,
कीबो कियो आँखिन के ऊपर खिलाइबो।
एकौ पल इत उत साथ ते न जान दीन्हे,
लीन्हे फिर हाथ ही कहां लौ गुणगाइबो।
तुमतो कहत तिन्है छाड़ि कै चलन अब,
छांड़त ये कैसे तुम्है आगे उठि धाइबो ।।८।।

(परदेश जाते हुए अपने स्वामी से, उसकी भार्या कहती है कि) हे प्राणनाथ! मै आपको जैसे-जैसे मना किया था कि मेरे प्राणो को अग न लगाइये, क्योकि इसमे आगे दु ख मिलेगा, वैसे-वैसे अपने इन प्राणो को, हँस हँसकर, शिर, हृदय और आँखो पर खेलाया किये। आपने इन्हे एक पल के लिए भी अपना साथ छोड कर इधर उधर नहीं जाने दिया और इन्हे हाथो मे लिए ही घूमा किए। मै कहाँ तक आपकी प्रशसा करूँ। अब आप इन्हे छोडकर चलने की बात कहते है। सो ये आपको भला कैसे छोडे गे। आप जाने के पहले ही उठ दौडे गे।

२—अधैर्याक्षेप

दोहा

प्रेम भग वच सुनत जहँ, उपजत सात्त्विकभाव।
कहत अधीरजको सुकवि, वह आक्षेप स्वभाव ।।६।।

जहाँ पर प्रेम-भग की बात सुनते ही, सात्विक भाव उत्पन्न हो जाय वहाँ सुकवि गण उसे अधैर्याक्षेप कहते है।

उदाहरण

सवैया

केशव प्रात बड़ेही बिदाकहँ आये प्रियापहँ नेह नहेरी।
आवों महावनह्वै जु कहौ,हँसि बोल द्वै ऐसे बनाय कहेरी ॥
को प्रतिउत्तर देइ सखी सुनि, लोलविलोचन यो उमहेरी।
सौहक कै हरि हार रहे अधिरातिके लौ अँसुवा नरहेरी॥१०॥

बडे प्रातः काल केशव (श्रीकृष्ण), प्रेम मे भरे हुए, अपनी प्रिया (राधा) के पास बिदा मागने के लिए आये और जैसे ही, हँसते हुए, बाते बनाकर, बोले कि 'मै महावन हो आऊँ'। वैसे ही, हे सखी! उत्तर कौन देता! उसकी आँखो मे तो इतने आँसू उमड आये कि आधी रात तक न रुके और कृष्ण शपथ खा खाकर (कि मै न जाऊँगा) थक गये।

३—धैर्याक्षेप (दोहा)

कारज करि कहिये वचन, काज निवारन अर्थ।
धीरज को आक्षेप यह, बरणत बुद्धि समर्थ ॥११॥

कार्य को रोकने के लिए, जहाँ सकारण बात कही जाय, वहाँ बुद्धिमान लोग, उसे धैर्याक्षेप कहते हे।

उदाहरण

कवित्त

चलत चलत दिन बहुत व्यतीत भये,
सकुचत कत चित चलत चलाये ही।
जात है ते कहौ कहा नाहिनै मिलत आनि,
जानि यह छांड़ौ मोह बढ़त बढ़ाये ही।
मेरी सौ तुमहि हरि रहियौ सुखहि सुख,
मोहूँ है तिहारी सौहँ रहौ सुख पाये ही।
चलेही बनत जो तो चलिये चतुर प्रिय,
सोवत ही जैयो छाँड़ि जागौगीहौ आये ही ॥१२॥

चलने की चर्चा चलाते हुए आपको अनेक दिन हो गये है । अब सकोच किस बात का है, मन तो हटाने से हटाता है । जो विदेश जाया करते है, कहिए, वे क्या फिर वापस आकर नहीं मिलते ? यही समझ कर मोह छोडिये, क्योकि मोह तो बढाने से ही बढता है। आपको मेरी शपथ है, आप सुख पूर्वक निश्चिन्त होकर रहिएगा और मै भी आपकी शपथ खाती हूँ कि मै सुख पूर्वक रहूँगी । हे चतुर प्रियतम ! यदि जाना ही है तो जाइए । मुझे आप सोते हुए छोड जायेगे, आपके आने पर ही मै जागूँगी ।

४—सशयाक्षेप

दोहा

उपजाये सदेह कछु, उपजत काज विरोध ।
यह संशय आक्षेप कहि, बरणत जिन्है प्रबोध ॥१३॥

जहाँ पर कुछ सदेह उत्पन्न कर देने पर कार्य का विरोध उत्पन्न हो जाय, उसे जानकार लोग सशयाक्षेप कहते है ।

उदाहरण

कवित्त

गुनन वलित, कल सुरन कलित माय,
ललिता ललित मीत श्रवण रचाइहै ।
चित्रनी हौ चित्रन मे परम विचित्र तुम्है,
चित्रन में देखि देखि नैनन नवाइहै ।
कामके विरोधी मत शोधि शोधि साधि सिद्धि,
बोधि बोधि अवधि के वासर गँवाइहै ।
केशोराय की सौ मोहि कठिन यहै है वा की,
रसनै रसिक लाल पान को खवाइहै ॥१४॥

आपके गुणो से युक्त गीतो को सुन्दर स्वरो से गा-गाकर ललिता सखी उसके कानो को प्रसन्न करेगी । मै चित्रनी अर्थात् चित्र खींचने

वाली हू, तुम्हारा बहुत हो अद्भुत चित्र बनाऊँगी तो चित्रो मे तुम्हारी अद्भुत मूर्ति को देख-देख कर वह आँखो को नीचा कर लिया करेगी। सिद्धि नाम की सखी काम-विरोधी मतो की खोज कर-कर के उसे उपदेश देती हुई किसी प्रकार अवधि के दिनो को बितावेगी। परन्तु हे रसिक लाल केशवराय ईश्वर की शपथ मुझे कठिनाई यही है कि उसकी जीभ को पान कौन खिलावेगा ?

५—मरणाक्षेप

कवित

मरण निवारण करत जहँ, काज निवारण होत।
जानहु मरणाक्षेप यह जो जिय बुद्धि उदोत ॥१५॥

जहाँ मरण भू निवारक शब्दो द्वारा जहाँ व्यगपूर्वक कार्य मे बाधा डाली जाती है। वहाँ मरणाक्षेप समझना चाहिए।

उदाहरण

दोहा

नीके कै किंवार दैहौ, द्वार द्वार दर वार,
केशोदास आस-पास सूरज न आवैगो।
छिन में छवाय लैहौ, ऊपर अटानि आजु,
आंगन पटाय देहौ, जैसे मोहिं भावैगो।
न्यारे न्यारे नारिदान मूदिहौ झरोखे जाल,
जाइ है न पानी, पौन आवन न पावैगो।
माधव तिहारे पीछे मो पहँ मरण मूढ़,
आवन कहत सो धौ कौन पैडे आवैगो ॥१६॥

('केशवदास' गोपी की ओर से श्रीकृष्ण से कहते है कि) मै छोटे-बडे सभी दरवाजो के किवाड बन्द कर दूंगी जिससे सूर्य भी पास न फटकने पावेगा। ऊपर को सभी अट्टालिकाओ के आज क्षण भर मे पटा दूगी और जैसा मुझे अच्छा लगेगा वैसा आँगन भी पटवा दूगी। मोरी,

झरोखो तथा जालो को अलग-अलग बन्द करवा दूँगी जिससे न तो पानी जा सकेगा और न हवा आ सकेगी । हे माधव ! यह मूर्ख मरण तुम्हारे चले जाने पर जो आने की बात कहता है, सो अब बतलाओ ! किस माग से आवेगा ?

६—आशिषाक्षेप

दोहा

आशिष पियके पंथ को, देवै दुःख दुराय ।
आशिषको आक्षेप यह, कहत सकल कविराय ।।१७।।

प्रियतम के आशीष अर्थात् कुशल-क्षेम के लिए जब अपना दुःख छिपा लिया जाता है, तब कवि लोग उसे आशिषाक्षेप कहते है ।

उदाहरण

कवित्त

मत्री, मित्र, पुत्र जन केशव कलत्र गन,
सोदर सुजन जन भट सुख साज सों ।
एतो सब होत जात जो पै है कुशल गात,
अबही चलौ कै प्रति सगुन समाज सौ ।
कीन्हों जो पयान बाध, छमिये सो अपराध,
रहिये न पल आध, बँधिये न लाज सों ।
हौ न कहौ, कहत निगम सब अब तब,
राजन परमहित आपने ही काज सों ।।१८।।

('केशवदास' किसी स्त्री की ओर से कहते है कि) मत्री, मित्र, पुत्र, स्त्री, सगे भाई, स्वजन योद्धा और सुख का समाज ये सब तो, यदि शरीर कुशल से रहे, तो होते जाते रहते हैं। इसलिए या तो आज अथवा प्रात काल आप शकुन मुहूर्त्त-लेकर चले जाइए। मैने जो आपके जाने मे बाधा उत्पन्न की थी, उस अपराध को क्षमा कीजिए और अब आधे पल के लिए भी न रहिए तथा न संकोच कीजिए ।

हे राजन ! यह बात कुछ मै ही नहीं कहती, वेद पुराण सब बराबर यही कहते चले आये है कि अपने कार्य साधन मे ही व्यक्ति का परमहित होता है ।

७—धर्माक्षेप

दोहा

राखत अपने धर्म को, जहँ कारज रहिजाय ।
धर्माक्षेप सदा यहै, बरणत सब कविराय ।।१६।।

जहाँ अपने धर्म (कर्त्तव्य) का पालन करने से, दूसरे का काम रुक जाय, वहाँ सब कवि, लोग उसे धर्माक्षेप कहते हैं ।

उदाहरण

कवित्त

जो हौ कहौ 'रहिये' तो प्रभुता प्रगट होत,
'चलन कहौ तो हित हानि, नाहि सहनो ।
'भावे सो करहु, तो उदास भाव प्राणनाथ,
'साथ लै चलहु' कैसे लोक लाज बहनो ।
'केशोराय' की सौ तुम सुनहु छबीले लाल,
चले ही बनत जो पै नाहीं आज रहनो ।
तैसियै सिखाओ सीख, तुमही सुजान पिय,
तुमहि चलत मोहि जैसे कुछ कहनो ।।२०।।

(एक स्त्री अपने पति से चलते समय कहती है कि) आपके चलते समय यदि मै कहूँ कि 'न जाइए यहीं रहिए' तो इसमे मेरी प्रभुता प्रकट होती है । और यदि कहूँ कि 'आपको जैसा अच्छा लगे वैसा कीजिए' तो हे प्राणनाथ ! इसमे उदासीनता का भाव प्रकट होता है । यदि कहूँ कि 'अपने साथ ले चलो, तो लोक-लज्जा का कैसे निर्वाह होगा ? हे छबीले लाल ! यदि आज आपको जाना ही है और यहाँ नहीं रहना है तो, आप ही मुझे सिखाइये कि 'आपके चलते

समय मुझे क्या कहना चाहिए।' क्योकि आप तो सुजान (जानकार) ही ठहरे।

८—उपायाक्षेप

दोहा

कौनहु एक उपाय कहि, रोकै पिय प्रस्थान।
तासो कहत उपाय कवि, केशवदास सुजान ॥२१॥

'केशवदास' कहते है कि जब कोई उपाय काम मे लाकर, प्रियतम का प्रस्थान रोक दे, तब सुजान कवि लोग, उसे उपायाक्षेप कहते है।

उदाहरण

सवैया

मोक सबै ब्रजकी युवती, हर-गौरि समान सुहागिनि जानै।
ऐसी को गोपी गोपाल तुम्है बिन, गोकुल मे बसिबो उर आनै॥
मूरति मेरी अदीठ कै ईठ, चलौ, कि रहौ, जु कछू मन मानै।
प्रेमनिक्षेमनि आदिदै केशव कोऊ न मोहि कहूँ पहिचानै॥२२॥

(विदेश जाते समय कोई गोपी श्री कृष्ण से कहती है कि) मुझे तो ब्रज की युवतियाँ शिवजी और पार्वती जी के समान, आपकी अर्द्धाङ्गिनी समझती है। हे गोपाल! ऐसी कौन सी गोपी है जो आपके बिना ब्रज मे रहने का विचार अपने मन मे लावे। इसलिए किसी उपाय से मेरी मूर्त्ति को अदृश्य करके (जिससे मै दिखलाई न पड़ूँ) आपको जैसा अच्छा लगे करे, चाहे रहे, चाहे जाय। (केशवदास गोपी की ओर से कहते है कि आप मुझे ऐसा अदृश्य बनाइएगा कि मुझसे प्रेम करने वाली तथा मेरा कुशल चाहने वाली आदि जितनी स्त्रियाँ हैं, वे मुझे किसी भी तरह से, कभी पहचान न सकें।

९—शिक्षाक्षेप

दोहा

सुखही सुच जहँ राखिये, सिखही सिख सुखदानि।
शिक्षाक्षेप कह्यो बरणि, छप्पय बारह बानि ॥२३॥

जहा सान्तवना और उपदेश दे-देकर, पति को रोका जाता है, वहाँ शिक्षाक्षेप होता है। उसे यहाँ बारह प्रकार से वर्णन किया गया है।

१—चैत्रवर्णन

छप्पय

फूली लतिका ललित, तरुनितर फूले तरुवर।
फूली सरिता सुभग, सरस फूल सब सरवर॥
फूली कामिनि कामरूपकरि कतनि पूजहि।
शुक-सारी-कुल केलि फूलि कोकिल कल कूजहि॥
कहि केशव ऐसी फूल महि शूलन फूल लगाइये।
पिय आप चलन की को कहै चित्त न चैत चलाइये॥२४॥

चेत्र मे सुन्दर लताएँ, पूर्ण युवती होकर, फूल रही है। सुन्दर पेड भी फूल रहे है। नदियाँ तथा तालाब आदि भी फूले हुए है, अर्थात् प्रसन्न दिखलाई पडते है। कामिनियाँ भी फूली हुई है ओर कामोत्तेज्जित होकर अपने-अपने पति की पूजा मे लग रही है। तोता मैना, फूल कर क्रीडा कर रहे है और कोयल भी फूलकर ध्वनि कर रही है। ('केशवदास' नायिका की ओर से कहते है कि) हे प्रियतम ! ऐसी फूल मे (प्रसन्नता के वातावरण मे) आप शूल (काटे) न चुभाइये अर्थात् रग मे भग न कीजिए। हे प्रियतम ! इस चैत मास मे आपके चलने की बात कौन कहे, चलने का विचार तक न करना चाहिए।

२—वैशाख वर्णन

केशवदास अकास अवनि बासित सुवास करि।
बहत पवन गति मंद गात, मकरंद बिदु धरि॥
दिशि विदिशिनि छवि लाग भाग पूरित परागवर।
होत गन्ध ही अन्ध बौर भौरा विदेशि नर॥

सुनि सुखद-सुखद सिख सीखि पति, रति सिखई सुख साख में।
वर विरहिन वधत विशेषकरि कामविशिख वैशाख में ॥२५॥

('केशवदास' नायिका की ओर से कहते है कि) वैशाख मे आकाश और पृथ्वी सभी सुगन्ध से सुगन्धित हो जाते है। वायु मकरद बिन्दु को धारण करके धीरे-धीरे बहने लगती है। प्रत्येक दिशा सुशोभित हो जाती है, और उनका प्रत्येक भाग पराग से पूर्ण हो जाता है। भौंरा (भ्रमर) औरविदेशी जन, मारे सुगन्ध के, अन्धे और बावले (कामोन्मत्त) हो जाते हैं। इसलिए हे प्रियतम ! मेरी सुखदायिनी शिक्षा को (जिसे प्रेम ने) आनन्द के समय मुझे सिखाया है, सुनिये कि 'वैशाख' मे पति से बिछुडी हुई स्त्री को, काम के बाण, विशेष रूप से सताते है।

३—जेठ वर्णन

एक भूतमय होत भूत, भजि पंचभूत भ्रम।
अनिल, अंबु, आकाश, अवनि, ह्वैजात आगिसम ॥
पथ थकित मद मुखिन सुखित सर सिंधुर जोवत।
काकोदर करि कोश, उदर तर केहरि सोवत ॥
पियप्रबल जीव इहिविधि अबल, सकल विकल जल थल रहत।
तजि केशवदास उदास मति, जेठमास जेठे कहत ॥२६॥

जेठ के महीने मे सारी सृष्टि एक भूत मय हो जाती है और उसके पचभूतमय होने का भ्रम भाग जाता है। वायु जल, आकाश, और पृथ्वी सभी अग्नि जैसे हो जाते है। मार्ग बन्द हो जाता है और तालाबो को सूखा हुआ देखकर हाथी मद से मुक्त हो जाते है अर्थात् उनका मतवालापन जाता रहता है। उनकी सूड की कुण्डली मे साप तथा पेट के नीचे सिंह सोता रहता है। (गर्मी के मारे उन्हे अपने वैर का ध्यान ही नहीं रहता) ! हे पतिदेव ! इस तरह जल और थल के सभी प्रबल जीवगण निर्बल हो जाते है। (केशवदास पत्नी की ओर से कहते हैं कि) इसी लिए बडे लोग कहते है कि 'जेठ के महीने, मे घर से उदास (विरक्त) होने के विचार को छोड देना चाहिए।

४—आषाढ़वर्णन

पवनचक्र परचंड चलत चहुँओर चपलगति ।
भवन भामिनी तजत भ्रमत मानहुं तिनकी मति ॥
सन्यासी इहि मास होत इक आसनवासी ।
पुरुषनकी को कहै भये पच्छियो निवासी ॥
इहि समय सेज सोवन लियो,श्रीहि साथ श्रीनाथहूँ ।
कहि केशवदास अषाढ़चल मैं न सुन्यो श्रुति गाथहू ॥२७॥

आषाढ मे चारो ओर से प्रचड पवनचक्र चचल गति से चला करते है। वे चलते हुए पवनचक्र ऐसे ज्ञात होते हैं मानो, इस मास मे घर और स्त्री को छोडने वालो की मति चक्कर खा रही है। इस महीने मे सन्यासी भी एक स्थान पर रहने वाले हो जाते है। पुरुषो की तो बात ही क्या है, पक्षी तक एक स्थान के निवासी हो जाते हैं। इस महीने मे श्रीनाथ (भगवान्-नारायण) ने भी, लक्ष्मी को साथ लेकर—शय्या पर सोना स्वीकार किया है। इसीलिए (केशवदास पत्नी की ओर से कहते है कि) मैने आषाढ के महीने मे वेदो तक मे परदेश जाना नहीं सुना।

५—सावन वर्णन

केशव सरिता सकल मिलत सागर मनमोहै ।
ललित लता लपटाति, तरुनतन तरुवर सोहै ॥
रुचि चपला मिलि मेघ, चपल चमकत चहुँ ओरन ।
मनभावनकहँ भेंट भूमि, कूजत मिस मोरन ॥
इहिरीति रमन रमनी सकल रमन लगे मनभावने ।
पियगमन करनकी को कहै गमन न सुनियत सावने ॥२८॥

(केशवदास—पत्नी की ओर से कहते हैं कि) सावन मे सभी नदियां समुद्र से मिलती हुई मन को मोहती हैं। पेड़ो के शरीरो से लपटी हुई लताएँ शोभा पाती है। बादलो से मिलकर, चचल बिजली चारो

ओर चमकती है और पृथ्वी भी मानो अपने मनभावन (जल) से भेंट करके, मोरो के बहाने कूजती है। इस प्रकार सभी (जड़-चेतन) स्त्री-पुरुष रमने रमाने लगे। अत हे प्रियतम ! विदेश गमन करने की कौन कहे, सावन मे तो लोग गमन (गौना, द्विरागमन) तक नही करते।

२—भादौवर्णन

घोरत घन चहुँ ओर, घोष निरघोषनि मंडहिं।
धाराधर धर धरनि मुशलधारन जल छंडहि॥
झिल्लीगन झनकार पवन, झूकि झुकि झकझोरत।
बाघ, सिह, गु जरत पुज, कुजर तरु तोरत॥
निशिदिन विशेपनिहिशेष मिटिजात सुओली ओड़िये।
देश पियूप विदेश विष भादौ, भवन न छोड़िये॥२६॥

भादो मे बादल चारो ओर घिर कर गम्भीर गर्जना किया करते है। और पृथ्वी के निकट आ-आकर, मूसल जैसी धारा से पानी वर्षाया करते है। झिल्लियो की झनकार सुनायी पडती रहती है और पवन झुक-झुक कर झकझोरे लिया करता है अर्थात् वायु बहुत तेज चला करती है। बाघ और सिह समूह गु जारते है और हाथी पेडो को तोड़ते है। अन्धकार छाये रहने के कारण रात और दिन का सारा का सारा अन्तर मिट सा जाता है। कभी-कभी ओलो की वृष्टि सहन करनी पडती है। ऐसे समय मे स्वदेश अमृत और विदेश विष के समान होता है। अत. हे प्रियतम ! भादो मे कभी घर नहीं छोडना चाहिये।

७—कुवारवर्णन

प्रथम पिडहित प्रकट पितर पावन घर आवैं।
नव दुर्गनि नर पूजि स्वर्ग अपवर्गहि पावैं॥
छत्रनिदै छितिपाल लेत, भुव लै सँग पंडित।
केशवदास अकास अमल जल थल जनमडित॥
रमनीय रजनि रजनीशरुचि रमार मनहूँ रासरति।
कलकेलि कलपतरु कारमहि कंत न करहु विदेशमति॥३०॥

क्वाँर के महीने मे पहले तो पवित्र पितृगण घर पर पधारते है। फिर 'नवदुर्गा' पक्ष मे दुर्गाजी का पूजन करके, मनुष्य स्वर्ग और अपवर्ग प्राप्त करते है। राजा लोग, छत्र धारण करके, और पुरोहित को साथ मे लेकर, पृथ्वी पूजन करते है। (केशवदास पत्नी की ओर से कहते हैं कि) आकाश निर्मल हो जाता है, और जलाशय कमलो से सुशोभित हो जाते हैं। चन्द्रमा को चाँदनी से रात सुन्दर लगने लगती है और रमारमन (श्रीकृष्ण) को भी रास मे रुचि होने लगती है। अत हे पतिदेव ! सुन्दर केलि-रूपी कल्पतरु क्वाँर के महीने मे विदेश जाने की मति (विचार) न कीजिए।

८—कार्त्तिक वर्णन

वन; उपवन, जल, थल, अकाश, दीसंत दीपगन।
सुखही सुख दिन राति जुवा खेलत दंपतिजन।।
देवचरित्र विचित्र चित्र, चित्रित आंगन घर।
जगत जगत जगदीश ज्योति, जगमगत नारि नर।।
दिनदानन्हान गुनगान हरि, जनम सफल कर लीजिये।
कहि केशवदास विदेशमति कन्त न कातिक कीजिये।।३१।।

कार्त्तिक मे, वन, उपवन, जल, थल और आकाश सब जगह दीपक ही दीपक दिखलाई पडते है। रात-दिन सुख ही सुख दिखलाई पडता है और पति-पत्नी मिलकर जुआ खेलते है, अथवा आनन्द मे भरे हुए दपति रात-दिन जुआ खेला करते है। देवताओ के चरित्रो के अद्भुत अद्भुत चित्रो से घरो के आगन चित्रित रहते हैं। जगदीश की ज्योति से सारा ससार जग उठता है (क्योकि इसी महीने देवोत्थान होता है)। स्त्री पुरुष सब प्रसन्न हो उठते हैं) अत इस कार्त्तिक के दिनो दान, स्नान, और हरि गुण गान करके अपना जन्म सफल कीजिए और (केशवदास-पत्नी की ओर से कहते है कि) हे कन्त ! कार्त्तिक मे विदेश जाने का विचार मत कीजिए।

९—मार्गशीर्षवर्णन

मासनमे हरिअंस कहत यासों सब कोऊ।
स्वारथ परमारथन देत भारतमॅह दोऊ।
केशव सरिता सरनि फूल फूले सुगन्ध गुर।
कूजत कुल कलहंस कलित कलहं सनि के सुर॥
दिन परम नरम शीत न गरम करम करम यह पाइयतु।
करि प्राणनाथ परदेश को मारगशिर मारग न चितु॥३२॥

महीनो मे इस महीने को सब लोग हरि अश (भगवान का अश) मानते है। यह महीना भारतवर्ष मे, स्वार्थ तथा परमार्थ दोनो को देने वाला है। (केशवदास पत्नी की ओर से कहते है कि) नदियो और तालाबो मे सुगन्धित फूल फूलते है तथा सुन्दर हस तथा हसनियाँ मधुर-ध्वनि से कूजते है और इस महीने के दिन बडे सुखदायी होते है। न तो बहुत ठड होते है। न बहुत गरम। बडे भाग्य से ये दिन मिलते है। अत. हे प्राणनाथ ! मार्ग शीर्ष मे विदेश जाने का विचार न कीजिये।

१०—पूसवर्णन

शीतल, जल, थल, बसन, असन, शीतल अनरोचक।
केशवदास अकास अवनि शीतल असुमोचक॥
तेल, तूल, तामोल, तपन, तापन, नव नारी।
राजा रक सब छोड़ि करत इनही अधिकारी॥
लघुद्योस दीह रजनी रवन होत दुसह दुख रूसमें।
यह मन क्रम बचन बिचारि पिय पथ न बूझिय पूसमे॥३३॥

इसमे शीतल जल, थल, वसन और शीतल भोजन अच्छे नहीं लगते। (केशवदास पत्नी की ओर से कहते हैं कि) आकाश और पृथ्वी मारे ठड के दु खदायी हो जाते है। राजा से लेकर रक तक सभी लोग सब छोडकर इस ऋतु मे तेल, रुई, पान, घाम, अग्नि और नवीन स्त्री का ही सेवन करते है। दिन छोटा और रात बडी होती है, तथा रूठने

में असहय दु ख होता है। अत हे प्रियतम ! मन, कर्म, वचन से इन बातो पर विचार करके, पूस मास, मे, यात्रा की बात न सोचिए।

११—माघवर्णन

वन, उपवन, केकी, कपोत, कोकिल कल बोलत।
केशव भूले भ्रमर भरे, बहुभायन डोलत॥
मृगमद मजय कपूरधूर, धूसरति दशौदिशि।
ताल, मृदङ्ग, उमङ्ग सुनत सगीत गीत निशि॥
खेलत वसन्त संतत सुघर, संत असंत अनत गति।
घर नाह न छोड़िय माघमे जो मनमाहँ सनेह मति॥३४॥

माघ मे मोर, कबूतर, तथा कोयले वन तथा उपवनो मे बोलते है। (केशवदास पत्नी की ओर से कहते है कि) बहुत से भावो से भरे हुए भौंरे इधर-उधर घूमते है। दशो दिशाए कस्तूरी, चन्दन तथा कपूर धूल से भरी रहती है। लोग ताल मृदङ्ग, उपङ्ग आदि बाजो पर रात मे सगीत की ध्वनि सुना करते है। भले और बुरे सभी लोग अनेक प्रकार से लगातार वसत खेलते है। इसलिए हे कत ! यदि मन मे तनिक भी स्नेह हो तो माघ मे घर को न छोडिए।

१२—फागुनवर्णन

लोक लाज तप राज रंक, निरशङ्क विराजत।
जोइ भावत सोइ कहत, करत पुनि हँसत न लाजत।
घर घर युवती जुवनि, जार गहि गांठनि जोरहि।
वसन छीनि मुख मीडि आंजि लोचन तृण तोरहि॥
पटवास सुवास अकास उड़ि, भूमंडल सब मंडिये।
कहि केशवदास विलासनिधि फागुन फाग न छंडिये॥३५॥

फागुन मे राजा से लेकर रक तक लज्जा छोडकर निशक हो जाते हैं, और जो उनके मन को अच्छा लगता वही कहते और करते है।

फिर हँसते भी है और लज्जित नही होते। घर घर मे युवती स्त्रियाँ युवको को बलपूर्वक पकड कर गाँठ जोडती है और कपडे छीनकर, मुख को मसल कर और आँखो मे काजल लगाकर व्यगपूर्वक तिनके तोडती है (कि नजर न लग जाय)। सुगन्धित चूर्ण उडकर आकाश और पृथ्वी सबको सुशोभित करता रहता है। अत (केशवदास पत्नी की ओर से कहते है कि) इस विलास निधि फागुन के फाग को न छोडिए।

—०—

ग्यारहवां प्रभाव

८—क्रम अलकार

आदि अन्त भरि वर्णिये, सो क्रम केशवदास ।
गणना गणना सों कहत है, जिन की बुद्धि प्रकास ।।१।।

'केशवदास' कहते है कि जहाँ आदि का शब्द अन्त मे और अन्त का शब्द आदि मे लेकर वर्णन किया जाय, वहाँ क्रम, अलकार होता है। जो बुद्धिमान लोग है, वे 'गणना' सूचक शब्दो वाले वर्णन को 'गणना' अलकार कहते है ।

उदाहरण—१

छप्पय

धिक मंगन बिन गुणहि, गुण सुधिक सुनत न रीझिय ।
रीझ सुधिक बिन मौज, मौज धिक देत सुखीझिय ।।
दीबो धिक बिन साँच, साँच धिक धर्म न भावै ।
धर्म सुधिक बिन दया, दया धिक अरिकहँ आवै ।।
अरि धिक चित न शालई, चित धिक जहँ न उदारमति ।
मतिधिक केशव ज्ञान बिनु, ज्ञान सुधिक बिनु हरिभगति ।।२।।

बिना किसी गुण को दिखलाये हुए, योही याचना करने को धिक्कार है। जिस गुण को सुनकर कोई न रीझे वह गुण भी धिक्कारने योग्य है। वह रीझ भी धिक्कारने योग्य है जो बिना मौज (भेंट, उपहार) की हो। उस मौज को धिक्कार है जिसे देते समय खीझ या झुझलाहट उत्पन्न हो। उस दान को धिक्कार है, जो सत्य के लिए न हो। उस सत्य को धिक्कार है, जिसे धर्म अच्छा न लगे। उस धर्म को धिक्कार है, जो दया रहित हो। उस दया को धिक्कार है जो बैरी के ऊपर दिखलायी

जाय । उस शत्रु को धिक्कार है, जो सदा चित्त मे खटकता न रहे । उस चित्त को धिक्कार है, जिसमे उदार मति का आभाव हो । ('केशवदास' कहते हैं कि) उस मति को धिक्कार है जो ज्ञान के बिना हो और उस ज्ञान को धिक्कार है जो हरि भक्ति से रहित हो ।

उदाहरण—२

सवैया

शोभित सो न सभा जहँ वृद्ध न, वृद्ध न ते जु पढ़े कुछ नाही ।
ते न पढ़े जिन साधु न सावित, दीहदया न दिपै जिनमाही ।
सो न दया जु न धर्म धरै धर, धर्म न सो जहँ दान वृथाही ।
दान न सो जहँ सांच न, केशव सांच न सो जुबसै छलछाही ।।३।।

वह सभा शोभित नहीं होती, जिसमे कोई वृद्ध नहीं होता और वह वृद्ध अच्छा नही लगता जो कुछ पढा नहीं होता । वे पढे-लिखे अच्छे नहीं लगते जिनके हृदय मे साधु जनोचित दया दीप्तमान नहीं होती रहती वह दया नहीं, जिसके साथ धर्म न हो । वह धर्म नहीं, जहाँ दान व्यर्थ माना जाता हो । वह दान नहीं, जहाँ सत्य न हो और (केशवदास कहते है कि) वह सत्य नही जिसमे छल की छाया मात्र भी रहे ।

उदाहरण—३

छप्पय

तजहु जगत बिन भवन, भवन तजि तिय बिन कीनो ।
तिय तजि जुन सुख देई, सुसुख तजि सपति हीनो ।।
संपति तजि बिनु दान, दान तजि जहँ न विप्रमति ।
विप्र तजहु बिन धर्म, धर्म तजि जहाँ न भूपति ।।
तजि भूप भूमि बिन भूमि तजि, दीहदुर्ग बिनु जो बसइ ।
तजि दुर्ग सुकेशवदास कवि जहाँ न जल पूरण लसइ ।।४।।

ऐसे ससार को छोड दो जहाँ अपना भवन न हो और ऐसा घर छोड दो जो बिना स्त्री का हो । उस स्त्री को छोड दो जो सुख न देती हो । उस

सुख को छोड दो जो सपत्ति हीन हो। उस सपत्ति को छोड दो जो बिना दान की हो। उस दान को छोड दो जिसमे ब्राह्मणो का आदर न हो। उस ब्राह्मण को छोड दो जो धर्म-रहित हो। उस धर्म को छोड दो जहाँ राजा न हो। उस राजा को छोड दो, जो भूमि रहित हो। उस भूमि को छोड दो, जिसमे बिना किले और परकोटे के रहना पडे। और केशवदास कवि कहते है कि उस किले को छोड दो, जहाँ पूर्ण जल सुशोभित न होता हो।

९—गणना अलंकार

एक सूचक

दोहा

एक आत्मा, चक्र, रवि, एक शुक्रकी दृष्टि।
एकै दशन गणेशको, जानत सगरी सृष्टि ॥५॥

आत्मा, सूर्य के रथ का पहिया, शुक्राचार्य की दृष्टि और श्रीगणेश जी का दाँत ये एक के सूचक है —इसको सभी जानते है।

दो सूचक

दोहा

नदीकूल द्वै, रामसुत, पक्ष, खडगकी धार।
द्वैलोचन द्विजजन्म, पद, भुज, अश्विनीकुमार ॥६॥
लेखनि डंक, भुजङ्गकी, रसना अयननि जानि।
गजरद मुखचुकरैड के, कच्छाशिखा बखानि ॥७॥

नदी के किनारे, श्री रामचन्द्र जी के पुत्र, पक्ष, खड्गकी धार, नेत्र, द्विजन्म (ब्राह्मण, पक्षी, दात आदि), चरण भुजाएँ, अश्वनीकुमार, लेखनी का डक (सेंटे की कलम का मुँह जो बीच से चीर दिया जाता है). साप की जीभ, अयन (दक्षिणायन, उत्तरायन), हाथी के दाँत दुमुँहा साँप और कक्ष, शिखा ये दो सूचक माने जाते हैं।

तीन सूचक

दोहा

गंगामग गंगेश दृग, ग्रीवरेख गुण लेखि।
पावक, काल, त्रिशूल, बलि, संध्या तीनि विशेखि ॥८॥
पुष्कर विक्रम राम, विधि, त्रिपुर, त्रिवेनी, वेद।
तीनिताप, परिताप, पद, ज्वरके तीनि सुखेद ॥९॥

गगा जी के (तीन) मार्ग, श्री शिव जी के (तीन) नेत्र, गर्दन की (तीन) रेखाएँ, गुण सत्व, रज और तम), अग्नि काल (भूत, वर्तमान भविष्य , त्रिशूल, बलि (त्रिबली), सध्या (प्रात , मध्यान्ह और साय) पुष्कर (के तीन-वृद्धपुष्कर, शुद्धनाथ और ज्येष्ठ कुंड), राम परशुराम श्रीरामचन्द्र और बलराम , विधि , वेद विधि, लोक विधि, कुलविधि) त्रिपुर, त्रिवेणी गङ्गा, यमुना सरस्वती) वेद (ऋक, यजु, साम ; ताप दैहिक, दैविक, भौतिक , परिताप (मन परिताप, बल परिताप, वीर्य परिताप) और ज्वर के तीन (बात, पित्त, कफ) पैर ये तीन सख्या के सूचक है।

चार सूचक

दोहा

वेद, वदनविधि, वारनिधि, हरि वाहन भुज चारि।
सेना अंग, उपाय युग, आश्रम वर्ण विचारि ॥१०॥
सुरनायक वारनरदन, केशव दिशा बखानि।
चतुर व्यूह रचना चमू, चरण, पदारथ जानि ॥११॥

'केशवदास' कहते है कि वेद (ऋक, यजु, साम, अथर्व), ब्रह्मा के मुख, श्रीकृष्ण के रथ के घोडे, श्रीविष्णु की चार भुजाएँ, सेना के (चार रथ हाथी, घोडा, पैदल) अग, उपाय (साम, दाम, दड, भेद) युग (सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग) आश्रम ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास), वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र), इन्द्र के हाथी ऐरावत के

दाँत, दिशाएँ (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण), सेना की चार (शकट, क्रौंच धनुष, चक्र) प्रकार की रचना, चरण (छद के) और पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) ये चार सख्या के सूचक है।

पाँच सूचक

दोहा

पंडु पूत, इद्रिय, कवल, रुद्र वदन, गति, बाण।
लक्षण पंच पुराणके, पच अंग अरु प्राण ॥१२॥
पंचवर्ग तरु पंच अरु, पच शब्द परमान।
पंच सधि पचाग्नि भनि, कन्या पंच समान ॥१३॥
पंचभूत पातक प्रकट, पंचयज्ञ जिय जानि।
पचगव्य, माता, पिता, पंचामृतन बखानि ॥१४॥

पाण्डु के पुत्र, इद्रियाँ (५ कर्म, ५ ज्ञान) कवल (भोजन के आरम्भ के पाच कौर), श्री शकर जी के मुख, गति (सालोक्य सामिप्य सारुप्य, सायुज्य, सारिष्ट), बाण, पुराण के पाँच (सृष्टि की उत्पति, प्रलय देवताओ की उत्पत्ति और वशपरम्परा, मन्वन्तर और मनुवश का विस्तार वर्णन) लक्षण, पचाग (तिथि वार, नक्षत्र, योग और करण), पच (प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान) प्राण, पच (क, च, ट, त, और प) वर्ग पच (मदार, पारिजात, सतान कल्पवृक्ष और हरि चदन) तरु, पच (सूत्र, वार्तिक, भाष्य, कोश और कवि प्रयोग) शब्द, पच [स्वर, व्यजन, विसर्ग, स्वादि और प्रकृतिभाव] सधि, पच (अन्वहार्य, पचन, गार्हपत्य, आह्वनीय और सभ्य) अग्नि, पच (अहल्या द्रौपदी, कुन्ती, तारा और मदोदरी) कन्या, पच (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) भूत, पातक (ब्रह्महत्या, सुरापान, स्वर्ण चोरी, गुरु शय्या गमन और इनका सग), पच (ब्रह्म, देव, पितृ भूत और नर) यज्ञ पच (दूध, दही, घी, गोबर और मूत्र) गव्य, पच (जननी, गुरुपत्नी, राजपत्नी, सास और मित्र-पत्नी) माता, पच (जनक, यज्ञोपवीतदाता,

पृष्ठ २५० कवित्त १८

सोने की एकलता तुलसीबन, क्यों बरणों सुनि सकै छ्वै।
"केशोदास" मनोज मनोहर ताहि, फले फल श्रीफल से वै॥
फूलि सरोज रह्यो तिन ऊपर, रूप निरूपम चित्त चलै च्वै।
तापर एक सुवा शुभ तापर, खेलत बालक खंजन के द्वै॥१८॥

पृष्ठ २३७, सवैया २७

आनन सोकर सोक हियेकत ? तोहित ते अति आतुर आई।
फीकी भयो सुखही मुखराग क्यों ? तेरे पिया बहुबार बकाई॥
पीतमको पट क्यों पलट्यो ? अलि, केवल तेरी प्रतीति को ल्याई।
केशव नीकेहि नायक सों रमि नायका बात नही बहराई॥२७॥

पृष्ठ २३९ कवित्त २८

खेलत ही सतरज अलिन मे, आपहि ते,
तहाँ हरि आये किधौं काहू के बोलाये री।
लागे मिलि खेलन मिलै कै मन हरे हरे,
देन लागे दाउं आपु आपु मन भाये री।
उठि उठि गई मिस मिसही जितही तित,
"केशवदास" कि सौ दोऊ रहे छवि छाये री।
चौकि-चौकि-तेहि छन राधा जू के मेरी आली,
जलज से लोचन जलद से ह्वै आये री॥२८॥

पृष्ठ २४० कवित्त ३०

मदन बदन लेत लाज को सदन देखि,
यद्यपि जगत जीव मोहिबे को है छमी।
कोटि कोटि चन्द्रमा निबारि ! बारि बारि डारौं,
जाके काज बृजराज आज लौं हैं संयमी।
"केशवदास" सविलास तेरे मुख की सुबास,
सुनियत आरस ही सारसनि लैरमी।
मित्रदेव, छिति, दुर्ग, दण्ड, दल, कोष, कुल,
बल जाके ताके कही कौन बात की कमी॥३०॥

ससुर, अन्नदाता और भयत्राता) पिता और पच (दूध, दही, घी, मधु और मिश्री) अमृत—ये पाच की सख्या के सूचक है ।

छ सूचक

दोहा

कुलिश कोन षट, तर्क षट्, दरशन, रस, ऋतु अंग।
चक्रवर्ति शिवपुत्रमुख, सुनि षट्राग प्रसग ॥१५॥
पट्माता षट्वदनकी, पट्गुण बरणहु मित्त।
आततायि नर षट् गनहु, षट्पद मधुप कवित्त ॥१६॥

कुलिश (वज्र) के छ कोण, षट् (वेदान्त, साख्य पातजलि, न्याय, मीमांसा और वैशेषिक) तर्क षट (वैष्णव, ब्राह्मण, योगी, सन्यासी, जगम और सेवरा) दर्शन षट् (खट्टा, मीठा नमकीन, कम्टु, अम्ल और कसैला), रस, षट् (वसंत, ग्रीष्म, पावस, शरद, हेमन्त और शिशिर) ऋतु षट् (शिक्षा कल्प, व्याकरण, निरुक्त छन्द और ज्योतिष) वेदाङ्ग, षट (वेणु, बलि धधुमार, अजपाल, प्रवर्तक और मानधाता) चक्रवर्ती, श्री शङ्कर जी के पुत्र श्री स्वामी कात्तिकय जी के मुख षट (भैरव, मालकौस, हिंडोल, दीपक, श्री और मेघ) राग, षटमाता (कृतिका नक्षत्र के छ तारे), षट (सधि, विग्रह, मान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय) गुण, षठ (आग लगाने वाला, विष देने वाला शस्त्र चलाने वाला, धन छीनने वाला, खेत छीनने वाला और स्त्री हरने वाला) आततायी, षट पद (भौंरे के छ चरण) और कवित्त अर्थात् छन्द (छप्पय) के छ चरण—इन्हे छ की सख्या का सूचक समझना चाहिए ।

सात सूचक

दोहा

सात रसातल, लोक, मुनि, द्वीप, सूरहय, वार।
सागर, सुर, गिरि, ताल, तरु, अन्न ईति करतार ॥१७॥
सात, छंद, सातौ पुरी सात त्वचा, सुख सात।
चिरंजीवि ऋषि, सात नर, सप्तमातृका, धात ॥१८॥

सात रसातल (तल, अतल, वितल, सुतल, तलातल, रसातल और पाताल), लोक (भू, भुव॰, स्वः, मह जन, तप और सत्य) मुनि (मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वशिष्ठ), द्वीप (जम्बू, लेक्ष, शाल्मलि, कुश, कौंच, शाक और पुष्कर), सूर्य के घोडे वार, समुद्र (क्षीर, क्षार, दधि, मधु, घृत, सुरा, और इक्षु), स्वर स, रे, ग, म, प, ध, नि), पर्वत (मेरु, हिमालय, उदयाचल, विंध्य, लोकालोक, गन्ध मादन और कैलाश), ताल (चार मेरु पर्वत पर और मानसर, विन्ध्यसर और पपासर), वृक्ष (स्वर्ग के पाच वृक्ष और, अक्षय-वट तथा कैलाशवट), अन्न (गेहूँ यव, धान, चना, उर्द, मू ग और अरहर), ईतिया, (अति वृष्टि, अनावृष्टि, मूषक, शुक, शलभ, स्वचक्र, और परचक्र), करतार (श्रीब्रह्मा, श्री विष्णु, श्रीशिव, प्रकृति, सत्व, रज और तम) सात (गायत्री, उष्णिक, अनुष्टुप, वृहती, पक्ति त्रिष्टुप और जगती पुरी (अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कॉची, अवन्तिका और द्वारका), सात प्रकार की त्वचा, सुख, खान, पान, परिधान, ज्ञान, गान, शोभा और सयोग), चिरजीव अश्वत्थामा, बलि व्यास, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य और परशुराम), ऋषि (कश्यप, जमदग्नि, विश्वामित्र, वशिष्ठ भारद्वाज और गौतम), सात (ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, अन्त्यज और यवन नर, सात (ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, बाराही, इन्द्राणी और चामुण्डा) मातृकाएँ और सात (रस, रक्त, मास मेद, अस्थि, मज्जा और वीर्य) धातुए ये सात सख्या के सूचक माने जाते है।

आठ सूचक

दोहा

योगअंग, दिगपाल, वसु, सिद्धि, कुलाचल चारु।
अष्टकुली अहि, व्याकरण, दिग्गज, तरुनि बिचारु॥१६॥

योग के (यम, नियम आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि) आठ अठ, दिग्पाल (इन्द्र, अग्नि यम, नैऋत, वरुण,

वायु, कुबेर और ईशान), वसु (जल, ध्रुव, सोम धरा, अनिल, अग्नि, प्रत्यूष और प्रभाव), सिद्धि (अणिमा महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्रकाम्य और ईशित्व), कुलाचल (हिम, मलय, महेन्द्र, सह्य, शुक्ति, ऋक्ष, विन्ध्य और पारियात्र), साँपो के (तक्षक, कहापद्म शंख, कुलिक, कबन्ल, अश्वतर धृतराष्ट्र और बलाहक) आठ कुल, आठ इन्द्र, चन्द्र, गार्ग्य, साकल्य, शाकटापन, कात्यायन जैनेन्द्र और पाणिनि) व्याकरण, दिग्गज (ऐरावत पुडरीक, बामन, कुमुद, अजन, पुष्पदन्त, सार्वभौम और सुप्रतीक, और आठ (स्वाधीन पतिका, उत्कठिता, बासक सज्जा, कलहतरिता खडिता, प्रोषित पतिका, विप्रलब्धा और अभिसारिका) नायिकाए—ये आठ सख्या के सूचक माने जाते हैं ।

नौ सूचक

दोहा

अंगद्वार, भूखण्ड, रस, बाघिनिकुच, निधि जानि ।
सुधाकुण्ड, ग्रह, नाड़िका, नवधा भक्ति बखानि ।।२०।।

अग द्वार (शरीर के नौ छिद्र) भूखण्ड (पृथ्वी के इलावर्त, कुरु, हरि, किंपुरुष, भरत, केतुमाल, भद्राश्व और हिरण्य नौखण्ड) रस (काव्य के शृंगार, वीर करुण हास्य भयानक, वीभत्स, अद्भुत, रौद्र और शान्त) बाघिन के कुच नौ निधियाँ (पद्म, शख महापद्म, मकर, कच्छप, मुकुद, कुद, नील और खर्व), सुधा के नौ कुण्ड, नौग्रह, नौ (इडा, पिंगला, सुषुम्ना, गधारी, पूषा, गजजिह्वा, पसाद, शनि और शखिनी), शरीर की नाडियाँ और नौ (श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन अर्चन, बदन, दास्य, सख्य और आत्म निवेदन) भक्तियाँ ये नौ सख्या के सूचक बतलाये गये है ।

दश सूचक

दोहा

रावणशिर, श्रीराम के, दश अवतार बखान ।
विश्वेदेवा, दोष दश, दिशा, दशा, दश जान ।।२१।।

रावण के शिर, श्रीराम (श्रीविष्णु के दश अवतार, विश्वेदेवा और दोष, (चोरी, जुआ, अज्ञानता, कायरता, गूगापन, कुरूपता, अधापन, लगडापन बहरापन, और क्लीवता) ये दश सख्या के सूचक है।

उदाहरण (१)

कवित्त

एक थल थित पै बसत प्रति जन जीव,
द्विकर पै देश देश कर को धरनु है।
त्रिगुन कलित बहु बलित ललित गुन,
गुनिन के गुनतरु फलित करनु है।
चार ही पदारथ को लोभ चित नित नित,
दीबे को पदारथ समूह को परनु है।
'केशोदास' इन्द्रजीत भूतल अभूतल, पच,
भूत की प्रभूत भवभूति को शरनु है ॥२२॥

वह एक स्थान पर रहते है, परन्तु प्रत्येक मनुष्य के हृदय मे निवास करते है। वह हैं तो दो हाथ वाले, परन्तु देश-देश के निवासियो के हाथो को पकडे हुए है अर्थात् सहारा दिए हुए है अथवा रक्षक है या देश-देश के राजाओ से कर लेते है। वह तीन गुण (सत्व, रज और तम) से सम्पन्न होने पर भी बहुत से सुन्दर गुणो से युक्त है और गुणवानो के गुणरूपी वृक्षो को फलित करने वाले है। उनके मन मे चार (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) पदार्थो का ही लोभ नित्य रहता है, परन्तु पदार्थो के समूह को देने का प्रण किए हुए है। 'केशवदास' कहते हैं कि राजा इन्द्रजीत इस पृथ्वी के अभूतपूर्व राजा है, वह है तो पचभूतो से उत्पन्न परन्तु सारे ससार को शरण देने वाले है।

उदाहरण—२

कवित्त

दरशै न सुर से नरेश शिरनावै नित,
षट दर्शन ही को शिर नाइयतु है।

'केशौदास' पुरी पुर-पुंजन के पालक पै,
सात ही पुरी सों पूरो प्रेम पाइयुत है।
नायिका अनेकन को नायक नगर नव,
अष्ट नायिकान ही सों मन लाइयतु है।
नवधाई हरि को भजन इन्द्रजीत जू को,
दश अबतार ही को गुन गाइयतु है ॥२३॥

देवता जैसे अनेक राजाओ के नित्य गिर झुकाने पर भी दरशन नहीं देते अर्थात् उनकी ओर देखते तक नहीं और केवल षट दर्शनो ही को सिर झुकाते है। 'केशवदास' कहते है कि वह अनेक पुरी और नगरो के पालक होने पर भी केवल सात पुरियो से ही पूर्ण प्रेम रखते है। वह अनेक नायिकाओ के चतुर और युवा नायक होने पर भी, केवल आठ प्रकार की नायिकाओ से ही मन लगाते है। राजा इन्द्रजीत भगवान का भजन नौ प्रकार की भक्तियो से ही करते है और दशो अवतारो का ही गुण गाते है।

१०—आशिषालकार

दोहा

मातु, पिता, गुरु, देव, मुनि, कहत जु कछु सुख पाय।
ताही सों सब कहत है, आशिष कवि कविराय ॥२४॥

माता, पिता, गुरु, देव और मुनि प्रसन्न होकर जो वचन कहते है, उसी को समस्त कवि तथा कविराज आशिष कहते है।

उदाहरण

कवित्त

मलय मिलित बास, कुकुम कलित, युत,
जावक, कुसुम नख पूजित, ललित कर।
जटित जराय की जजीर बीच नील मणि,
लागि रहे लोकन के नैन, मानो मनहर।

हय पर, गय पर, पलिका सुपीठ पर,
अरि उर पर, अवनीशन के शीश पर।
चिरु चिरु सोहौ रामचन्द्र के चरण युग,
दीबो करै 'केशौदास' आशिष अशेष नर ॥२५॥

चदन की सुगन्ध से मिले हुए, कुकुम और महावर से युक्त और फूलो से पूजित, जिनके नख है और जिनकी सुन्दर शोभा है। (उन चरणो मे) रत्नो से जडी हुई जजीर पहने है जिसके बीच बीच मे नीलमणि जडे हुए ऐसे प्रतीत होते है, मानो लोगो की आँखें है। 'केशवदास' कहते है कि अनेक मनुष्य सदा यही आर्शीवाद दिया करते हैं कि श्रीरामचन्द्र के दोनो चरण हाथी, घोडे, पलङ्ग, आसन, शत्रु हृदय तथा राजाओ के शिरो पर चिर काल तक शोभित होते रहे।

उदाहरण—२ (सवैया)

होयधौ कोऊ चराचर मध्य मे, उत्तम जाति अनुत्तमहीको।
किन्नर कै नर नारि विचार कि बास करै थलकै जलहीको॥
अगी अनंग कि मूढ अमूढ उदास अमीत कि मीत सहीको।
सो अथवै कि कहूँ जनि केशव जाके उदोत उदो सबहीको ॥२६॥

चाहे वह चराचर मे कोई भी हो, उत्तम जाति का हो या निकृष्ट जाति का। चाहे किन्नर हो, चाहे मनुष्य अथवा स्त्री। चाहे स्थल पर रहता हो, चाहे जल मे। चाहे शरीरधारी हो या अग रहित हो। चाहे मूर्ख हो या बुद्धिमान हो। उदासीन हो शत्रु हो अथवा मित्र हो केशव दास कहते है कि जिसके प्रकाश से सब प्रकाशित है वह कहीं भी अस्त न हो।

११—प्रेमालकार

कपट निपट मिटिजाय जहँ, उपजै पूरण क्षेम।
ताहीसों सब कहत है, केशव उत्तम प्रेम ॥२७॥

जहाँ कपट बिलकुल दूर हो जाय और पूर्ण रूप से मङ्गल कामना के भाव उत्पन्न हो उसको (केशवदास कहते है कि) सब लोग उत्तम 'प्रेमालकार' कहते है।

जहाँ कपट बिलकुल दूर हो जाय और पूर्णरूप से मगल कामना के भाव उत्पन्न हो, उसको (केशवदास कहते है कि) सब लोग उत्तम 'प्रेमालकार' कहते हैं ।

उदाहरण (सवैया)

कछु बात सुनै सपनेहू वियोग की, होन चहै दुई टूक हियो ।
मिलिखेलिये जा सँगबालकतै, कहि तासों अबोलो क्यों जातकियो ।।
कहिये कह केशव नैननसो, बिन काजहि पावकपुंज पियो ।
सखि तू बरजै अरु लोग हँसै सब, काहेको प्रेम को नेमलियो ।।२८।।

वियोग की तनिक सी भी चर्चा सपने मे भी सुनने पर, मेरा हृदय दो टुकडे होना चाहता है। जिसके साथ बालकपन से मिल-जुल कर खेलती रही, उससे चुप होकर रहना कैसे बन सकता है। (केशवदास सखी की ओर से कहते है कि) इन आँखो को मे क्या कहूँ जो (उन्हे बिना देखे) आग सी पिये रहते है अर्थात् जलते रहते है। हे सखी ! इधर तू तो मना करती है (कि उससे मत बोला कर) और उधर लोग हँसते है और कहते है कि फिर तूने प्रेम का नियम क्यो लिया ?'

उदाहरण

दो अर्थ का श्लेष

कवित्त

धरत धरणि, ईश शीश चरणोदकनि,
गावत चतुर मुख सब सुख दानिये ।
कोमल अमल पद कमला कर कमल,
लालित, बलित गुण, क्यों न उर आनिये ।
हिरणकशिपु दानकारी प्रह्लाद हित,
द्विज पद उरधारी वेदन बखानिये ।
'केशोदास' दारिद दुरद के बिदारबे को,
एकै नरसिह कै अमरसिंह जानिये ।।३०।।

पहला अर्थ

श्री नृसिह पक्ष मे

वह पृथ्वी को धारण करते है उनके चरणोदक को श्री शकर जी अपने शिर पर लेते है । उनका यश ब्रह्माजी गाते है और वह सब सुखो को देने वाले हैं अथवा ब्रह्माजी उन्हे 'सर्व सुखदाता' कहकर उनकी प्रशसा करते है । जिनके कोमल और निर्मल चरण श्री लक्ष्मी जी के कर-कमलो द्वारा सेवित है । जो गुणो से युक्त है । उन्हे हृदय मे क्यो स्थान नहीं देते ? अथवा उन्हे हृदय मे स्थान क्यो न दिया जाय । जो हिरणकशिपु को मारने वाले तथा प्रहलाद के हित्कर्ता है, ब्राह्मण (भृगु) के चरण को छाती पर धारण करने वाले है तथा वेदो मे जिनकी प्रशसा है । 'केशवदास' कहते हैं कि दरिद्र रूपी हाथी को मारने के लिए एक नृसिह का अथवा राजा अमरसिंह को समर्थ समझना चाहिए ।

दूसरा अर्थ

(अमरसिंह पक्ष मे)

पृथ्वी के बडे राजा जिनका चरणोदक अपने शिर पर धारण करते हैं, तथा जिन्हे लोग सुखदाता बतलाते हुए चारो ओर प्रशसा करते है । जिनके कोमल तथा स्वच्छ चरण, सुन्दर स्त्रियो के हाथो से सेवित होते है, जो अनेक गुणो से युक्त है उन्हे अपने हृदय मे क्यो न स्थान दिया जाय । जो सोने की शैय्या के दान करने वाले हैं और महा आनन्द के हितू है । जो ब्राह्मण के चरण को हृदय मे रखते है अर्थात् उनका आदर करते है) और जो वेदो की व्याख्या करने वाले है । अत- (केशवदास कहते है कि) दारिद्रयरूपी हाथी को मारने के लिए एक नृसिह अथवा राजा अमरसिह ही को समर्थ मानना चाहिए ।

तीन अर्थ का श्लेष

कवित्त

परम विरोधी अविरोधी ह्वै रहत सब,
दानिन के दानि, कवि केशव प्रमान है।
अधिक अनन्त आप, सोहत अनन्त संग,
अशरण शरण, निरक्षक निधान है।
हुतभुक, हित मति, श्रीपति बसत हिय,
गावत है गंगाजल, जग को निदान है।
'केशौराय' की सौं कहै 'केशौदास' देखि देखि,
रुद्र की समुद्र की अमरसिंह रान है ॥२१॥

पहला अर्थ

श्रीरुद्र पक्ष मे

जिनके यहाँ परम विरोधी (सिंह, बैल, साप मोर, चूहा-साँप और अग्नि-जल) जीव और पदार्थ अविरोधी होकर (परस्पर प्रेम पूर्वक) रहते है। जो दानियो को दान देने वाले हैं अर्थात् देवताओ को भी वरदान देते है और जो केशव (श्रीनारायण) के सच्चे कवि है अर्थात् उनका गुणगान करते है। जो स्वय अनन्त से अधिक (बडे) है, परन्तु अनन्त (शेष नाग) के साथ रहते है। जो शरण हीनो की शरण है तथा अरक्षित जीवो के लिए (सुख के) निधान है। अग्नि के हित पर जिनकी बुद्धि रहती है अर्थात् जिन्हे यज्ञादि अच्छे लगते हैं और जिनके हृदय मे श्रीपति श्रीविष्णु) रहते है जिन्हे गगाजल अच्छा लगता है तथा जो ससार के जीवो की शरण है। ईश्वर की शपथ, केशवदास देख देखकर कहते है कि यह रुद्र है, समुद्र है या अमर सिंह राना है।

दूसरा अर्थ

समुद्र पक्ष मे

जहाँ पर परम विरोधी (विष, वारुणी, सुधा आदि) भी अविरोधी होकर रहते है। जो दानियो (श्री लक्ष्मी जी, कल्पबृक्ष कामधेनु आदि मन चाही वस्तुओ को देने वालो) का भी दानी है अर्थात् उत्पन्न करने वाला है। जिसके सच्चे कवि (प्रशसक) स्वय केशव (श्रीनारायण भगवान्) है। जो स्वय अधिक अनन्त है और जिसके साथ अनन्त (शेषनाग जी) रहते है। जो शरण विहीनो (मैनाक, बडवाग्नि) को शरण देता है और जो अरक्षित जल का भडार है। जो बडवाग्नि का मित्र है और जिसके हृदय मे श्रीनारायण भगवान् निवास करते है। जिसे गगाजल अच्छा लगता है और जो ससार की उत्पत्ति का आदि कारण है। अत ईश्वर की शपथ केशवदास को देख देखकर कहते है कि यह रुद्र या समुद्र है या राणा अमरसिंह है।

तीसरा अर्थ

राणाअमरसिंह पक्ष मे

जिनके यहाँ परम विरोधी (शत्रु गण) भी (उनके प्रभाव के कारण) अविरोधी (मित्र बनकर) रहते है। जो केशव (श्रीनारायण भगवान) के गुणो का कवि की तरह वर्णन करते है और जो प्रकृष्ट अर्थात् अधिक मान वाले है। जो दानियो के भी दानी है अर्थात् इतना दान करते है कि याचक भी दानी बनकर दान देने लगते है। जो स्वय अधिक अनन्त (गभीर) है (क्योकि उनका कोई भेद नहीं पा सकता) और अनन्त (असख्य) मनुष्यो के साथ रहते है। जो शरण विहीनो को शरण देते है और अरक्षित पुरुषो के लिए रक्षा का भडार है। जो यज्ञादि मे मन लगाते है जिनके हृदय मे श्रीनारायण का निवास रहता है अर्थात् जो ईश्वर भक्त है और जिन्हे गगाजल प्रिय है तथा सारे ससार के लोगो के पूज्य है। ईश्वर की शपथ, केशवदास देख-देखकर कहते है कि यह रुद्र है या समुद्र है या राणा अमरसिंह है।

चार अर्थ का श्लेष

कवित्त

दानवारि सुखद, जनक जातनानुसारि,
करषत धनु गुन सरस सुहाये हैं।
नरदेव च्यकर करम हरन, खर,
दूषन के दूषन सु केशौदास गाये हैं।
नागवर प्रियमानि, लोकमाता सुखदानि,
सोदर सहायक नवल गुन गाये है।
ऐसे राजा राम, बलराम, कै परशुराम,
कैधो है अमरसिह मेरे उर भाये हैं ॥३२॥

पहला अर्थ

श्रीराम चन्द्र पक्ष

जो दानवो के वैरी इन्द्र को सुख देने वाले है, जो राजा जनक की यातना मानसिक पीडा, चिन्ता) का विचार कर धनुष की प्रत्यचा को खींचते समय अत्यन्त सुशोभित हुए। जो मनुष्य तथा देवताओ का नाशक रावण के कर्मो को हरने वाले और खर-दूषण राक्षसो को मारने वाले है। 'केशव' कहते है कि उनके गुणानुवाद उनके दासो (भक्तो) द्वारा गाये गये है। जो नागधर (श्रीशकर जी) को प्रिय मानते है और लोक माता श्री लक्ष्मी जी को सुख देने वाले है। जिनके सगे भाई (भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न सदा सहायक हुए और जिनके सुन्दर गुणो का सबने वर्णन किया है। ऐम गुणो वाले राजा रामचन्द्र है या बलराम जी है, या परशुरामं जी है या राजा अमरसिंह है जो मेरे मन को अच्छे लगते हैं।

दूसरा अर्थ

श्रीबलराम पक्ष

जो दानवीर (श्रीकृष्ण) को सुख देने वाले और जनक (पिता) की यातना को दूर करने के लिए, अनुकूल आचरण करने वाले है।

जो गौओ को आकर्षित करते है अर्थात् गौएँ उनके पीछे-पीछे घूमती फिरती है और जो सुन्दर गुणो से भूषित है बडे-बडे राजाओ को परास्त करने वाले या दुष्ट राजाओ को मारने वाले है । जो पाप कर्मो को हरने वाले और खर (गदहे का रूप रखकर आने वाले धेनुक राक्षस) को मारने वाले है तथा 'केशव' कहते है जिनका यश दासो (भक्तो) ने गाया है । जिन्हे नाग का शरीर प्रिय है (क्योकि प्रभास क्षेत्र मे साप का रूप रखकर समुद्र मे गये थे) ओर जो लोग-माता यशोदा, रोहिणी आदि को सुख देने वाले है । जो अपने भाई (श्रीकृष्ण) के कुबलया और कस बध आदि कार्यो मे सहायक है, जो सदा नवल वय के और मन को अच्छे लगने वाले है । ऐसे या तो राजा रामचन्द्र है या श्रीबलराम जी है, या श्री परशुराम जी है या राजा अमरसिंह है ।

तीसरा अर्थ

परशुराम पक्ष

जिन्हे दान वारि (दान देते समय सकल्प का जल) सुख देता है अर्थात् जिन्हे दान देने मे बडा आनन्द मिलता है। अपने जनक (जमदग्नि) की पीडा (कष्ट) का अनुसरण करके जो धनुष की प्रत्यचा खींचते हुए, तत्कालीन (रौद्र) रस से सुशोभित लगते थे। जो अनेक राजाओ को मारने वाले कर्मो (पाप कर्मो) के हरने वाले है । जो बडे-बडे दोषो के नाशक है और केशव कहते है कि उनके दासो ने उनकी प्रशसा इसी प्रकार की है । जिन्हे नागधर (श्री शकर जी) प्रिय मानते है और जो लोक-माता श्री पार्वती को (अपने गुणो से सुख देने वाले है। जिनका सहायक कोई सगा भाई न था और अपने बल के भरोसे रहने के कारण ही जिनकी प्रशसा की जाती है। ऐसे परशुराम जी है जो मेरे मन को अच्छे लगते है ।

चौथा अर्थ

राजा अमरसिह पक्ष

जो दानवो के बैरी देवताओ को यज्ञ, (पूजा-पाठ आदि से) सुख देते है और नीच पुरुषो के अनुकूल नहीं चलते । धनुष की डोरी खींचते समय बहुत ही अच्छे लगते है । जो नर-देव (ब्राह्मणो) के लिए क्षयकर (हानि पहुँचाने वाले) कर्म (कार्य) है, उन्हे हर लेते है अर्थात् उनको हानि करने वाले कार्यो को नहीं होने देते । 'केशव' कहते हैं कि जो खरदूषण को मारने वाले श्री रामचन्द्र के दास है । जो नाग-धर (हाथियो को पकड़ने वाले) भीलो को प्रिय मानते है । अपनी माता को सुख देने वाले है । प्रजा को भाई के समान सहायता देने वाले तथा नवल गुणो से भूषित है, जिनकी सभी प्रशसा करते हैं । ऐसे राजा अमरसिह है जो मेरे मन को अच्छे लगते है ।

पॉच अर्थ का श्लेष

कवित्त

भावत परम हस, जात गुण सुनि सुख,
पावत सगीत मीत विबुध बखानिये ।
सुखद राकति घर समर सनेही बहु,
बदन विदित यश 'केशौदास' गानिये ।
राजै द्विज राज पद भूपन विमल कम—
लासन प्रकास परदार प्रिय मानिये ।
ऐसे लोकनाथ कै त्रिलोकनाथ नाथ नाथ,
कैधौ रघुनाथ कै अमरसिह जानिये ।।२३।।

पहला अर्थ

ब्रह्मा जी के पक्ष मे

जिन्हे परम अर्थात् श्रीनारायण भगवान् अच्छे लगते है तथा जिन्हे हस प्रिय है (क्योकि उनका वाहन है) और जो जात अर्थात्

मानसिक पुत्रो के गुणो (शास्त्र सबधी वाद विवाद आदि) को सुन कर सुख पाते है । अथवा जो हसावतार श्रीनारायण और अपने मानसिक पुत्रो के गुणो को सुनकर सुखी होते है । सगीत (साम वेद आदि) के मित्र है और जो विशेष बुद्धिमान कहे जाते है अथवा जिनकी प्रशसा विवुध (देवता) गण करते हैं । सुख देने वाली शक्ति (श्रीसरस्वती जी) के घर है, और कामदेव के स्नेही अर्थात् सखा है तथा बहुत मुख वाले है । उनका यश सभी को विदित है और वह 'केशव' (श्रीनारायण भगवान्) के दास है, इसलिए उनके गुण गाया करते है । उनके सुन्दर चरण द्विजराज (पक्षियो के राज-हस) पर सुशोभित होते है और उनका आसन कमल है और जिन्हे ब्रह्माणी जो प्रिय है । ऐसे श्री ब्रह्मा जी है ।

दूसरा अर्थ

त्रिलोकीनाथ श्रीकृष्ण के पक्ष मे

जिन्हे हंस-जात (सूर्य से उत्पन्न) यमुना जी परम प्यारी लगती है, इसीलिए उनके गुणो को सुनकर उन्हे सुख मिलता है । वह सगीत के मित्र है तथा देवतागण उनकी प्रशसा करते है । जो सुखदायिनी शक्ति श्रीराधिकाजी के साथ रहने वाले है और कामदेव के मित्र है । जिन्होने रास रचते समय बहुत से शरीर धारण किये थे, यह बात सभी लोगो को विदित है 'केशव' कहते है कि जिनका यश दास (भक्त लोग) बखानते रहते है । अथवा 'केसवदास' कहते है कि उनके विदित यश का वर्णन अनेक मुखो द्वारा होता रहता है । जिनके हृदय पर द्विजराज (ब्राह्मण वर) भृगु का चरण सुन्दर भूषणवत् सुशोभित होता है । जो श्रेष्ठ नारियो के प्रत्यक्ष साथी है और जिन्हे परनारियाँ प्रिय है । इन गुणो से युक्त त्रिलोक नाथ श्रीकृष्ण को समझाना चाहिए ।

तीसरा अर्थ

नाथ-नाथ श्रीशकर जी के पक्ष मे

जो प्रभायुक्त और परमहस की भाँति रहते है और फिर भी अपने पुत्र (श्रीगरोश अथवा कार्त्तिकेय) की कीर्त्ति को सुनकर सुख पाते है। जो सगीत के मित्र है तथा देवता लोग जिनकी प्रशसा करते है। जो सुखदायिनी शक्ति (श्री पार्वती जी) के साथ रहते है और शरीर धारण के कष्टो से छुडाने के कारण कामदेव के स्नेही है। जो अनेक मुख वाले है। जो दास रूप से भगवान् नारायण के यश को गाते रहते है। जिनके शिर पर द्वितीया का चन्द्रमा सुशोभित होता है। जो कमलासन या पद्मासन लगाकर बैठते है और श्री लक्ष्मी जी के प्रिय है। इन गुणो से युक्त श्रीशकर जी को मानना चाहिए।

चौथा अर्थ

श्री रघुनाथ के पक्ष मे

जिन्हे परम हस-समूह महात्मा गण बडे अच्छे लगते है और जो उनकी प्रशसा सुनकर सुख पाते है। जिन्हे सङ्गीत अच्छा लगता है तथा जिनकी देवतागण प्रशसा किया करते है। जो शुख देने वाली शक्ति (श्री सोता जी के साथ रहते है और जो युद्ध प्रेमी है। बहु-वदन (अनेक मुखवाले) रावण को मारने के कारण जिनका यश सभी को विदित है और 'केशव' कहते है कि 'दास' अर्थात् भक्त जिनका यश गाते है। जिनके साथ द्विजराज चन्द्र) पद (शब्द) सुशोभित होता है (अर्थात् रामचन्द्र कहलाते है)। जो स्वच्छ चमकीले भूषणो से सुशोभित है और परदार (उत्कृष्ट द्वारा) श्री सीता जी के प्यारे है। ऐसे गुणो से युक्त श्रीरघुनाथ जी को समझना चाहिए।

पाँचवा अर्थ

श्रीराजा अमरसिह के पक्ष मे

जिन्हे परम (श्री शकर भगवान् एकलिङ्ग) अच्छे लगते है और हसजात अर्थात् सूर्यवश के गुणो को सुनकर जिन्हे सुख मिलता है।

जो सङ्गीत प्रिय हैं तथा बुद्धिमान कहे जाते है जो सुन्दर शक्ति [बर्छी] के धारणकर्ता है अर्थात् भाला चलाने मे निपुण है। जो युद्ध-प्रिय है। जिनके यश का वर्णन बहुत से लोग करते है और केशवदास भी करते है। जो ब्राह्मणो के चरणो को स्वच्छ भूषण मानते है अर्थात् उनके भक्त हैं। जो लक्ष्मीवान और परदार (शत्रु की भूमि, को प्यार करने वाले अथवा लेने की इच्छा रखने वाले हैं। ऐसे गुणो से युक्त राणा अमरसिंह को समझना चाहिए।

श्लेष अलङ्कार के भेद

दोहा

तिनमें एक अभिन्न पद, और भिन्नपद जानि।
श्लेष सुबुद्धि दुरेष के, केशवदास बखानि ॥३४॥

'केशवदास' कहते है कि हे सुबुद्धि पाठक! श्लेष अलकार दो तरह के होते है। उनमे से एक 'अभिन्नपद' कहलाता है और दूसरा भिन्नपद' कहलाता है।

उदाहरण

अभिन्नपद

कवित्त

सोहति सुकेशी मंजुघोषा रति उर बसी,
राजाराम मोहिबो को सूरति सोहाई है।
कलरव कलित सुरभि राग रंग युत,
बदन कमल षटपद छवि छाई है।
भृकुटी कुटिल धनु, लोचन कटाक्ष शर,
भेदियत तन मन अति सुखदाई है।
प्रमुदित पयोधर दामिनी सी नाथ साथ,
काम की सी सेना काम सेना बनि आई है ॥३५॥

काम सेना वेश्या कामदेव की सेना के समान ही बनकर आई है। क्योकि जिस कामदेव की सेना मे सुकेशी, मजुघोषा, रति तथा उरवसी जैसी सुन्दरियाँ रहती है, उसी प्रकार कामसेना भी सुकेशो (सुन्दर बाल वाली) मजुघोषा (मधुर बोलने वाली रवि के समय हृदय मे बसने वाली है। जिस प्रकार काम की सेना देखने मे सुन्दर लगती है, उसी प्रकार कामसेना वेश्या की भी सुहावनी मूर्त्ति है। जिस प्रकार कामदेव की सेना सुन्दर स्वर और रागरग से युक्त रहती है उसी प्रकार यह कामसेना वेश्या भी सुन्दर स्वरवाली और सुगध तथा रागरग से युक्त रहती है। काम की सेना का जिस प्रकार बदन कमल है, उसी प्रकार इसका मुख भी कमल के समान है। जैसे काम की सेना मे भौंरे गुँजारते है वैसे इसके मुख कमल पर भी भौंरे मँडराते है। जिस प्रकार काम की सेना मे टेढी भौंहे, टेढे धनुष का काम करती है और आँखो की तिरछी दृष्टि बाण के समान शरीर को भेद डालते है, उसी प्रकार इस काम सेना वेश्या की टेढी भौंहे तथा आँखो की तिरछी दृष्टि धनुष-वाण का काम देती हुई शरीर को भद डालती है। कामदेव की सेना जिस प्रकार तन और मन को सुख देने वाली होती है, उसी प्रकार यह कामसेना वेश्या भी शरीर और मन को सुख दायिनी है। काम की सेना मे जिस प्रकार उन्नतकुच और दामिनी जैसी नायिकाएँ होती है उसी प्रकार यह कामसेना भी उन्नत कुचवाली और दामिनी जैसी सुन्दर वर्ण की तथा चचल है। काम की सेना जिस प्रकार अपने नाथ (कामदेव) के साथ रहती है, उसी प्रकार यह अपने साथ राजारामसिंह के साथ रहती है।

भिन्नपद श्लेष

दोहा

पदही मे पद काढिये, ताहि भिन्नपद जानि।
भिन्नभिन्न पुनि पदनिके, उपमा श्लेष बखानि ॥३६॥

जहाँ एक पद (शब्द) को काट कर दूसरा शब्द बना कर अर्थ किया जाय, वहाँ 'भिन्नपद श्लेष' जानना चाहिए और जहाँ पर शब्दो के भिन्न-भिन्न अर्थ किये जाते है, वहाँ उपमाश्लेष कहलाता है।

उदाहरण (१)

उपमाश्लेष

दोहा

वृषभवाहिनी अंग उर, वासुकि लसत नवीन।
शिवसँग सोहत सर्वदा, शिवा कि रायप्रवीन ॥३७॥

उदाहरण

भिन्नपद श्लेष

राजै रज 'केशौदास' टूटत अरुण लार,
प्रतिभट अकन ते अक पै सरतु है।
सेन सुन्दरीन के बिलोक मुख भूषणनि,
किलकि किलकि जाही ताही को धरतु है।
गाढ़े गढ़ खेलही खिलौननि ज्यों तोरि डारै,
जग जय जश चारु चंद्र को अरतु है।
चंद्रसेन भुवपाल आगन विशाल रण,
तरो कर बाल बाल लीला सी करतु है ॥३८॥

हे चन्द्रसेन राजा! आपकी तलवार विशाल रण-भूमि मे बालको जैसी लीला करती है, क्योकि जिस प्रकार (केशवदास कहते है कि) बालक धूल से सन जाता है, उसी प्रकार आपकी तलवार भी रजोगुण मे सन जाती है। जिस प्रकार बालक के मुह से लाल-लाल टपकती है, उसी प्रकार आपकी तलवार से लाल-लाल लार अर्थात् रक्त टपकता है। जैसे बालक एक गोद से दूसरी गोद मे जाता रहता है वैसे आपकी तलवार भी एक की गोद से दूसरे की गोद म जाती है अर्थात् एक

शत्रु को काटकर दूसरे को काटती है। जिस प्रकार बालक सुन्दरियो की सेना (समूह) को देखकर उनके मुख भूषणो मे से जिसे चाहता है उसे, किलक-किलककर पकडता है उसी प्रकार आपकी तलवार भी सेना रूपी सुन्दरी के मुख्य भूषणो अर्थात् मुख्य सिपाहियो या सरदारो को किलक-किलककर पकडती है। जिस प्रकार बालक खेल मे बनाये हुए बडे-बडे किलो को खिलौनो की भाति तोड डालता है, उसी प्रकार आपकी तलवार भी बडे-बडे दुर्गो को खेल ही खेल खिलौनो की भाँति तोड डालती है अर्थात् जीत लेती है। जैसे बालक चन्द्रमा के लिए हठ करता है, वैसे आपकी तलवार जगत मे यशरूपी चन्द्रमा को लेने का हठ ठानती है।

श्लेष के अन्य भेद

दोहा

बहुरचो एक अभिन्न क्रिय, औ भिन्न क्रिय आन।
पुनि विरुद्ध कर्मा अपर, नियम विरोधी मान ॥२६॥

श्लेष के अभिन्न क्रिया, 'भिन्न क्रिया' 'विरुद्धकर्मा' 'नियम' और 'विरोधी' ये पाँच भेद होते है।'

उदाहरण (१)

अभिन्न क्रियाश्लेष

कवित्त

प्रथम प्रयोगियतु वाजि द्विजरात प्रति,
सुबरण सहित न विहित प्रमान है।
सजल सहित अङ्ग विक्रम प्रसङ्ग रङ्ग,
कोष ते प्रकाशमान धीरज निधान है।
दीन को दयाल प्रतिभटन को शाल करै,
कीरति को प्रतिपाल जानत जहान है।

जात है बिलीन ह्वै दुनी के दान देखि राम-
चन्द्र जी को दान कैधो केशव कृपान है ।।४०।।

'केशवदास' कहते है कि यह श्री रामचन्द्र जी का दान है या उनकी तलवार है। क्योकि जिस प्रकार दान मे पहले श्रेष्ठ ब्राह्मणो को सोने के आभूषणो सहित इतने घोडे दिये जाते है कि जिनका कोई प्रमाण (सीमा) नहीं होता, उसी प्रकार तलवार भी घोडो पर सवार क्षत्रिय राजाओ पर चलती है और वह सुन्दर रङ्ग की अर्थात् चमकीली तथा जिसका कोई प्रमाण नहीं है अर्थात् बहुत लम्बी है। जिस प्रकार दान सजल (जल के सहित) तथा सहित (प्रेम पूर्वक) होता है और अङ्ग (शरीर) मे उत्साह के साथ प्रसङ्ग पर प्रेम रखकर दिया जाता है, उसी प्रकार तलवार सजल (पानीदार) अङ्ग (मूठ) सहित होती है और विक्रम का प्रसङ्ग उपस्थित होने पर अपना रङ्ग दिखलाती है। जिस प्रकार दान (कोष) खजाने से निकालकर धैर्य पूर्वक दिया जाता है उसी प्रकार तलवार भी कोष (मियान) से निकलकर चलाने वाले को धैर्य देती है। जिस प्रकार दान दीनो को दयालु होकर दिया जाता है और इतना दिया जाता है प्रतिद्वन्दी दानी को खटकता है, उसी प्रकार तलवार कायरो पर दया प्रकट करती है और शत्रुओ को खटकती है जिस प्रकार दान कीर्त्ति का प्रतिपालन करता है, उसी प्रकार तलवार से भी कीर्त्ति [प्राप्त होती है इसे सारा ससार जानता है। जिस प्रकार उनके दान को] देखकर सब दान लुप्त हो जाते हैं उसी प्रकार उनकी तलवार को देखकर सब का मद उतर जाता है।

उदाहरण—२

भिन्न क्रिया श्लेष

कछु कान्ह सुनौ कल कूकति कोकिल काम की कीरति गावन सी।
पुनि बातैं कहै कलभाषिनि कामिनि केलि कलान पढ़ावत सी ।।

सुनि बाजत बीन प्रबीन नवीन सुराग हिये उपजावत सी ।
कहि केशवदास प्रकास विलास सबै बन शोभाबढ़ावत सी ।।४१।।

हे कृष्ण सुनो। कोयल, कामदेव की कीर्त्ति गाती हुई सी, बोल रही है। मधुर भाषिणी कामिनियाँ, काम-कला पढाती हुई सी बातें कर रही है। हृदय मे नवीन राग को उत्पन्न करती हुई सी नवीन-वीणा किसी प्रवीण के द्वारा बज रही है। 'केशवदास' कहते है कि ये सभी विलास बन (बाग, घर और जङ्गल) की शोभा ही बढाते है ।

उदाहरण—३

विरुद्धकर्मा श्लेष

कवित्त

दोऊ भगवंत, तेजवंत, बलवंत दोऊ,
दुहुन की बेदन बखानी बात ऐसी है।
दोऊ जानै पुण्यपाप, दुहुन के ऋषि बाप,
दुहुन की देखियत मूरति सुदेशी है।
सुनौ देवदेव बलदेव, कामदेव प्रिय,
'केशौराय' की सौ तुम कहौ तैसी जैसी है।
वारुणी को राग होत, सुरुज करत अस्त,
उदौ द्विजराज को जु होत यह कैसी है ।।४२।।

दोनो (सूर्य और चन्द्रमा) किरणधारी है, दोनो ही तेजस्वी और बलवान् है तथा दोनो ही का वर्णन वेदो मे है। दोनो ही पाप-पुण्य जानते है, दोनो के पिता ऋषि है दोनो ही की मूर्ति सुन्दर दिखलाई पडती है। हे देव-देव बलदेव सुनिए! आपको केशवराय (श्री कृष्ण) की शपथ है। जैसी बात है वैसी ठीक-ठीक बतलाइये। वारुणी (पश्चिम) के लाल होते ही चन्द्रमा के उदय होने पर, सूर्य अस्त हो जाते है, ऐसी बात क्यो होती है? वारुणी (शराब) पर अनुराग

होने पर सूर्य (क्षत्रिय वर्ष) का अन्त हो और चन्द्र (ब्राह्मण) का उदय हो, यही विचित्रता है।

उदाहरण—४

नियमश्लेष

कवित्त

बैरी गाय ब्राह्मन को, कालै सब काल जहाँ,
कवि कुल ही को सुवरण हर काज है।
गुरु सेज गामी एक बालकै बिलोकियत,
मातगनि ही को मतवारे को सो साज है।
अरि नगरीन प्रति होत है अगम्या गौन,
दुर्गन ही 'केशौदास' दुर्गति आज है।
राजा दशरथ सुत राजा रामचन्द्र तुम,
चिरु चिरु राज करौ जाको ऐसो राज है ॥३॥

जहाँ गाय और ब्राह्मण का बैरी यदि कोई है तो काल (मृत्यु) ही है, अन्यथा कोई बैरी नहीं। जहाँ सुवरण हरने का काम केवल कवियो का ही है अर्थात् कोई सुवर्ण सोने की चोरी नहीं करता, केवल कवि लोग सुवर्ण (सुन्दर अक्षर) का हरण काव्य रचना के लिए करते है। जहाँ गुरु की शय्या पर सोता हुआ केवल बालक ही देखा जाता है अर्थात् गुरु (माता) के साथ केवल बालक सोता है अन्यथा गुरु सेजगामी कोई नहीं है। जहाँ मतवालापन केवल हाथियो मे ही पाया जाता है, अन्यथा कोई मतवाला नहीं है। जहाँ अगमागमन (अगम्य स्थानो मे पहुँचना) केवल शत्रु नगरी पर ही होता है अन्यथा अगम्यागमन (अगम्य स्त्री-सङ्गम) कहीं सुनाई तक नहीं पडता। 'केशवदास' कहते है कि जहाँ दुर्गति (टेढी हालत) केवल दुर्गो (किलो) मे ही मिलती है अन्यत्र दुर्गति कहीं नहीं है। हे राजा दशरथ

के पुत्र रामचन्द्र! आपका ऐसा राज्य है, आप चिरकाल तक राज्य करें।

उदाहरण—५
विरोधीश्लेष
सवैया

कृष्ण हरे हरये हरै संपति, शंभू विपत्ति इहै अधिकाई।
जातक काम अकामनि को हित घातक काम सुकाम सहाई।
छाती मे लच्छि दुरावत वेतो फिरावत ये सबके सँग धाई।
यद्यपि 'केशव' एक तऊ, हरि ते हर सेवक कोसत भाई ॥४४॥

श्री कृष्ण (तो अपने दासो की) धीरे-धीरे सम्पत्ति हर लेते हैं और श्री शङ्कर जी विपत्ति को हरते है यही अधिकता है। हरि (श्रीकृष्ण) काम को उत्पन्न करने वाले है अर्थात् उसके पिता है और निष्काम भक्तो के हितैषी है। श्रीशंकर जी कामदेव का घातक (मारने वाले) और (सकाम इच्छा से भक्ति करने वाले) भक्तो के सहायक है। वे (श्रीकृष्ण) लक्ष्मी को अपनी छाती मे छिपाए रखते है और ये (श्री शकर जी) सभी (भक्तो) के साथ उसे फिराते रहते हैं अर्थात् भक्तो को लक्ष्मी प्रदान करते है। 'केशवदास' कहते है कि यद्यपि हरि और (श्रीकृष्ण) और हर (श्रीशकर जी) एक ही है, परन्तु शकर जी सेवक (भक्त) पर अधिक सद्भाव रखते है।

१३—सूक्ष्म अलङ्कार

दोहा

कौनहु भाव प्रभाव ते, जानै जिय की बात।
इगित ते आकार ते, कहि सूक्ष्म अवदात ॥४५॥

किसी भी भाव, सकेत या आकार से, जब दूसरे के मन की बात जान ली जाती है, तब उसे सूक्ष्म अलकार कहते हैं।

उदाहरण—६

सवैया

सखि सोहत गोपसभा महि गोविन्द बैठे हुते द्युतिको धरिकै।
जनु केशव पूरणचन्द्र लसै चित चारु चकोरनिको हरिकै॥
तिनको उलटोकरि आनि दियो केहु नीर नयो भरिकै।
कहि काहेते नेकु, निहार मनोहर फेरि दियो कविता करिकै॥४६॥

(केशवदास किसी सखी की ओर से कहते हैं कि हे सखी! श्रीकृष्ण गोपो की मडली मे, शोभा धारण किए हुए बैठे थे। वह ऐसे ज्ञात हो रहे थे मानो चकोरो का मन हरण करता हुआ पूर्ण चन्द्रमा सुशोभित हो रहा हो। इसी बीच मे, किसी ने उसको कमल के पुष्प मे पानी भरकर उलटा करके, दे दिया। श्रीकृष्ण ने उसकी ओर तनिक देखा और उस कमल को काली जैसा करके (खिले हुए फूल को, बन्द करके) लौटा दिया। बता, क्यो ?

[कमल पुष्प लाने वाले का तात्पर्य यह था कि वियोगिनी अपना कमल-मुख लटकाये हुए, आपके विरह मे रो रही है। श्रीकृष्ण ने, कमल को कली बनाकर यह सकेत किया। कि जब कमल सकुचित हो जाते है, तब रात मे मिलूँगा।]

१४—लेशालंकार

दोहा

चतुराई के लेसते, चतुर न समझैं लेस।
बरणत कवि कोविद सबै, ताको केशव लेस॥४७॥

केशवदास कहते है जहाँ ऐसी गूढ चतुराई की जाय कि उसे चतुर लोग भी लेशमात्र न समझ पावें, वहाँ, उसे कवि लोग तथा विद्वान सभी 'लेश' अलकार कहा करते है।

उदाहरण
सवैया

खेलत हैं हरि बागे बने जहँ बैठी प्रिया रतिते अतिलोनी।
केशव कैसेहु पीठ में दीठि परी कुच कुकुम की रुचिरोनी।
मातु समीप दुराइ भले तिन सात्विक भावन की गति होनी।
घूरिकपूरकी पूरि विलोचन सूँघि सरोरुह ओढ़ि उढ़ोनी ॥४८॥

श्रीकृष्ण बने-ठने हुए बाग मे खेल रहे थे और उनकी रति से भी सुन्दर प्रिया वहीं बैठी हुई थी। 'केशवदास' कहते है कि किसी प्रकार उसकी दृष्टि उनकी पीठ पर लगे हुए, निज कुचकुंकुम की रमणीय चमक पर जा पडी। माता के समीप होने के कारण उसने अपने सात्विक भावो (आँसू, कम्प तथा रोमाच को भली-भाँति छिपा लिया। आँसुओ को छिपाने के लिए कपूर की धूल आँखो मे छोड ली, कम्प छिपाने के लिए कमल को सूँघने लगी (जिससे ज्ञात हो कि कमल की सुगन्ध की प्रशसा मे सिर हिल रहा है), और रोमाच को छिपाने के ओढनी को अच्छी तरह से ओढ लिया।

[प्रणय-कलह के समय श्रीकृष्ण ने प्रिया की ओर से पीठ दी थी। नायिका ने प्रेम-वश, पीछे से हो उनके मुख का चुम्बन किया था, अत. उसके कुचो का कुंकुम उनकी पीठ पर लग गया था उसी को देखकर नायिका को सात्विक भाव उत्पन्न हुए और उसने उन्हे चतुराई से छिपा लिया।].

१५—निदर्शना
दोहा

कौनहुँ एक प्रकारते, सत अरु असत समान।
कहिये प्रकट निदर्शना, समुझत सकल सुजान ॥४९॥

जहाँ किसी भी एक ढङ्ग से, भली और बुरी बातो का समान परिणाम (अर्थात् भले का भला और बुरे का बुरा) प्रकट किया जाता है उसे 'निदर्शना' कहते है, इसको सभी चतुर लोग जानते है ।

उदाहरण

कवित्त

तेई करे चिरराज, राजन में राजै राज,
तिनही को यश लोक-लोक न'अटतु है ।
जीवन, जनम तिनही के धन्य 'केशौदास'
औरन को पशु सम दिन निघटतु है ।
तेई प्रभु परम प्रसिद्ध पुहुमी के पति,
तिनही की प्रभु प्रभुताई को रटतु है ।
सूरज समान सोम मित्रहू अमित्र कहँ,
सुख, दुख निज उदै अस्त प्रगटतु है ।।५०।।

वे ही राजा चिरकाल तक राज्य करते है, तथा वे ही राजाओ मे अच्छे माने जाते है और उन्हीं का यश लोको मे नहीं समाता । 'केशवदास' कहते है कि उन्हीं का जन्म धन्य समझना चाहिए और अन्य राजाओ के दिन तो पशु के समान केवल, खाने-पीने और सोने मे कटते है । वही राजा प्रसिद्ध होते हैं और उन्हीं राजाओ की प्रभुताई को लोग रटते रहते है जो सूर्य और चन्द्रमा की भाँति अपने उदय तथा अस्त से, मित्र तथा शत्रुओ को, सुख अथवा दुख देते है ।

१६—ऊर्जालङ्कार

दोहा

तजै निज हँकार को, यद्यपि घटै सहाय ।
ऊर्ज नाम तासों कहे, केशवकवि कविराय ।।५१।।

केशवदास कहते है कि जहाँ सहायता के घटने पर भी (अर्थात् सहायहीन होने पर भी) स्वाभिमान को न छोडा जाय, वहाँ सभी श्रेष्ठ कविगण 'ऊर्ज' अलकार कहते है ।

उदाहरण
सवैया

को बपुरो जो मिल्यो है विभीषण है कुलदूषण जीवैगो कौलों ।
कुम्भकरन्न मर्‌यो मघवारिपु, तौहू कहा न डरो यम सौलों ।
श्रीरघुनाथ के गातनि सुन्दरि जानसितू कुशलात न तौलों ।
शाल सबै दिगपालनिको कर रावण के करवाल है जौलों ॥५२॥

(रावण मन्दोदरी से कहता है कि) विभीषण जो रामचन्द्र से जा मिला है, वह बेचारा क्या है और वह कुलकलक जीवेगा ही कब तक ? कुम्भकर्ण और मेघनाथ भी जो मर गये, उसका भी मुझे शोच नहीं है मै तो यमराजो से भी नही डरता । हे सुन्दरी ! जब तक समस्त दिग्पालो को शालनेवाला खड्ग मेरे हाथो मे है, तब तक श्रीरामचन्द्र जी के शरीर की कुशल मत समझ ।

१७—रसवत अलकार
दोहा

रसवत होय सुजानिये, रसवत केशवदास ।
नव रसको सक्षेपही, समझो करत प्रकास ॥५३॥

'केशवदास' कहते है कि किसी भी रस-मय वर्णन को रसवत अलकार समझिए। अथवा यह मानिए कि यह अलकार मानो नवो रसो का सक्षेप मे प्रकटीकरण है ।

उदाहरण
श्रृङ्गार रसवत

आन तिहारी, न आन कहौ, तनमे कछु आन न आनही कैसो ।
केशव स्याम सुजान स्वरूप न, जाय कह्यो मन जानतु जैसो ॥

लोचन शोभहि पीवत जात, समात सिहात, अघात न तैसो ।
ज्यों न रहात बिहात तुम्हे, बलिजात सुबात कहौ टुक वैसो ।।५४।।

मै आपको शपथ खाकर कहती हूँ कि 'मुझे आपसे और कुछ भी नही कहना है ।' (यदि कुछ कहना चाहती हूँ तो यही कि कुछ कुछ आपका शरीर तथा पूर्णरूप से मुख अन्य (अर्थात् मेरे पति) जैसा ही है । (केशवदास उस नायिका की ओर से कहते है कि) सुजान श्याम का जैसा स्वरूप है, वह कहा नहीं जा सकता । वह जैसा है, वैसा मन ही जानता है । (परन्तु) मेरे नेत्र आपकी शोभा को भी पीते जाते है, उसी मे समाते से जाते है और वैसे ही सिहाते हुए अघाते नहीं । यदि आपको मेरे पास रहते नहीं बनता तो मै बलिहारी जाती हूँ, थोडी देर मेरे पास बैठकर कुछ बातें ही कीजिए ।'

[इसमे वियोग शृङ्गार मुख्य है, क्योकि नायिका वियोगिन है परन्तु अन्य पुरुष से प्रेम प्रकट करती हुई बाते करना चाहती है, अत. सयोग शृङ्गार भी गौण रूप से विधमान है । अत वियोग शृङ्गार का पोषक सयोग शृङ्गार रसवत है]

वीर रसवत

छप्पय

जिहि शर मधुमद मर्दि, महासुर मर्दन कीनों ।
मार्‌यो कर्कस नरक शंख, हनि शंख सुलीनों ।।
नि·कण्टक सुरकटक कर्‌यो, कैटभ वपु खण्ड्यो ।
खरदूषण त्रिशिरा कबन्ध तरु खण्ड विहण्ड्यो ।।
बल कुम्भकरण जिमि सहर्‌यो पल न प्रतिज्ञातै टरौ ।
तिहि बाण प्राणदशकंठ के, कठ दशो खडित करौ ।।५५।।

जिस बाण से मैने 'मधु' राक्षस के अभिमान को चूर किया और जिससे मैने 'मुर' राक्षस का मर्दन किया । जिससे दुष्ट नरकासुर और

शखासुर को मारा जिससे 'कैटभ' राक्षस के शरीर को खडित करके देवताओ के समूह को निष्कटक बनाया। जिससे खर, दूषण, त्रिशिरा और कबन्ध राक्षसो को नष्ट किया और सातो ताल वृक्षो को काट गिराया जिसके बल मैने कुम्भकर्ण को मारा, उसी बाण से रावण के दशो शिरो को काट गिराऊँगा इसकी मै प्रतिज्ञा करता हूँ। इससे मै पल भर को भी न डिगूगा।

[इस उक्ति को श्रीरागचन्द्र जी ने श्रीलक्ष्मण जी को हवोत्साह होते देख कहा था। उत्साहित करने के कारण इसका स्थायी भाव उत्साह है अत वीर रस से पुष्ट वीर रसवत हुआ]

रौद्र रसवत

उदाहरण

छप्पय

करि आदित्य अदृष्ट नष्ट यम करौ अष्ट वसु।
रुद्रनि बोरि समुद्र करौं गन्धर्व सर्व पसु॥
बलित अबेर कुबेर बलिहि गहि देउँ इन्द्र अब।
विद्याधरनि अविद्य करो बिन सिद्धि सिद्ध सब॥
लैकरो दासिदिति की अदिति अनिल अनल मिलिजाहि जब।
सुनि सूरज सूरज उगतही, करौं असुर संसार सब॥५६॥

[यह श्रीरामचन्द्र जी की उक्ति है। जिस समय श्रीलक्ष्मण जी के शक्ति लगी थी और वह अचेत पडे हुए थे, उस समय वह बहुत व्यग्र हो रहे थे कि कहीं सूर्योदय न हो जाय और श्रीलक्ष्मण जी की औषधि न हो सके, क्योकि ऐसा ही बतलाया गया था कि सूर्योदय पर औषधि का कोई प्रभाव न रहेगा। उन्हे देवताओ पर क्रोध आ गया कि मै तो इनके हित के लिए ही रावण से युद्ध कर रहा हूँ और ये

वरदानो द्वारा मुझे हानि पहुचाने को उद्यत प्रतीत होते है उसी क्रोधा वेश मे वह कह रहे है कि]

मे बारहो सूर्य की अदृष्य करके, या आठो वसुओ को नष्टकर डालूगा। रुद्रो को समुद्र मे डुबाकर, गन्धर्वो को पशु के समान बलि चढा दूँगा। वरुण सहित कुबेर और इन्द्र को पकडकर बलि को समर्पित कर दूँगा। विद्याधरो का अस्तित्व मिटा दूँगा और सिद्धो को सिद्धि-रहित कर दूँगा। आदिति को दिति की दासी बनाकर छोडूगा। वायु, अग्नि और जल सब मिट जायेँगे। हे सूरज (सूर्यपुत्र-सुग्रीव) ! सुनो, सूर्य के उदय होते ही मै सारे ससार को, अपने बल से देव-रहित कर डालूँगा।

[इसमे 'क्रोध' स्थायी भाव है, इसलिए रौद्र रसवत अलकार है]

करुणा रसवत

उदाहरण

सवैया

दूरिते दुन्दुभी दीह सुनी न गुनी जनु पुँज की गुँजन गाढ़ी ॥
तोरन तूर न ताल बजै, बरह्मावत भाट न गावत ढाढ़ी ॥
विप्र न मंगल मन्त्र पढ़ै, अरु देखै न वारवधू ढिग ठाढ़ी।
केशव तात के गात, उतारति आरति मातहि आरति बाढ़ी ॥५७॥

(जिस समय श्री भरत जी अपनी ननिहाल से लौटे, उस समय उन्होने देखा कि) न तो दूर से दुन्दुभी की ध्वनि सुनाई पडी और गुणी गायको का ही शब्द सुनाई पडा। न तो रण सजा हुआ देखा, न तुरही और मँजीरे बजाते हुए सुने और न भाटो ने विरुदावली गाई तथा न ढाढो गाते हुए मिले। न ब्राह्मण मगल मत्र पढते देखे और न वेश्याएँ द्वार पर खडी हुई पाई। 'केशवदास' कहते हैं कि

केवल माता को आरती उतारते देख पुत्र (भरत जी) का दुख बढ़ गया ।

(इसमे 'शोक' स्थायी भाव है अत. करुणा रसवत अलङ्कार है)

भयानक रसवत

उदाहरण (१)

सवैया

रामकी बाम जु ल्याये चुराय, सु लक मे मीचुकी बेलि बईजू।
क्यो रणजीतहुगे तिनसो, जिनकी धनुरेख न नांघी गईजू ॥
बीसबिसे बलवन्तहुते जो, हुती दृग केशव रूप रईजू।
तोरि शरासन शंकर को प्रिय, सीय स्वयम्बर क्यों न लईजू ॥५८॥

(मन्दोदरी रावण से कहती है कि) तुम जो श्रीरामचन्द्र की भार्या को चुरा लाये, सो तुमने मानो लङ्का मे मृत्यु की बेल बो दी। उनसे तुम युद्ध मे कैसे जीतोगे, जबकि उनके धनुष से खींची हुई रेखा को तुम न लाघ सके ? (केशवदास-मन्दोरी की ओर से कहते हैं कि) यदि तुम बीसो विश्वा (पूर्ण रूप से) बलवान थे तो, जो सीता तुम्हारी दृष्टि मे रूपमयी ज्ञात होती थी, उसे श्री शङ्कर जी का धनुष तोडकर, स्वयम्बर के समय, क्यो न ले लिया ?

(यहाँ मन्दोदरी के मन मे 'भय' उत्पन्न हुआ ज्ञात होता है अत वही स्थायी भाव है और इसीलिए यह भयानक रसवत अलङ्कार है).

उदाहरण (२)

सवैया

बालि बली न बच्यो पर खोरि, सु क्यों बचिहौ तुमकै निज खोरहि।
केशव छीर समुद्र मथ्यो कहि, कैसे न बांधि है सागर थोरहि ॥

श्रीरघुनाथ गनो असमर्थ न, देखि बिना रथ हथिहि घोरहि ।
तोयो शरासन शंकर को जिहि, शोच कहा तुव लक न तोरहि ॥५६॥

(मन्दोदरी ही फिर कह रही है कि) जब दूसरे (सुग्रीव) का अपराध करके उनके हाथ से बालि नहीं बच सका, तब तुम उन्हीं का अपराध करके कैसे बचोगे ? (केशवदास मन्दोदरी की ओर से कहते है कि) जब उन्होने क्षीर समुद्र मथ डाला, तब इस छोटे समुद्र को क्यो न बॉधलेंगे । इसलिए तुम श्रीरघुनाथ जी को, बिना रथ, घोडे और हाथियो के देख असमर्थ न समझो । जिन्होने श्रीशङ्कर जी का धनुष तोड डाला, वह तुम्हारी लङ्क (कमर) को न तोड सकेगा—इसमे सोच-विचार ही क्या है ।

अद्भुत रसवत

उदाहरण (१)

कवित्त

आशीविष, सिन्धु विष, पावक सों नातों कछू
हुतो प्रह्लाद सों, पिता को प्रेम टूटो है ।
द्रौपदी की देह में खुशी ही कहा दु.शासन,
खरोई खिसानों खैचि बसन न खूॅटो है ।
पेट में परीछित की, पैठि कै बचाई मीचु,
जब सब ही को बल विधवान लूटो है ।
केशव अनाथन को नाथ जो न रघुनाथ,
हाथी कहा हाथ कै हथ्यार करि छूटो है ॥६१॥

जिस समय पिता का प्रेम टूट गया, उस समय सर्प हलाहल विष, तथा अग्नि से क्या प्रह्लाद का कुछ नाता था (जो वह बच गया) ? द्रौपदी की देह मे क्या वस्त्रो की धरोहर रखी हुई थी, जो दु शासन

खींच-खींच कर थक गया और वस्त्र कम न हुए। जब ब्रह्मा के बाण (ब्रह्मास्त्र) ने सबका बल लूट लिया अर्थात् नि.शक्त बना दिया, तब (चक्रसुदर्शन) द्वारा पेट मे पहुँचकर परीक्षित को बचाया था। 'केशवदास' कहते है कि यदि श्रीरामचन्द्र जी अनाथो के नाथ न होते तो क्या हाथी ग्राह के फन्दे से, अस्त्र चलाकर छूटा था ?

(उक्त घटनाओ से आश्चर्य का भाव उत्पन्न होता है अत अद्भुत रसवत है)

उदाहरण (२)

कवित्त

केशौदास वेद विधि व्यर्थ ही बनाई विधि,
 व्याध शवरा को, कौने सहिता पढ़ाई ही।
वेष धारी हरि वेप देख्यो है अशेष जग,
 तारका को कौने सीख तारक सिखाई ही।
बारानसी वारन कस्यो हो वसोबास कब,
 गनिका कबहि मनि कनिका अन्हाई ही।
पतितन पावन करत जो न नन्दपूत,
 पूतना कबहि पति देवता कहाई ही ॥६२॥

'केशवदास' कहते हैं कि वेद-विधि व्यर्थ ही बनाई गई है (क्योकि यदि वेदानुकूल चलने से ही मोक्ष मिलता तो) व्याध तथा शबरी को किसने सहिता पढाई थी (जो तर गये ?) श्रीकृष्ण का रूप रखकर राजकुमारी से विवाह करने वाले श्रीकृष्ण वशधारी की जो लज्जा रखी थी, उसे भी सारे ससार ने देखा था ताडका को त्रक मन्त्र की शिक्षा किसने दी थो (जो वह भी तर गई) ? हाथी ने बनारस मे जाकर कब निवास किया था और गणिका कब मणि कर्णिका पर स्नान करने गई थी ? यदि नन्द के पुत्र (श्रीकृष्ण) पतितो का

उद्धार करनेवाले न होते तो पूतना कहाँ की पतिव्रताई कहलाती थी (जो उसका उद्धार हो गया) ।

(इसमे भी अद्भुत बातो के कारण 'आश्चर्य' का उदय होता है अतः अदभुत रसवत है)

हास्य रसवत

उदाहरण

सवैया

बैठति है तिनमे हठिकै, जिनकी तुमसो मति प्रेमपगी है।
जानत हौ नलराज दमन्ती की दूत कथा रसरग रँगी है ।।
पूजैगी साध सबै सुखकी मन, भाग की केशव जोति जगी है।
भेद की बात सुनेते कछू वह, मासकते मुसुक्यान लगी है ।।६३।।

(एक दूती नायक से कहती है कि जिसकी बुद्धि तुम्हारे प्रेम मे पगी हुई है अर्थात् जो तुमसे प्रेम करती है, वह उन्हीं मे हठपूर्वक जाकर बैठा करती है। मै यह भी जानती हूँ कि वह राजा नल और दमयन्ती की कथा मे बडा आनन्द लेती है (क्योकि दमयन्ती ने पहले हँस के द्वारा दूतत्व करवाया था) । (केशवदास दूती की ओर से कहते हैं कि) मुझे ऐसा ज्ञात होता है कि तुम्हारे मन की सब साध पूरी होगी और तुम्हारे भाग्य की ज्योति अब जग गई है अर्थात् तुम्हारा भाग्योदय हो गया है । इधर भेद की बातें (प्रेममयी बाते) सुनकर वह लगभग एक महीने से मुसकराने भी लगी है ।

(उक्त बातो को सुनकर नायक के मन मे हँसी का भाव उदय होना स्वाभाविक है, अत हास्य रसवत अलकार है)

शान्त रसवत

उदाहरण

सवैया

देइगो जीवनवृत्ति वहै प्रभु है सबरे जगको जिनदैये।
आवत ज्यों अन उद्यमते सुख, त्यों दुख पूरबके कृत पैये ॥
राज औ रङ्क सुराज करो, अब काहे को केशव काहु डरैये।
मारनहार उबारनहार सुतौ सबके शिर ऊपर हैये ॥६४॥

जो प्रभु सारे ससार को जीवन वृत्ति देता है, वही मुझे भी जीविका देगा। बिना उधम किये जैसे सुख मिलता है वैसे ही पूर्वजन्म कृत पुण्य के अनुसार दु ख भी प्राप्त होता है। 'केशवदास' कहते है कि (यही सोचकर राजा और रक सभी आनन्द करो क्योकि मारने और बचाने वाला तो सबके ऊपर है ही।

(इसमे ईश्वर पर दृढ विश्वास की शिक्षा दी गई है, अत- शान्त रसवत अलकार है)

१८—अर्थान्तर न्यास

दोहा

और जानिये अर्थ जहँ, औरे वस्तु बखानि।
अर्थांतर को न्यास यह, चारि प्रकार सुजानि ॥६५॥

जहाँ दूसरी वस्तु का वर्णन करके, दूसरा अर्थ लगाया जाय, वहाँ अर्थान्तर न्यास अलकार होता है। यह चार प्रकार का समझना चाहिए।

सामान्य उदाहरण

सवैया

भोरेहूँ भौह चढ़ाय चितै, डरपाइये कै मन केहूँ करेरो।
ताको तौ केशव कोरहिये दुख होत, महा सु कहौ इत हेरो ॥

कैसोहै तेरो हियो हरि में रहि, छोरै नहीं तनु छूटत मेरो।
बूँदकदूधको मारयो है बांधि, सुजानत हौ माई जायो न तेरो ॥६६॥

(कोई एक ब्रजनारी यशोदा जी से कहती है कि) मै तो धोखे से भी अपने बच्चे को भौहे चढाकर जी कडा करके डरवाती हूँ तो (केशवदास उसकी ओर से कहते है कि) मुझे उसका करोडो भाँति से, हृदय मे महादु ख होता है इसीलिए कहती हूँ कि जरा इधर देख ! तेरा हृदय श्रीकृष्ण के प्रति कैसा है ? तनिक ठहर जा ! (देख ऐसी गाँठ लगाई है कि) तनिक भी खोलने से नहीं खुलती तूने एक बूँद दूध को फैला देने पर अपने पुत्र को बाँधकर मारा है इससे ऐसा समझती हूँ कि यह तेरा जन्माया हुआ नहीं है।

[इसमे 'जायो न तेरो वाक्याश से तुझे पुत्र के प्रति प्रेम नहीं है' अर्थ सूचित होता है अत अर्थान्तर न्यास है।]

अर्थान्तर न्यास के चार भेद

दोहा

युक्त, अयुक्त, बखानिये, और अयुक्तायुक्त।
केशवदास विचारिये, चौथो युक्तायुक्त ॥६७॥

'केशवदास' कहते है कि (अर्थान्तर न्यास के) (१) युक्त (२) अयुक्त (३) अयुक्तायुक्त और (४) युक्ता युक्त ये चार भेद माने जाते है।

१—युक्त अर्थान्तर न्यास

दोहा

जैसो जहाँ जु बूझिये, तैसो तहाँ सु आनि।
रूपशील गुण युक्ति बल, ऐसो युक्त बखानि ॥६८॥

जिसको जैसा समझकर वर्णन किया जाय, उसको रूप, शील, गुण और युक्ति बल से वैसा ही प्रमाणित भी किया जाय तब उसे युक्त कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

गरुवो गुरू को दोष, दूषित कलङ्क करि,
भूषित निशाचरीन अंकन भरत है।
चंडकर मण्डल ते लै लै वहु चडकर,
'केशौदास' प्रतिभास मास निसरत है।
विषधर बन्धु है अनाथिनि को प्रति बन्धु,
विष को विशेष बन्धु हिये हहरत है।
कमल नयन की सौं, कमल नयन मेरे,
चन्द्रमुखी ! चन्द्रमा ते न्याय ही जरत है। ६१।

(कोई विरहिणी अपनी सखी से कहती है कि) चन्द्रमुखी ! मै कमल-नयन (श्री कृष्ण) की शपथ खाकर कहती हूँ कि मेरे कमल जैसे नेत्र चन्द्रमा को देखकर ठीक ही जलते है, (क्योकि चन्द्रमा और कमल का वैर स्वाभाविक ही है) दूसरे यह चन्द्रमा के गुरु के प्रति भारी अपराध का अपराधी है कलक से दूषित है। निशाचरियो को अक भरता है (क्योकि राक्षसनियाँ रात मे ही विचरती और सुख पाती है) सूर्य मण्डल से बहुत सी किरणो को चुरा चुरा प्रतिमास निकला करता है। इसके विषधर (श्री शकर जी) बन्धु है। विरहिणियो शत्रु है और उस विष का तो विशेष भाई (सहोदर) ही है, जिससे सबके हृदय हिल जाते है।

[इसमे चन्द्रमा का वर्णन पहले यह कह कर किया गया कि 'मेरे नेत्र चन्द्रमा को देखकर जलते है फिर इसी कथन को उसके रूप, शील, गुण तथा युक्ति बल से प्रमाणित किया गया है अत युक्ति अर्थान्तर न्यास है]

२—अयुक्त अर्थान्तर न्यास

दोहा

जैसो जहाँ न बूझिये, तैसो तहाँ जु हो।
केशवदास आयुक्त कहि, बरणत है सब कोय ॥७०॥

जहाँ जैसा वर्णन न करना चाहिए, वहाँ वैसा ही वर्णन किया जाय तब 'केशवदास' कहते है कि उसको सब लोग अयुक्त अर्थान्तर न्यास कहकर वर्णन करते है।

उदाहरण

कवित्त

'केशवदास' होत मारसिरी पै सुमार सी री,
आरसी लै देखि देह ऐसिये है रावरी।
अमल बतासे ऐसे ललित कपोल तेरे,
अधर तमोल धरे द्दग तिल चावरी।
येही छबि छकि जात, छन मे छबीले छैल,
लोचन गँवार छीनि लै है, इत आवरी।
बार-बार बरजति, बार-बार जातिकत,
मैले बार बारों, अनिवारी है तू बावरी ॥७१॥

(केशवदास किसी सखी की ओर से उसकी सखी से कहते है कि) हे सखी! तेरी शोभा से, कामदेव पर मानो मार सी पड रही है अर्थात् उसकी शोभा तेरी शोभा के आगे मन्द जान पडती है तनिक दर्पण लेकर देख! तेरी छवि ऐसी ही है तेरे बतासे जैसे सुन्दर कपोल है, ओठो पर तेरे पान है और आँखे तिल चावरी (सफेद और काले तिल) की भाँति काली और श्वेत है। तेरी इस शोभा से ही तो छबीले छैल क्षण भर मे छक जाया करते है। गँवारो के नेत्र, तेरी इस शोभा को छीन लेगे (नजर लग जायगी), इसलिए तू इधर

आजा। मै तुझे बार-बार मना करती हूँ कि तू दरवाजे-दरवाजे क्यो घूमती है? मै शोभावली अनेक स्त्रियो को तुझ पर निछावर करती हूँ, तू ऐसी ही शोभावली है।

[इसमे स्त्री की शोभा की समता रति से न करके कामदेव से की गई है आरसी मे मुँह न दिखाकर, देह को दिखाने के लिए कहा गया है, बतासे जैसे गाल बताये गये है, अधर पर तमोल का वर्णन है तथा सिना-सित न कहकर तिल चांवरी सी आँखे बताई गई है। अतः ये सब वर्णन अयुक्त है इसीलिए अयुक्त अर्थान्तर न्यास है]

३—अयुक्त-युक्त अर्थान्तर न्यास

दोहा

अशुभै शुभ ह्वै जात जहँ, क्यों हूँ केशवदास।
इहै अयुक्तै युक्त कवि, बरणत बुद्धि विलास ॥७२॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ पर अशुभ वर्णन किसी प्रकार शुभ वर्णन हो जायँ, वहाँ बुद्धिमान कवि लोग अयुक्तायुक्त अर्थान्तर न्यास कहते है।

उदाहरण (१)

सवैया

पातकहानि पितासगहारि वे, गर्भ के शूलनिते डरिये जू।
तालनि को बँधिबो बध रोरको, नाथ के साथ चिता जरिये जू॥
पत्रफटेतै कटे ऋण केशव, कैसहूँ तीरथ में मरिये जू।
नीकी सदा लगै गारि सगेन को, डांड़ भली जु गया भरिगे जू॥७३॥

पातक (पाप) की हानि भली है, पिता से हार जाना अच्छा है। गर्भवास के कष्टो से डरना अच्छा है तालाबो का बधना निर्धनता का नाश और अपने पति के साथ चिता पर जलना भी अच्छा है।

'केशवदास' कहते है जिस कागज के फटने से ऋण से छुटकारा मिलता हो, उसका फटना भला है और इसी प्रकार तीर्थ मे मरना भी अच्छा है। अपने सगे-सम्बन्धियो की गाली अच्छी है और वह दण्ड अच्छा है, जो गया मे भरना पडे।

[इसमे हानि, हार, शूल, बाधना, बध, चिता पर जलना, फटना, करना, मरना, गाली खाना तथा दण्ड भरना आदि वर्णन अशुभ है परन्तु उनको शुभ वर्णन किया गया है अत अयुक्त-युक्त अर्थान्तर न्यास अलकार है]

उदाहरण (२)

सवैया

आगैह्वै लीबो यहै, जु चितै इत, चौंकि उतै दृग ऐंचिलई है।
मानिबे को वहई प्रति उत्तर, मानिये बात जु मौनमई है॥
रोषिकी रेख, वहै रस की रुख, काहे को केशव छांडि दई है।
नाहि इहाँ तुम नाहि सुनी यह नारि नईन की रीति नई है॥७४॥

(कोई दूती नायक से कहती है कि) उसने जो तुम्हे आगे बढकर लेना मानो तुम्हारा स्वागत करना था उसने जो चौंक कर तुम्हारी ओर से आँखें फेर ली, यह सकोच था। तुम्हारी बातो को मानने का प्रत्युत्तर यही था कि वह चुप हो गई, इसलिए मेरी बात मानिए। उसने जो क्रोध की रेखा प्रकट की व्ही मानो उसकी रसिकता है अत' (केशवदास उस दूती की ओर से नायक से कहते है कि) तुमने उसे क्यो छोड दिया ? तुमने क्या यह नहीं सुना कि नई स्त्रियो की रीति भी नई ही हुआ करती है।

[इसमे आँखें फेर लेना, चुप हो जाना और रोष की रेखा प्रकट करना आदि बाते अयुक्त है परन्तु युक्त (उचित) बतलाई गई है अतः अयुक्तायुक्त अर्थान्तर न्यास अलङ्कार है]

४—युक्ता-युक्त अर्थान्तर न्यास

दोहा

इष्ट बात अनिष्ट जहँ, कैसे हूँ ह्वै जाय।
सोई युक्तायुक्त कहि, बरणत कवि सुखपाय ॥७५॥

जहाँ अशुभ वर्णन किसी प्रकार शुभ वर्णन हो जायँ, वहाँ कवि लोग युक्तायुक्त अर्थान्तर न्यास कहा कहते है।

उदाहरण (१)

सवैया

शूल से फूल, सुवास कुवाससी, भाकसी से भये भौन सभागे।
केशव बाग महाबनसो जुरसी चढी जोन्ह सबै अँग दागे॥
नेह लग्यो उन नाहरसो, निशि नाह घरीक कहूँ अनुरागे।
गारीसे गीत बिराबिषसी सिगरेई शृगार अँगार से लागे॥७६॥

उसे फूल शूल जैसे प्रतीत होने लगे, सुगध दुर्गन्ध ज्ञात होने लगी और सुन्दर भवन जलती हुई भट्टी सा लगने लगा। 'केशवदास' कहते है बाग, महावन (घोर जङ्गल) सा प्रतीत हुआ और चाँदनी तो ऐसी ज्ञात हुई मानो ज्वर चढा है जिसने उसके सब अङ्ग झुलसा दिए हो। जिस नायक से उसका प्रेम था वह एक क्षण भर के लिए कहीं पर रुक गये तो उसे सगीत, गाली जैसा, पान का बीडा विष सा और सब शृङ्गार अगार से लगने लगे।

[इसमे फूल को शूल, सुवास को कुवास, भवन को भट्टी, बाग को घोर जगल, चाँदनी को ज्वर, गीत को गाली और पान के बीडे को विष तथा शृङ्गारो को अगार सदृश कह कर युक्त पदार्थो को अयुक्त कर दिया गया है। अत युक्तायुक्त अर्थान्तरन्यास अलकार है]

उदाहरण (२)

सवैया

पाप की सिद्धि, सदा ऋणवृद्धि सुकीरति आपनी आप कहीकी ।
दु ख को दान जू सूतकन्हान जु दासीकी सतति, संतत फीकी ।।
बेटीको भोजन, भूषण रॉड़को, केशव प्रीति सदा परतीकी ।
युद्धमे लाज, दया अरि कों, अरु ब्राह्मणजातिसों जी तननीकी।।७७।।

सिद्धि अच्छी होने पर भी पाप की सिद्धि अच्छी नहीं। इसी प्रकार वद्धि भी अच्छी है परन्तु ऋण की वृद्धि अच्छी नहीं। सुकीर्त्ति अच्छी है परन्तु अपने मुँह से कही हुई नहीं। दान अच्छा है। पर दुख का नहीं, स्नान अच्छा है, पर सूतक का नही, सन्तान अच्छी है पर दासी से उत्पन्न सतति कभी भी अच्छी नहीं। भोजन अच्छा है पर बेटी के यहाँ नहीं, भूषण अच्छे है पर विधवा के लिए नहीं। 'केशवदास' कहते है कि इसी तरह प्रीति अच्छी है, परन्तु पर स्त्री से नहीं। लज्जा अच्छी है, पर युद्ध मे नहीं, दया अच्छी है पर शत्रु पर नहीं। विजय अच्छी है पर ब्राह्मण जाति पर नहीं।

[इसमे 'सिद्धि', 'वृद्धि', 'कीर्त्ति', 'दान', 'स्नान', 'सन्तति', 'भोजन', भूषण', प्रीति', लज्जा', दया', और जीत शब्द युक्त होने पर भी अयुक्त करके वर्णन किए गये है, अत युक्तायुक्त अर्थान्तर न्यास अलकार है।]

१६ व्यतिरेक

दोहा

तामें आनै भेद कछु, होय जु वस्तु समान ।
सों व्यतिरेक सु भाँति द्वै, युक्त सहज परिमान ।।७८।।

जहाँ एक समान दो वस्तुओ मे कुछ भेद या अन्तर दिखलाया जाय, वहाँ व्यतिरेक अलकार होता है। वह दो प्रकार का होता है। (१) युक्त और (२) सह

१—युक्त व्यतिरेक

कवित्त

सुन्दर सुखद अति अमल सकल विधि,
सदल सफल बहु सरस सङ्गीत सों।
विविध सुवास युत 'केशौदास' आस पास,
राजै द्विजराज तनु परम पुनीत सों।
फूले ही रहत दोऊ दीबे होत प्रति पल,
देत कामनानि सब मीत हू अमीत सों।
लोचन वचन गति बिन, इतनोई भेद,
इन्द्र तरुवर अरु इन्द्र इन्द्रजीत सों।८६)

इन्द्र तरुवर (कल्प वृक्ष) और राजा इन्द्रजीत मे इतना ही भेद है कि कल्प वृक्ष बिना लोचन, वचन तथा गति के है और इन्द्रजीत मे ये सब बातें भी विद्यमान है। अन्यथा दोनो ही सुन्दर है, सब तरह से सुख देते है और सब प्रकार से निर्मल है। कल्पवृक्ष सदल (पत्तो सहित) है तो राजा इन्द्रजीत भी सदल (सेना सहित) है। वह सफल है तो यह भी सफल (फल देने वाले) है। केशवदास' कहते है वि वह आस-पास सुगन्ध फैलाता है। तो यह भी सुवास सुन्दर वस्त्रो के सहित) है। और इनके आस पास दास रहते है। उस पर द्विजराज (पक्षीगण) बैठे रहते है। इनके पास और (द्विजराज) ब्राह्मण रहते है। दोनो का शरीर परम पवित्र है दोनो ही फूले रहते है। दोनो ही मित्र तथा शत्रु की कामनाओ को पूरा करते है।

[राजा मे कल्पवृक्ष की अपेक्षा ऊपर लिखी हुई तीन बाते अधिक है अर्थात् वह देख भी सकते है, बोल भी सकते है और चल भी सकते और कल्पवृक्ष इन गुणो से हीन है। अत. व्यतिरेक अलकार हुआ।]

२—सहज व्यतिरेक

सवैया

गाय बराबरि धाम सबै, धन जाति बराबरिही चलि आई।
केशव कंस दिवान पितानि, बराबरिही पहिरावनि पाई॥
बैस बराबरि दीपति देह, बराबरि ही बिधि बुद्धि बड़ाई।
ये अलि अजुही होहुगो कैसे, बड़ी तुम आँखि नहीं की बड़ाई॥८०॥

दोनो के गायें बराबर है, घर, धन और जाति भी सदा से बराबर ही चले आते है। (केशवदास सखी की ओर से) कहते है कि तुम्हारे पिताओ ने कंस के दरबार से पहरावन (सिरोपाव) भी बराबर ही पाई है। तुम लोगो की वयस भी बराबर ही है। देह की सुन्दरता भी एक सी है तथा विधि (सस्कारादि, कुल परम्परा), बुद्धि और प्रतिष्ठा भी बराबर है। फिर हे सखी! केवल आँखो की बडाई के कारण तुम आज उनसे कैसे बडी हो जाओगी ?

[यहाँ सब बातें समान होने पर भी नायिका की आँखे बडी हैं अतः व्यतिरेक अलकार है]

२०—अपन्हुति अलङ्कार

दोहा

मनकी वस्तु दुराय मुख, औरै कहिये बात।
कहत अपन्हुति सकल कवि, यासों बुधि अवदात॥८१॥

जहाँ मन की वस्तु छिपाकर कोई दूसरी बात प्रकट की जाय, वहाँ श्रेष्ठ बुद्धि वाले सभी कवि 'अपन्हुति अलकार कहते है।

उदाहरण—१

कवित्त

सुन्दर ललित गति, बलित सुबास अति,
सरस सुवृत्त मति मेरे मन मानी है।
अमल अदूषित, सू भूषननि भूषित,
सुवरण, हरनमन, सुर सुखदानी है।
अग अग ही को भाव, गूढ भाव के प्रभाव,
जानै को सुभाव रूप रुचि पहिचानी है।
'केशोदास' देवी कोऊ देखी तुम ? नाही राज,
प्रगट प्रवीन राय जू की यह बानी है ।।८२।।

वह सुन्दर है, ललित गति वलित (सुन्दर चाल वाली या सुन्दर रागिनी बोलने वाली) है, सुबास (सुन्दर वस्त्र वाली अथवा सुगध युक्त मुखवाली) है, अति रसीली है, सुवृत्त मति (सुन्दर चरित्र तथा बुद्धि वाली अथवा सुन्दर छन्दो मे बुद्धि लगाने वाली) है, और मेरे मन को अच्छी लगती है। वह निर्मल है, अदूषित (दोष रहित) है, सुभूषन भूषित (अच्छे गहनो से सजी हुई अथवा अलङ्कार युक्त) है, सुवरण (अच्छे रङ्गवाली अथवा सुन्दर अक्षरो वाली) है, वह मन हरने वाली है, और सुर सुखदायिनी (देवताओ को सुख देने वाली अथवा स्वरो को सुख देने वाली है। उसके अङ्ग-अङ्ग से हृदय का (गूढ अथवा दिव्य) भाव प्रकट होता है। उसके गूढ भाव के प्रभाव को (दूसरो के मन की बात को जानने के गुण को अथवा व्यग्य भरे भेद को) कौन जान सकता है ? मै तो उसे रूप और रुचि से पहचानता हू। 'केशवदास' कहते है कि राजा इन्द्रजीत मुझसे पूछने लगे कि 'तुमने क्या कोई देवी देखी है, जिसका वर्णन कर रहे हो ? मैने कहा नहीं राजन् । मै तो प्रवीणराय की वाणी का प्रत्यक्ष वर्णन कर रहा हूँ ।

उदाहरण—२

कवित्त

कारे सटकारे केश, लोनी कछु होनी बैस,
सोने ते सलोनी दुति देखियत तन की।
आछे आछे लोचन, चितौनि औ चलनि आछी,
सुख मुख कविता बिमो है मति मन की।
'केशौदास' केहूँ भाग पाइये जो बाग गहि,
सांसनि उसासै साध पूजै रति रन की।
बटी काहू गोप की बिलोकी प्यारे नन्द लाल ?
नाही लोल लोचनी ! बड़वा बड़े पन की ॥८३॥

उसके काले सटकारे (लम्बे) केश (बाल अथवा गर्दन पर के बाल) हैं, वह लोनी (सुन्दर) है, और होनहार वयस की है अर्थात् युवती होने वाली है। उसके शरीर की चमक सोने जैसी दिखलाई पडती है। उसके अच्छी अच्छी आँखें है, चितवन और चाल भी अच्छी है। सुख मुख सुन्दर मुख वाली अथवा (मुख से सुख देने वाली) है। उसकी कविता (काव्य अथवा लगाम चबाने की ध्वनि) बुद्धि और मन को हर लेती है। (केशवदास श्रीकृष्ण की ओर से कहते हैं कि) यदि किसी तरह भाग्य वश उसे बाग मे पकड पाऊँ (अथवा किसी प्रकार भागकर लगाम पकड पाऊँ) तो एक सास मे मेरे रति-रण (रति रूपी रण अथवा रण के प्रति प्रेम) की साध (इच्छा) पूरी हो जाय। श्रीकृष्ण की इन बातो को सुनकर श्री राधिका जी ने पूछा कि 'हे प्यारे नन्द लाल ! क्या आपने किसी गोप की बेटी को देखा है, जिसका वर्णन कर रहे हो ? उन्होने उत्तर दिया—'नहीं ! चंचल नेत्र वाली ! मै तो किसी बहुमूल्य घोडी का वर्णन कर रहा हूँ।'

बारहवाँ प्रभाव

२१—उक्ति अलंकार

दोहा

बुद्धि विबेक अनेक विधि उपजत तर्क अपार।
तासो कविकुल युक्ति कहि, बरणत बिविध प्रकार ॥१॥

बुद्धि और विवेक आदि के बल पर जहाँ अनेक तर्क उपस्थित किए जा सके, वहाँ कविगण उसे 'युक्ति' अलकार कहकर अनेक प्रकार से वर्णन करते है।

'युक्त' अलङ्कार के भेद

दोहा

वक्र अन्य व्यधिकरण कहि, और विशेष समान।
सहित सहोकति मे कही, उक्ति सु पंच प्रमान ॥२॥

वक्रोक्ति अन्योक्ति, व्याधिकरणोक्ति, विशेषोक्ति और सहोक्ति ये पाँच भेद उक्ति अलकार के कहे गये है।

१—वक्रोक्ति

दोहा

केशव सूधी बात मे, बरणत टेढ़ो भाव।
वक्रोक्ति तासो कहत, सदा सबै कविराव ॥३॥

'केशवदास' कहते है कि जहा सीधी-सरल बात मे टेढे अथवा गूढ भाव प्रकट किए जाते है, वहाँ सभी कवि लोग 'वक्रोक्ति' कहा करते है।

उदाहरण (१)
सवैया

ज्यों-ज्यों हुलाससों केशवदास, विलास निवास हिये अवरेख्यो ।
त्यों-त्यों बढ्यो उर कंप कछू भ्रम, भीत भयो किधौं शीत विशेख्यो ।।
मुद्रित होत सखी वरही मन नैन, सरोजनि साच कै लेख्यो ।
तै जु कह्यो मुख मोहन को अरविंद सोहै, सोतो चन्द देख्यो ।।२।।

'केशवदास' (किसी खंडिता की ओर से उसी सखी से) कहते है कि मैंने जैसे जैसे विलास-निवास (श्री कृष्ण) को हृदय से देखा, वैसे-वैसे मेरे हृदय मे कंप बढ गया । मै नहीं जानती कि वह भ्रम वश ऐसा हुआ, या मुझे डर लग गया या विशेष शीत लग गया मेरी कमल जैसी आँखे बरबस मुँदी जा रही है । मैंने तो तेरा कहना सच मान लिया था कि मोहन (श्रीकृष्ण) का मुख कमल सा है परन्तु अब देखा तो उसे चन्द्र जैसा पाया (अन्यथा यह बात न होती तो मेरी आँखे उन्हें देखकर क्यो मुँद जाती, क्योकि चन्द्रमा को देखकर ही कमल मुँदता है) ।

गूढ भाव यह छिपा हुआ है कि उनके मुख पर अन्य स्त्री के काजल आदि के चिन्ह है इसी से मैंने उनकी ओर से मारे क्रोध के आँखें बन्द कर ली ।)

उदाहरण (२)
सवैया

अंग अली धरिये अंगियाऊ न आजु ते नीद न आवन दीजै ।
जानति हौ जिय नाते सखीन के, लाज हू को अब साथ न लीजै ।।
थोरेहि घौस ते खेलन तेऊ लगी, उनसो जिन्हे देखि कै जीजै ।
नाह के नेह के मामिले आपनी छांहहु को परतीति न कीजै ।।४।।

हे सखी ! मन होता है कि आज से अगिया न पहनूँ और नींद को भी पास मे न आने दूँ और सखी के नाते लज्जा को भी साथ मे न लूँ (क्योकि ये भी स्त्री वर्ग की है, कहीं पति से मेल न कर लें ।) (क्योकि मै देखती हूँ कि) थोडे दिनो से वे सखियाँ भी उनसे प्रेम करने लगीं है, जिन्हे देख देखकर मै जिया करती थी अर्थात् जिन्हे प्राणो के समान प्यारा समझती थी । इसीलिए अब यह सिद्धान्त स्थिर किया है कि) प्रेम के मामले मे (सखी तो सखी) अपनी छाँह तक का विश्वास नहीं करना चाहिए (क्योकि सम्भव है वह भी प्राणो से प्यारी सखियो की भाँति धोखा दे जाय) ।

(इसमे गूढ व्यग्य द्वारा अपनी सखी के प्रति क्रोध प्रकट करती हुई सकेत करती है कि तेरी अगिया फटी है तू रात भर सोई नहीं, तू निर्लज्ज है और तेरी छाया भी मलिन जान पडती है) ।

२—अन्योक्ति

दोहा

औरहि प्रति जु बखानिये, कछू और की बात ।
अन्य उक्ति यह कहत है, बरणत कवि न अघात ॥६॥

जहाँ किसी दूसरे की बात किसी दूसरे के प्रति कहकर प्रकट की जाती है, वहाँ 'अन्योक्ति' कहते है, जिसका वर्णन करते-करते कवि लोग कभी तृप्त नही होते ।

उदाहरण

सवैया

दल देखौ नहि जड़ जाड़ो बड़ो, अरु घाम घनो जल क्यों हरिहै ।
कहि केशव बावु बहै, दिन दाव, दहै धर धीरज क्यो धरिहै ॥
फलहै फुलि है नही तोलौ तुहीं, कहि सो पहि भूख सही परिहै ।
कछु छांह नही सुख शोभा नही रहि कीर करील कहा करिहै ॥७॥

इस करील के वृक्ष मे कभी पत्ते नही देखे। यह बडा जाडा, घाम और वर्षा से कैसे बचावेगा? केशवदास कहते है कि जब दिन प्रतिदिन प्रचड वायु चलेगी और दावाग्नि जलेगी, तब तू कैसे धैर्य धारण करेगा? जब तक यह फले फूलेगा नहीं तब तक तू ही बता, तुझसे भूख कैसे सही जायगी? इसमे न तो कुछ छाया है, न सुख है और न शोभा है, अत हे सुग्गे तू करील पर रहकर क्या करेगा?

(इसमे तोते को लक्ष्य करके, ऐसे व्यक्ति के प्रति सकेत किया गया है, जो किसी ऐसे व्यक्ति की सेवा करता है, जो साधन सम्पत्ति हीन है, अत उससे सुख पाना व्यर्थ है)

३—व्याधिकरणोक्ति

दोहा

औरहि में कीजै प्रकट, औरहि को गुण दोष।
उक्ति यहै व्यधिकरन की, सुनत होत सतोष ।।८।।

जहाँ किसी और का गुण-दोष किसी और मे प्रकट किया जाता है वहाँ व्याधिकरण उक्ति होती है, जिसे सुनकर सतोष होता है।

उदाहरण (१)

कवित्त

जानु, कटि, नाभि कूल, कठ पीठ भुजमूल,
उरज करज रेख रेखी बहु भाँति है।
दलित कपोल, रद ललित अधर रुचि,
रसना-रसित रस, रोस मे रिसाति है।

लेटि लेटि लौट पौटि लपटाति बीच बीच,
हां हा, हूँ हूँ, नेति, नेति वाणी होति जाति है।
आलिगन अग अंग पीड़ियत पद्मिनी के,
सौतिन के अग अ.ग पीडनि पिराति है ।।६।।

जघा, कमर, नाभि, कठ पीठ, भुजामूल तथा उरोजो मे नखो के चिन्ह अनेक भाँति किये गये है। कपोल दलित है, ओठो पर दाँतो को शोभा है। जीभ से तत्कालीन ध्वनियो का आनन्द लेती है और बनावटी रोष भी प्रकट करती है। बार-वार लेट-लेटकर और उलट-पलटकर हाँ, हाँ, हूँ, हूँ तथा नहीं, नहीं की ध्वनि भी करती जाती है। उधर तो पद्मिनी नायिका के अग अग आलिगन से पीडित किए जा रहे है और इधर सौतो के अग मर्दन से पीडित होते है।

(इनमे दोष तो नायिका का है पर अग सौतो के पीडित होते है अत और का दोष और मे प्रकट किया गया है)

उदाहरण (२)

कवित्त

राजभार, रजभार, लाजभार, भूमिभार,
भवभार, जयभार, नीके ही अटतु है।
प्रेमभार, पनभार, केशव सम्पत्ति भार,
पतिभार युत अति युद्धनि जुटतु है।
दानभार, मानभार, सकल सयान भार,
भोगभार, भागभार, घटना घटतु है।
ऐते भार फूल सम राजै राजा रामशिर,
तेहि दुःख शत्रुन के शीरष फटतु है ।।१०।।

राज्य का भार क्षत्रियपन का भार, भूमि का भार, ससार का भार विजय का भार अच्छी तरह उठाये रहते है। प्रेम का भार प्रतिज्ञा का भार, केशवदास कहते है कि सपत्ति का भार, मर्यादा का भार उठाते हुए युद्धो मे भी भिड जाते है। दान का भार, मान का भार, सभी गुणो का भार, भोग का भार और लोगो के भाग्यो का भार सहन करते हुए भी काम करते रहते है। राजाराम तो अपने सिर इतने भारो को फूल के समान सरलता पूर्वक वहन करते है और शत्रुओ के शिर फटते है।

उदाहरण—३
सवैया

पूत भयो दशरथको केशव, देवन के घर बाजी बधाई।
फूलिकै फूलनकों बरषै, तरु फूलि फलै सबही सुखदाई।
छीर बही सरिता सब भूतल, धीर समार सुगध सुहाई।
सर्वसु लोग लुटावत देखि कै, दारिद देह दरारसी खाई ॥११॥

'केशवदास' कहते है कि राजा दशरथ के पुत्र हुआ तो देवताओ के घर बधाई बजने लगी। पेड फूल, फूलकर फूल बरसाने लगे और सभी को आनन्द देने लगे सभी नदियाँ दूध की धारा बहाने लगी और मन्द वायु सुगन्धित हो गई इस तरह लोगो को सर्वस्व लुटाते देख, दरिद्रता के शरीर मे दरारें सी हो गई।

(इसमें दूसरे गुणो से दूसरे के दोषो का वर्णन है, अत. व्याधिकरणोक्ति है)।

उदाहरण—४
दोहा

होय हँसी औरनि सुनै, यह अचरज की बात।
कान्ह चढ़ावत चंदनहि, मेरो हियो सिरात ॥१२॥

यह आश्चर्य की बात सुनकर दूसरो को हँसी आवेगी कि श्रीकृष्ण तो चन्दन लगाते है और उससे मेरा हृदय शीतल होता है।

उदाहरण—५

सोरठा

दिये सोनारन दाम, रावर को सोंनों हरौ।
दुख पायो पतिराम, प्रोंहित केशव मिश्रसों ॥१३॥

रनिवास का सोना तो पतिराम सुनार ने चुराया और दाम दूसरे सुनारो को दण्ड स्वरूप देने पडे। राजा का अधिक प्रेम तो केशव मिश्र पर है, दुख पतिराम सुनार को होता है।

(उक्त दोनो दोहो तथा सोरठे मे और के गुणदोष से और के गुणदोष का वर्णन है अत व्याधिकरणोक्ति अलकार है)

४—विशेषोक्ति

दोहा

विद्यमान कारण सकल, कारज होइ न सिद्ध।
सोई उक्ति विशेषमय, केशव परम प्रसिद्ध ॥१४॥

'केशवदास' कहते है जहाँ सभी कारणो के रहते हुए भी कार्य की सिद्धि न हो, वही परम प्रसिद्ध विशेषोक्ति है।

उदाहरण (१)

सवैया

कर्ण से दुष्ट ते पुष्ट हुते भट, पाप और कष्ट न शासन टारे।
सोदरसैन कुयोंधन से सब, साथ समर्थ भुजा उसकारे ॥
हाथी हजारन के बल केशव, खैचि थके पट को डरडारे।
द्रौपदी कों दु शासन पै तिल, अंग तऊ उघरयों न उघारे ॥१३॥

कर्ण जैसे दुष्ट से अधिक दुष्ट बहुत से योद्धार्गं, पाप और कष्ट भी जिनके शासन को नहीं टालते थे अर्थात् उनकी अवज्ञा नहीं करते थे और आज्ञानुसार चलते थे दुर्योधन जैसे सब भाइयो का दल भी, बाहे उसकाये हुए साथ था केशवदास कहते है कि हजारो हाथियो के बल से, निडरता के साथ, वस्त्र को खीचते खींचते थक गया, परन्तु दु.शासन से, द्रौपदी का तिल भर अग भी उघारे नहीं उघरा।

उदाहरण—२

कवित्त

सिखै हारी सखी, डरपाय हारी कादबिनी
दामिनि दिखाय हारी, दिसि अधिरात की।
झुकि झुकिहारी रति, मारि मारि हार्यों मार,
हारी झकझोंरति विविध गति बात की।
दई निरदई दई वाहि ऐसी काहे मति,
आरति जु ऐन रैन दाह ऐसे गात की।
कैसेहू न मानै, हौ मनाइहारी 'केशौदास'
बोलिहारी कों किला, बोंलायहारी चातकी ॥१६॥

सखी सिखा सिखाकर हार गई, मेघमाला डरा-डराकर हार गई और बिजली आधी रात के समय दिशाओ को दिखला दिखलाकर हार गई। रति बेचारी झुक झुककर (निहोरे करते, करते) हार गई, कामदेव मार-मारकर (आक्रमण कर करके) हार गया और वायु की गति की अनेक विधियाँ (शीतल, मन्द, और सुगन्ध) झकझोर, झकझोर कर हार गई। हे निर्दयी दैव ! ऐन रात मे, अपने ऐसे शरीर को कष्ट देने की बुद्धि क्यो दे दी ? केशवदास (सखी की ओर से) कहते है कि वह किसी प्रकार भी मनाये नहीं मानती, मै मना, मनाकर हार

गई। कोयल बेचारी कूक-कूककर हार गई और चातकी बुलाने की चेष्टा कर-करके हार गई (पर उस पर असर नहीं हुआ)

[यहाँ सभी कारणो के रहते हुए भी कार्य सिद्ध नहीं होता अत विशेषोक्ति हुई]

उदाहरण—३
सवैया

कर्ण कृपा द्विज द्रोण तहाँ, तिनको पन काहू पै जाय न टार्‍यो।
भीम गदाहि धर धनु अर्जुन, युद्ध जुरे जिनसों यम हार्‍यो॥
केशवदास पितामह भीषम, माच करी बश लै दिशि चार्‍यो।
देखतही तिनके दुरयोधन द्रौपदी, सामुहे हाथ पसार्‍यो॥१७॥

कर्ण, कृपाचार्य और द्रोणाचार्य, जैसे वीर जिनका व्रत किसी के हटाये नहीं हटता था, विद्यमान थे। गदाधारी भीम तथा धनुर्धारी अर्जुन सरीखे भी थे जिनसे युद्ध करने पर यम भी हार जाते थे। 'केशवदास' कहते है कि भीष्म पितामह जैसे वीर, जिन्होने चारो ओर मृत्यु तक को वश मे कर लिया था विद्यमान थे परन्तु इन सबो के देखते-देखते दुर्योधन ने द्रोपदी के आगे हाथ फैला ही दिया।

[अनेक प्रबल कारण द्रौपदी के आगे हाथ फैलाने के कार्य को न रोक सके अत विशेषोक्ति हुई]

उदाहरण—४
सवैया

वेई है बान विधान निधान, अनेक चमू जिन जोर हईजू।
वेई है वाहु वहै धनु धीरज, दीह दिशा जिन युद्ध जई जू॥
वेई है अर्जुन आन नही जगमे, यशकी जिनि बेलि बई जू।
देखतही तिनके तब कोलनि, नीकहि नारि छिनाय लई जू॥१८॥

अर्जुन के पास वे ही अनेक विधानो से चलने वाले बाण थे, जिनसे उन्होने कई सेनाओ को बल पूर्वक मारा था। वे ही भुजाएँ थीं, वही धनुष था और वही धैर्य था जिससे युद्ध मे उन्होने चारो दिशाएँ जीत ली थी। यह वही अर्जुन थे कोई दूसरे नहीं, जिन्होने ससार मे यश की बेल बो दी थी। परन्तु उनके देखते-देखते श्री कृष्ण के परिवार को) स्त्रियो को (हस्तिनापुर जाते समय भीलो ने छीन ही लिया।

[यहाँ भी प्रबल कारणो के रहते हुए भी कार्य सिद्ध नही हुआ, अत विशेषोक्ति है]

उदाहरण—५

दोहा

तुला, तोल, कसवान बनि, कायथ लखत अपार।
राख भरत पतिराम पै, सोनी हरति सुनार ॥१९॥

कोई तराजू लेकर, कोई बाट लेकर, कोई कसौटी लेकर अनेक कायस्थ देख भाल करते रहते है परन्तु पतिराम सुनार की स्त्री राख भरते समय, सोना चुराही ले जाती है।

[यहाँ भी प्रबल कारणो के रहते हुए भी कार्य सिद्ध नहीं होता अत. विशेषोक्ति है]

५—सहोक्ति

दोहा

हानि वृद्धि शुभ अशुभ कछु, करिये गूढ़ प्रकास।
होय सहोक्तिसु साथही, वर्णत केशवदास ॥२०॥

केशवदास कहते है कि जहाँ हानि, वृद्धि, शुभ, अशुभ गूढ या प्रकट कुछ भी वर्णन करते समय साथ ही एक और घटना का वर्णन रहे, वहाँ 'सहोक्ति' होती।

उदाहरण

कवित्त

सिशुता समेत भई, मन्दगति चरननि,
गुणन सो बलित, ललित गति पाई है।
भौहन की होडा होड़ी ह्वै गई कुटिल अति,
तेरी बानी मेरी रानी सुनत सुहाई है।
'केशौदास' मुखहास हिसखै ही कटितर,
छिन छिन सूछम छबीली छबि छाई है।
बार बुद्धि बारन के साथ ही बढ़ी है बीर,
कुचनि के साथ ही सकुच डर आई है ॥२१॥

शिशुता के सान ही साथ तेरे चरणो की गवि भी मन्द पड गई है और गुणो के साथ ही तुझ मे सुन्दर चाल भी आ गई है हे मेरी रानी (सखी । भौंहो की स्पर्द्धा के साथ ही तेरो वाणी भी कुटिल हो गई है। केशवदास (उस सखी की ओर से ' कहते है कि हास्य की होड करते करते तेरी कमर भी क्षण क्षण पतली होती जा रही है और हे सखी ! बाल-बुद्धि (भोलापन) के साथ ही साथ तेरे बाल भी बढे है तथा कुचो के साथ ही साथ तेरे हृदय मे सकुच भी आ गई है।

२२—२३ व्याज स्तुति-निन्दा

दोहा

स्तुति निंदा मिस होय जहँ स्तुतिमिस निंदा जानि।
ब्याजस्तुति निन्दा यहै, केशवदास बखानि ॥

केशवदास कहते है कि जहाँ निन्दा के बहाने स्तुति और स्तुति के बहाने निन्दा की जाती है, वहाँ 'व्याज स्तुति' और 'व्याज निन्दा' अलङ्कार कहा जाता है।

उदाहरण

कवित्त

शीतलहू हीतल तुम्हारे न बसति वह,
तुम न तजत तिल ताको उर ताप गेहु ।
आपनो ज्यौं हीरा सो पराये हाथ ब्रजनाथ,
दैके तो अकाथ साथ मैन ऐसो मन लेहु ।
एते पर 'केशौदास' तुम्हे परवाह नाहि,
वाहै जक लागी भागी भूख सुख भूल्यो गेहु ।
माड़ो मुख छांड़ो छिन छल न छवीले लाल,
ऐसी तो गॅवारिन सों तुम्ही निबाहौ नेहु ।।२३।।

(कोई दूती श्रीकृष्ण से आकर कहती है कि) वह तो तुम्हारे शीतल हृदय मे भी नहीं रहती और तुम उसके तप्त हृदय-निवास को एक घडी भर को नहीं छोडते अर्थात् तुम्हारे हृदय मे उसके प्रति प्रेम की गर्मी नहीं है और तुम उसके विरह से जलते हुए हृदय मे सदा रहते हो। हे ब्रजनाथ। तुम अपना हीरा सा मन पराये हाथ मे देकर उसका मोम जैसा मन व्यर्थ ही लेते हो अर्थात् तुम हीरा के समान कठोर मन रखते हो और वह मोम जैसा कोमल मन रखती है। केशवदास (दूती की ओर से) कहते हैं कि इतने पर भी तुम्हे अपने हीरा जैसे मन की परवाह नहीं है और उसे अपने मोम जैसे मन की ऐसी धुन लग गई है कि तुम्हारे पास उसके मन के आ जाने से उसकी भूख भाग गई है, घर और सुख भी भूल गया है। वह मुख से तो प्रशसा करती है, पर क्षण भर के लिए भी छल नहीं छोडती। हे छवीले लाल। ऐसी गॅवारिन से तुम्हीं प्रेम निबाहते हो। दूसरा अर्थ यह भी निकल सकता है कि वह तो ऐसी गॅवारिन नहीं

है (ऐसी गँवारिन सो) तुम्ही प्रेम को नहीं निबाहते (तुम ही न बाहो नेहु) ।

[इसमे ऊपर से श्रीकृष्ण की प्रशसा जँचती है पर है वास्तव मे निन्दा । उधर नायिका की निन्दा प्रतीत होती है पर है वास्तव मे स्तुति]

उदाहरण

ब्याजस्तुति

कवित्त

केसर, कपूर, कुँद, केतकी, गुलाब लाल,
सूंघत न चपक चमेली चारु तोरी है ।
जिनकी तू पासवान बूझियत, आस पास,
ठाढ़ी 'केशौदास' किन्ही भय भ्रम भोरी है ।
तेरी कौनो कृति किधौ सहज सुबास ही ते,
बसि गई हरि चित कहूँ चोरा चोरी है ।
सुनहि ! अचेत चित, आई यह हेत, नाही,
तोसो ग्वारि गोकुल मे गोबरहारी थोरी है ॥ २४ ॥

जब से तेरी देह की सुगन्ध पाली है, तब से लाल (श्रीकृष्ण) केसर, कपूर, कुन्द, केतकी और गुलाब को सूँघते तक नहीं और सुन्दर चमेलियो को तो उन्होने तोडकर फेंक दिया है। केशवदास (सखी की ओर से) कहते है कि तू जिनकी दासी जैसी जान पडती है, ऐसी बहुत सी सुन्दरियाँ उनके आस-पास भय और भ्रम मे विमूढ होकर खडी है। यह तेरा ही कोई जादू है या स्वाभाविक सुवास ही के कारण तू ही श्री कृष्ण के चित्त मे चुपचाप बस गई है ? सुन ! वह

अचेत पडे है इसीलिये आई हूँ, नहीं तो क्या तेरी जैसी गोबर बीनने वाली ग्वालिने गोकुल गाँव मे कम है ?

उदाहरण

कवित्त

जानिये न जाकी माया मोहित गिलेहि माझ,
एक हाथ पुन्य, एक पाप को विचारिये।
परदार प्रिय मत्त मातग सुताभिगामी,
निशिचर को सो मुख देखो देह कारिये।
आज लौ अजादि राखे बरद विनोद भावै,
एते पै अनाथ अति केशव निहारिये।
राजन के राजा छांड़ि की जतु तिलक ताहि,
भीषम सों कहा कहौ पुरुष न नारिये ॥२५॥

(जब भीष्म के कहने से श्रीकृष्ण को तिलक करने का विचार पक्का कर लिया गया तब शिशुपाल कहता है कि) जिसकी माया कुछ समझ मे नहीं आती और जिनकी माया बीच ही मे लोगो को मोह लेती है तथा जिसके हाथ मे पुण्य और एक मे पाप रहता है। जो परदार प्रिय है। (पराई स्त्रियो) का प्रेमी है, मतवाले मातग नामक चांडाल के पुत्र के पास जाता आता रहता है। जिसका निश्चर जैसा काला मुख है और देखो, निश्चर ही जेसा काल शरीर है। जो आज तक बकरियो को रखाता रहा और जिसे बैलो के साथ खेलना ही अच्छा लगता रहा। केशवदास (शिशुपाल की ओर से) कहते हैं कि इतने पर भी अति अनाथ ही दिखलाई पडा, क्योकि यह तनिक भी भूमि का नाथ नही रहा। इतने पर राजाओ के राजा को छोड़कर इसका तिलक कराते हैं। मै उन भीष्म से भला क्या कहूँ जो पुरुष है न स्त्री है।

[यह श्रीकृष्ण की निन्दा है इसी मे उनकी स्तुति का भाव भी निकलता है, वह इस प्रकार है—]

जिनकी माया समझ मे नहीं आती और चक्कर मे डाल देती है जो एक हाथ से पुण्य और एक हाथ मे पाप कर्मो को विचारते हैं। जो लक्ष्मी के प्यारे है, गजेन्द्र को बचाने वाले है जिनका चन्द्रमा सा मुँह है और जो सब जीवो की देह का बनानेवाले है। आज तक जो ब्रह्मादि देवताओ की रक्षा करते आये और जो वर देने वाले है तथा जिन्हे विनोद ही अच्छा लगता है। इतने पर भी नाथ रहित है अर्थात् उनका कोई स्वामी नहीं है और क्षीर समुद्र मे सोने वाले है। अत राजाओ को छोडकर जो इन देव पुरुष को राज तिलक दिलवाने की बात भीष्म कहते है उनकी प्रशंसा मै क्या करूँ क्योकि ये कृष्ण न तो पुरुष हैं और न स्त्री (क्योकि ब्रह्म तो नपुसक माना गया है)

२४—अमित अलङ्कार

दोहा

जहां साधनै भोगई, साधक की शुभ सिद्धि।
अमित नाम तासों कहत, जाकी अमित प्रसिद्धि ॥२६॥

जहाँ पर साधक (कार्य को करने वाले) की सफलता का श्रेय साधन (जिसके द्वारा कार्य हो) भोगता है उसको अमित प्रसिद्धि वाले अर्थात् विख्यात पुरुष अमित अलंकार कहते है।

उदाहरण (१)

सवैया

आनन सीकर सोक हियेकत ? तोहित ते अतिआतुर आई।
फीकी भयो सुखही मुखराग क्यों ? तेरे पिया बहुबार बकाई ॥

प्रीतमको पट क्यो पलट्यो ? अलि, केवल तेरी प्रतीति को ल्याई।
केशव नीकेहि नायक सों रमि नायका बात नही बहराई ॥२७॥

मुँह पर हसीने की बूदे और हृदय मे सम्बी उसासें क्यो है ? इस लिए कि तेरे लिए दौडती हुई आई हूँ। तेरे मुख का राग सरलता से फीका कैसे पड गया ? क्योकि तेरे पति ने मुझे अनेक बार बकवाया है। मेरे प्रियतम का वस्त्र तुझसे कैसे बदल गया ? हे सखी इसे तो मै तेरे विश्वास के लिए लाई हूँ। 'केशवदास' कहते है इस तरह से उसके पति के साथ स्वय रमण करके, बेचारो नायिका को बातो ही बातो मे बहला दिया।

[इसमे जो सिद्धि नायिका को मिलनी चाहिए थी, वह उसकी सखी को मिल गई अतः अमित अलकार है]

उदाहरण (२)
सवैया

को कनै कर्ण जगन्मणिसे नृप, साथ सबै दल राजनही को।
जानै को खान किते सुलतानसो, आयो शहाबुदी शाह दिलीको।
ओड़छे आति जुर्‌यो कहि केशव, शाहि मधूकर सों शॅक जीको।
दौरिकै दूलह राम सुजीति, कर्‌यो अपने शिर कीरति टीको ॥२८॥

जगतमणि कर्ण से राजाओ को कौन गिने ? उसके साथ तो राजाओ का पूरा दल ही था। ज्ञात नहीं कितने खान और सुलतानो को साथ लेकर, दिल्ली का शहाबुद्दीन लडने आया था। 'केशवदास' कहते हैं कि जिससे राजा मधुकर शाह को अपने प्राणो की शका थी वहाँ शहाबुद्दीन ओछडे पर आकर डट गया। यह सुनते ही दूलहराम ने दौडकर उसे जीत कर अपने सिर कीर्ति का टीका ले लिया।

[यहाँ साधक मधुकरशाह को कीर्ति न मिलकर साधन दूलहराम को कीर्ति प्राप्त हुई अत अमित अलकार हुआ ।]

२५—पर्यायोक्ति

दोहा

कौनहुँ एक अदृष्टत, अनही किये जु होय ।
सिद्ध आपने इष्टकी, पर्यायोकति सोय ॥ २५॥

जहाँ अपने इष्ट की सिद्धि, किसी अदृष्ट कारण से, बिना प्रयत्न किए हो जाय, वहाँ पर्यायोक्ति होता है ।

उदाहरण

कवित्त

खेलत ही सतरज अलिन मे, आपहि ते,
तहाँ हरि आये किधौ काहू के बोलाये री ।
लागे मिलि खेलन मिलै कै मन हरे हरे,
देन लागे दाउं आपु आपु मन भाये री ।
उठि उठि गईं मिस मिसही जितही तित,
'केशौदास' कि सौ दोऊ रहे छवि छाये री ।
चौकि-चौकि-तेहि छन राधा जू के मेरी आली,
जलज से लोचन जलद से ह्वै आये री ।

राधा जी सखियो मे शतरज खेल रही थी । इतने मे श्रीकृष्ण या तो स्वय या किसी के बुलाये हुए वहाँ आ पहुचे । वहाँ फिर मिलकर खेलने लगे और धीरे-धीरे मन मिलाकर अपना दाँव भी देने लगे । इसी

बीच में किसी न किसी बहाने से सब सखियाँ उठ गईं और ईश्वर की सौगन्ध दोनो छबीले (श्री कृष्ण और श्री राधा) हो रह गये । हे मेरी सखी ! उस समय राधा जी की कमलवत् आँखें चौंक चौंककर बादल सी हो आईं । (भाव यह है कि उनके आनन्दाश्रु आने लगे ।)

[यहाँ बिना यत्न किये ही अचानक कार्य-सिद्धि हुई है, अत पर्यायोक्ति अलकार है]

२६—युक्ति अलङ्कार

दोहा

जैसो जाको बुद्धि बल, कहिये तैसो रूप ।
तासो कविकुल युक्ति यह, बरणत बहुत सुरूप ॥

जिसका जैसा बुद्धि बल हो, उसको वैसा ही वर्णन करने को कवि लोग 'युक्त' कहते है ।

उदाहरण—२

कवित्त

मदन बदन लेत लाज को सदन देखि,
यद्यपि जगत जीव मोहिबे को है छमी ।
कोटि कोटि चन्द्रमा निवारि ! बारि बारि डारौ,
जाके काज ब्रजराज आज लौ है संयमी ।
'केशौदास' सविलास तेरे मुख की सुवास,
सुनियत आरस ही सारसनि लैरमी ।
मित्रदेव, छिति, दुर्ग, दंड, दल, कोष, कुल,
बल जाके ताके कहौ कौन बात की कमी ॥३०॥

हे बारी ! यद्यपि कामदेव सारे ससार को जीतने मे समर्थ है, तथापि तेरे लज्जा से भरे मुख की वह प्रशसा करता है। मै तेरे मुख पर करोडो चन्द्रमा को निछावर कर डालू जिस मुख के लिए श्रीकृष्ण आजतक सयमी है अर्थात् नियम किए हुए हैं कि दूसरा मुख न देखूगा। केशवदास (सखी की ओर से कहते है कि ऐसा सुना जाता है कि तेरे आलस के कारण तेरे मुख की सुगन्ध को कमल ले भागे है। उन कमलो के पास मित्र (सूर्य जैसे हित्, पृथ्वी, दुर्ग, दड, दल कोष और कुल तथा बल सभी कुछ तो है, न जाने उन्हे किस बात की कमी थी (जो मुख बास चुराई)।
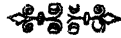
तेरहवां-प्रभाव

२७—समाहित अलंकार

दोहा

हेतु न क्यों हूँ होत जहँ, दैवयोग ते काज।
ताहि समाहित नाम कहि, बरणत कविशिरताज ॥१॥

जो कार्य्य किसी प्रकार भी न हो रहा हो, वह दैव योग से अचानक हो जाय, तब कवि शिरोमणि उसे समाहित' अलङ्कार कहकर वर्णन करते है।

उदाहरण (१)

कवित्त

छवि सों छबीली वृषभानु की कुवरि आजु,
रही हुती रूप मद मान मद छकि कै।
मारहू ते सुकुमार नन्द के कुमार ताहि,
आये री मनावन सयान सब तकि कै।
हँसि, हँसि, सौहै करि-करि पाँय परि-परि,
'केशौराय' की सौ जब रहे जिय जकि कै।
ताही समै उठे घनघोर घोरि, दामिनी सी,
लागी लौटि श्याम घन उर सौ लपकि कै ॥२॥

हे सखी! आज छवि (शोभा) से छबीली वृषभानु की बेटी राधा, अपने रूप के मद मे मान किये बैठी थी इतने मे कामदेव से भी सुकुमार नन्द के कुमार (श्रीकृष्ण), चतुराई से, अवसर

देखकर, उसे मनाने आये। हँस हँसकर, शपथ खा-खाकर और पैरो पड पडकर, ईश्वर की सौगन्ध, जब वह थक गये, तब उसी समय धनघोर बादल उठे और वह बिजली की भाँति लपक घनश्याम से लपट गई।

[इसमे दैव योग से अचानक कार्य हो गया, अत समाहित अलकार है]

उदाहरण (२)

सवैया

सातहु दीपनि के अवनीपति हारि रहे जियमें जब जाने।
बीस बिसे व्रत भग भयो, सु कह्यो अब केशव को धनु ताने।
शोक कि आगि लगी परिपूरण, आइगये घनश्याम बिहाने।
जानकी के जनकादिक केशव फूलि उठे तरु पुण्य पुराने ॥३॥

'केशवदास' कहते है कि जब सातो द्वीपो के राजा लोग हार गये, तब उन्होने (राजा जनक ने) अपने मनमे कहा कि 'अब मेरी प्रतिज्ञा पूरी तरह से भग होना चाहती है क्योकि अब धनुष को कोन खींचेगा।' उनके मनमे शोकाग्नि पूरी तरह से लगी हुई थी कि उसी समय घनश्याम (यहाँ श्रीराम) आ पहुँचे और उनके आते ही जानकी जी तथा जनकादि के पुराने पुण्य-तरु फूल उठे अर्थात् उनकी इच्छा पूरी हुई।

२६—सुसिद्धालङ्कार

दोहा

साधि-साधि औरै मरै, औरै भोगै सिद्धि।
तासों कहत सुसिद्धि सब, जे है बुद्धि समृद्धि ॥४॥

जहाँ कार्य कर करके तो कोई और मरे और उसकी सफलता कोई दूसरा भोगे उसे समृद्धि-बुद्धि (बुद्धिमान्) सुसिद्धालङ्कार कहते है।

उदाहरण (१)

सवैया

मूलनिसों फल फूल सवै, दल जैसी कछू रसरीति चलीजू।
भाजन, भोजन, भूषण भामिनि, भौन भरी भव भांति भलीजू ॥
डासन, आसन, वास निवास, सुवाहन यान विमान-थलीजू।
केशव कैकै महाजन लोग, मरै भुव, भोगवै न भोग बलीजू ॥५॥

मूल से लेकर फलफूल तक जैसी कुछ आनन्द के साधन प्रचलित है, वे सभी तथा पात्र, भोजन गहने, तथा भलीभाँति भावो से भरी हुई गृह-पत्नी शैय्या, आसन, सुगन्ध, घर, सुन्दर विमानादि सवारियाँ आदि को (केशवदास कहते हैं कि) एकत्र कर करके महाजन मरते है और उनका उपभोग कोई बलवान करता है।

उदाहरण (२)

छप्पय

सरघा सँचि सँचि मरै, शहर मधु पानकरत सुख।
खनि खनि मरत गँवार, कूप जल पथिक पियत सुख ॥
बागवान बहिमरत, फूज बाधत उदार नर।
पचि पचि मरहिं सुआर, भूप भोजननि करत वर ॥
भूषण सुनार गढ़ि गढि मरहि, भामिनी भूषित करन तन।
कहि केशव लेखक लिखिमरहिं पंडित पढ़हिं पुराणगन ॥६॥

मधु मक्खी तो शहद इकट्ठा कर करके मरती है और शहर के लोग सुख पूर्वक उसका मधु पीते हैं। गँवार तो कुआँ खोद खोदकर मरते हैं और पथिक आनन्दित होकर उसका पानी पीते है। बागवान फल फूल लगाकर मरता है और फूलो को उदार पुरुष बाँधते हैं। रसोईया पकवान बना बनाकर मरता है और राजा उन्हे खाते है।

सुनार तो गहने बना बनाकर मरता है और स्त्रियाँ उनसे अपना शरीर सजाती है। 'केशवदास' कहते है कि लेखक तो पुराणो को लिख लिखकर मरता है और पडित उसे पढते है।

२१—प्रसिद्धालङ्कार

दोहा

साधन साधै एक भुव, भुगवै सिद्धि अनेक।
तासों कहत प्रसिद्ध सब, केशव सहित विवेक ॥७॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ कार्य को साधने वाला तो एक हो और उसकी सिद्धि को भोगने वाले अनेक हो, वहाँ विवेकी लोग, उसे प्रसिद्ध अलकार कहते है।

उदाहरण

सवैया

माता के मोह पिता परितोपन, केवल राम भरे रिसभारे।
औगुण एकहि अर्जुन को, छिति मडल के सब छत्रिय मारे॥
देवपुरी कहँ औधपुरी जन, केशवदास बड़े अरु बारे।
शूकर श्वान समेत सबै हरिचन्द के सत्य सदेह सिधारे ॥८॥

(इसका अर्थ प्रभाव के स० मे लिखा जा चुका है)

३०—विपरीतालकार

दोहा

कारज साधक को जहाँ, साधन बाधक होय।
तासों सब विपरीत यों कहत सयाने लोय ॥६॥

जहाँ साधक का बाधक साधन हो जाता है, वहाँ सभी चतुर लाग उसे विपरीवालकार कहते है।

उदाहरण (१)

कवित्त

नाह ते नाहर, तिय जेबरी ते साँप करि,
घालै, घर, बीथिका बसावती बननि की।
शिवहि शिवाहू भेद पारति जिनकी माया,
माया हू न जानै छाया छलनि तिनति की।
राधा जू सौ कहा कहौ, ऐसिन की मानै सीख,
सांपिनि सहित विष रहित फननि की।
क्यों न परै बीच, बीच आंगियौ न सहि सके,
बीच परी अगना अनेक आंगननि की ॥१०॥

जो दूतियाँ पति का सिह जैसा भयानक और रस्सी का साँप बनाकर घरो को नष्ट करके, जंगलो मे घर बसाती है। जिनकी भाषा श्रीशकर तथा श्री पार्वती मे भी भेद करा दे सकती है और स्वय माया जिनके छल-कपटो की छाया तक नहीं समझ पाती। मै राधा जी से क्या कहूँ वह ऐसी स्त्रियो की शिक्षा को मानती है जो बिना फन की विषैली साँपिने है। फिर भला बीच क्यो न पडे जो कृष्ण अगिया तक का मध्यस्थ होना नहीं सह सकते थे, उनके बीच ये अनेक आँगनो अर्थात् घरो मे जाने वाली स्त्रियाँ पडी है।

(यहाँ दूती द्वारा मिलन होना चाहिये था, पर वही अनबन का कारण बन गई, अत. 'विपरीत' अलकार है)

उदाहरण (२)

कवित्त

साथ न सहाय कोऊ, दाथ न हथ्यार, रघु,
नाथ जू के यज्ञ को तुरग गहि राख्यो ई।

काञ्छन कछोटी सिर छोटे-छोटे काकपक्ष,
पांच ही बरस के सु युद्ध अभिलाख्यो ई।
नील नल, अंगद सहित जामवंत हनु—
मंत से अनन्त जिन नीरनिधि नाख्यो ई।
'केशौदास' दीप-दीप भूपनि स्यों रघुकुल,
कुश लव जीति कै विजय रस चाख्यो ई ॥११॥

जिनके साथ मे कोई सहायक न था और न जिनके हाथो मे कोई हथियार था उन्होने श्रीरामचन्द्र के यज्ञ के घोडे को पकड कर रख ही लिया । जो अभी लंगोटी ही पहने थे, जिनके घु घराले बाल (या जुलफी) अभी छोटे-छोटे थे, और जो अभी पाँच ही वर्ष के थे, उन्होने युद्ध करने की इच्छा कर ही ली । नील, नल, अगद, जामवत तथा हनुमान् जैसे वीर जिन्होने समुद्र को लाघ ही डाला था, उनके साथ ही (केशव दास कहते हैं) अन्य द्वीप द्वीपान्तरो के राजाओ के सहित श्रीरामचन्द्र जी को जीत कर, कुश और लव ने विजय रस चख ही लिया ।

[कुश लव श्रीरामचन्द्र जी के सहायक न होकर बाधक हुए, अत विपरीतालकार है]

अथ रूपक

दोहा

उपमाहीं के रूपसों, मिल्यो बरणिये रूप ।
ताही सों सब कहत है, केशव रूपक रूप ॥१२॥

केशवदास कहते है कि जहाँ पर उपमा से ही मिला हुआ उपमान का रूप वर्णित किया जाता है, वहाँ रूपक अलकार कहते हैं ।

उदाहरण

दोहा

बदन चन्द्र, लोचन कमल, बॉह् पाश, ज्यो जान ।
कर पल्लव, अरु भ्रूलता, बिबाधरणि बखान ।।१३।।

जैसे मुख, और चन्द्रमा को मिलाकर मुखचन्द्र, लोचन और कमल को मिलाकर लोचन-कमल, बॉह् और पाश को मिलाकर बाह-पाश, कर और पल्लव को मिलाकर कर—पल्लव भ्रू और लता को मिलाकर भ्रूलता और विबात था अधर को मिलाकर बिबाधर शब्द बनते है । इसी तरह औरो का भी वर्णन करना चाहिए ।

रूपक के भेद

दोहा

ताके भेद अनेक सब, तीनै कहो सुभाव ।
अद्भुत एक विरुद्ध अरु, रूपकरूपक नाव ।।१४।।

इस रूपक के कई भेद है पर मै तीन भेदो का ही वर्णन करता हूँ । उनमे से एक 'अद्भुत' दूसरा 'विरुद्ध' और तीसरा 'रूपक रूपक' नाम का है ।

१—अद्भुत रूपक

दोहा

सदा एकरस बरिणय, और न जाहि समान ।
अद्भुत रूपक कहते है, तासो बुद्धिनिधान ।।१५।।

जहाँ रूपक का वर्णन करते समय कोई ऐसी विचित्रता का उल्लेख भी कर दिया जाता है कि जिसके समान दूसरी न हो, उसे बुद्धि निधान (बुद्धिमान) अद्भुत रूपक कहते है ।

उदाहरण—३

कवित्त

शोभा सरवर मांहि फूल्यो ई रहत सखि,
राजै राजहसिनि समीप सुख दानिये।
"केशौदास" आस-पास सौरभ के लोभ घनी,
घ्रानिनि की देवि भौंरि भ्रमत बखानिये।
होति जोति दिन दूनी, निशि मे सहस गुनी,
सूरज सुहृद चारु चन्द्र मन मानिये।
रति को सदन छूई सकै न मदन ऐसौ,
कमल-वदन जग जानकी को जानिये ॥१६॥

श्री जानकी जी का मुख-कमल ससार मे ऐसा है कि वह शोभा के सरोवर मे सदा फूला ही रहता है। उसके पास सखियाँ रूपी राजहसिनी आनन्द प्रदान करती रहती है। 'केशवदास' कहते है कि उसके आस-पास सुगन्ध के लोभ से, भ्रमरी रूपी घ्राण देवियाँ मडराया करती है। उसकी दिन मे दूनी और रात मे सहस्त्र गुणी कांति बढ जाती है क्योकि (दिन मे सूर्य और रात मे श्री राम) चन्द्र उसके सुहृद होते है। इसको मन मे सच्चा समझिये। वह रति का सदन है, परन्तु मदन (कामदेव उसे छू भी नहीं सकता।

२—विरुद्ध रूपक

दोहा

जहँ कहिये अनमिल कछू, सुमिल सकल विधि अर्थ।
सो विरुद्ध रूपक कहत, केशव बुद्धि समर्थ ॥१७॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ पर अर्थ के सब प्रकार के सुमिल होने पर भी कुछ अनमिल (जो न मिलता हो) कहा जाय, वहाँ समर्थ बुद्धि वाले 'विरुद्ध' रूपक कहते है।

उदाहरण

कवित्त

सोने की एकलता तुलसीबन, क्यों बरणों सुनि सकै छ्वै ।
केशवदास मनोज मनोहर ताहि, फले फल श्रीफल से वै ॥
फूलि सरोज रह्यौ तिन ऊपर, रूप निरूपन चित चलै च्वै ।
तापर एक सुवा शुभ तापर, खेलत बालक खंजन के द्वै ॥१८॥

मैंने तुलसीवन अर्थात् वृन्दावन पे एक सोने की लता देखी है, उसका वर्णन कैसे करूँ क्योकि बुद्धि वहाँ तक पहुचती ही नहीं । 'केशवदास' कहते है कि उस लता म कामदेव का भी मन हरने वाले दो श्रीफल फले हुए है । उन श्रीफलो या वेलो पर एक कमल फूला हुआ है जिसको देखते ही चित्त द्रवीभूत हो जाता है । उस पर एक सुआ बैठा है और उस सुआ पर दो खजन के बच्चे खेल रहे है ।

इसमे सोने की लता, नायिका है, श्रीफल कुच है, कमल मुख है सुआ नाक है और आँखें खजन है)

३—रूपक रूपक

दोहा

रूपक भाव जहँ वरणिये, कौनहु बुद्धि विवेक ।
रूपक रूपक कहत कवि, केशवदास अनेक ॥१६॥

केशवदास कहते है कि किसी वस्तु या भाव का रूप अपने बुद्धि-विवेक के बल पर (परम्परा से हट कर भी) किया जाता है, उसे अनेक कवि 'रूपक रूपक' कहते है ।

उदाहरण

सवैया

काछे सितासित काछनी केशव, पातुर ज्यों पुतरीनि विचारो ।
कोटि कटाक्ष चलै गति भेद नचावत नायक नेह निनारो ॥

बाजत है मृदुहास मृदग, सुदिपति दीपन कौं उजियारो।
देखतहौ हरि देखि तुम्है यह, हौंत है आंखिनही मे अखारो ॥२०॥

हे हरि ? देखते हो, तुम्हे देखकर आँखों मे ही सगीत का अखाडा बन जाता है। 'केशवदास' कहते है इस अखाडे मे काली सफेद काछनी पहने हुए पुतलिया पातुरें (वेश्याएँ) है। जो करोडो कटाक्ष है, वे ही गति भेद है। स्नेह को, नचाने वाला निराला नायक मानो। उसमे मृदुहास का मृदग बजता है। और उसकी दीप्ति को दीपको का उजाला मानो।

(इसमे परम्परा छोड कर मनमाने ढग से वर्णन किया गया है।)

३२—दीपक अलङ्कार

दोहा

वाचि, क्रिया, गुण, द्रव्य को, बरणहु करि इक ठौर।
दीपक दीपति कहत है, केशव कवि शिरमौर ॥२१॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ पर वर्ण्यवस्तु के अनुरूप ही उसकी क्रिया और गुण को भी समुचित स्थान पर वर्णन किया जाता है, उसे कवि शिरमौर 'दीपक' अलकार कहते है।

दीपक के भेद

दोहा

दीपक रूप अनेक है, मै बरणे द्वै रूप।
मणिमाला तासों कहै, केशव सब कविभूप ॥२२॥

'केशवदास' कहते है कि 'दीपक' के, अनेक भेद है, परन्तु मैने उसके दो रूपो का ही वर्णन किया है। उन दोनो भेदो को सभी कविराज लोग (१) मणि और (२) कहते है।

१—मणि दीपक

दोहा

बरषा, शरद, बसंत, शशि, सुभता, शोभ सुगंध।
प्रेम, पवन, भूषण, भवन, दीपक दीपकबंधु ॥२३॥
इनमे एक जु वरणिये, कौनहु बुद्धि विलास।
तासों मणिदीपक सदा, कहिये केशवदास ॥२४॥

'केशवदास' कहते है कि वर्षा, शरद, वसन्त, चन्द्रमा, सौन्दर्य शोभा सुगन्ध, प्रेम, पवन, भूषण और भवन ये दीपक अलकार के बन्धु है अर्थात् इन्हीं के वर्णन से दीपक अलकार का वर्णन अच्छा लगता है। इनमे से यदि एक का भी वर्णन अपनी बुद्धि के चमत्कार से किया जाय तो उसे सदा 'मणिदीपक' कहना चाहिये।

उदाहरण

कवित्त

प्रथम हरिन नैनी! हेरि हरे हरि की सौं,
हरषि हरषि तम तेजहि हरतु है।
'केशौदास' आस-पास परम प्रकास सों,
बिलासिनी! बिलास कछु कहि न परतु है।
भांति भांति भामिनि! भवन यह भूषो नव
सुभग सुभाय शुभ शोभा को धरतु है।
मानिनि! समेत मान मानिनीनि वश कर,
मेरो दीप तेरो मन दीपत करतु है ॥२५॥

हे हरिण नैनी! पहले श्रीकृष्ण के सामने को देख, प्रसन्न हो होकर तेरे मानरूपी अन्धकार को अपने तेज से हरे लेते हैं। 'केशबदास' (सखी की ओर से) कहते है कि हे बिलासिनी! आस-पास उनके सौन्दर्य का परम प्रकाश फैला है। उसकी शोभा कुछ कही नहीं जा सकती। हे

भामिनी ! तेरा यह भाँति-भाँति से सुसज्जित और नया भवन उनकी सुन्दर स्वाभाविक शोभा धारण कर रहा है। हे मानिनी। मान समेत अनेक मानिनी नायिकाओ को वश मे करने वाला मेरा यह श्रीकृष्ण रूपी दीपक तेरे मन को प्रदीप्त कर रहा है।

उदाहरण (२)

(कवित्त)

दच्छिण पवन दच्छि यच्छनि रमण लगि,
लोलन करत लौंग लवली लता को फरु।
'केशौदास' केसर-कु सुम-कोश रसकण,
तनु तनु तिनहू को सहत सकल भरु।
क्यों हूँ कहूं होत हठि साहस विलाशवश,
चपक चमेली मिलि मालती सुबास हरु।
शीतल सुगन्ध मद गति नँद नँद की सौ,
पावत कहाँ ते तेज तोरिबे को मान तरु ॥२६॥

दक्षिणी पवन-रूपी यक्षिण नायक यक्षिणी स्त्रियो के रमने के स्थान-हिमालय-तक, लौंग और लवलो लताओ के फलो को हिला देता है। 'केशवदास' कहते है कि केसर के कुसुम कोषो के जो छोटे-छोटे रसकण है। उनका भी पूरा भार सहन करता है। कहीं कहीं, किसी प्रकार हठपूर्वक तथा साहस से, विलाश वश होकर, चम्पक चमेलो और मालती से मिलकर उनकी सुवास को हरता है। श्रीकृष्ण की शपथ, यह शीतल सुगन्ध और मद गति वाला दक्षिण पवन, न जाने कहा से मानरूपी वृक्ष को तोड़ने की सामर्थ्य पा जाता है।

२—मालादीपक

दोहा

सबै मिलै जहँ बरणिये, देशकाल बुधिवन्त।
मालादीपक कहत है, ताके भेद अनन्त ॥२७॥

जहाँ पर देश और काल के अनुसार बुद्धिमत्तापूर्वक अनेक बातो का वर्णन एक मे मिलाकर वर्णन किया जाय, उसे माला दीपक कहते है। उसके बहुत से भेद है।

उदाहरण

सवैया

दीपक देहदशा सों मिलै, सुदशा मिलि तेजहि ज्योति जगावै।
जागिकै ज्योति सबै समुझै, तमशोधि सु तौ शुभता दरशावै॥
सो शुभता रचै रूपको रूपक, रूप सु कामकला उपजावै।
काम सु केशव प्रेम बढ़ावन, प्रेमलै प्राणप्रियाहि मिलावै॥२८॥

देह एक दीपक है। वह दशा (युवावस्था और बत्ती) से मिलता है। दशा तेज और ज्योति (प्रकाश तथा ज्ञान , को जगाती है। ज्योति (प्रकाश और ज्ञान) जगने पर सब बाते समझ मे आती है और दिखलाई पडने लगती है और वह तम (अधकार तथा अज्ञान) को दूर करके शुभता (सोदर्य तथा प्रकाश) प्रदर्शित करती है वह शुभता (सौंदर्य और प्रकाश) रूप का रूपक रचती है अर्थात् सौंदर्य की ओर अधिक रुचि उत्पन्न करती है और वह रूप काम कला को उत्पन्न करता है (अथवा काम से प्रेम कराता है)। 'केशवदास' कहते है कि वह काम प्रेम को बढाता है और प्रेम प्राणप्रिया से मिला देता है।

उदाहरण (२)

(कवित्त)

घननि की घोर सुनि, मोरन के सोर सुनि,
सुनि सुनि केशव अलाप आली गन को।
दामिनि दमक देखि, दीप की दिपिति देखि,
देखि शुभ सेज, देखि सदन सुमन को।

कुङ्कुम की बास, घनसार की सुबास, भये,
फूलनि सी बास मन फूलिकै मिलन को।
हँसि हँसि मिले दोऊ, अन ही मिलाये, मान,
छूटि गयो एकै बार राधिका रवन को ॥२६॥

'केशवदास' कहते है कि बादलो की घोर ध्वनि, मोरो का शोर, और सखियो का गान सुनकर, बिजली की चमक, दीपक का प्रकाश तथा फूलो के भवन मे फूलो ही की सेज देखकर, कुकुम, कपूर तथा फूलो की सुगन्ध को सूघकर श्रीकृष्ण का मन उमग मे आकर मिलने की इच्छा करने लगा अत दोनो [राधा-कृष्ण] बिना मिलाये ही हँस हँस कर मिल गये और एक ही बार मे राधा और श्रीकृष्ण का मान छूट गया।

३३—प्रहेलिका अलंकार

दोहा

बरणत वस्तु दुराय जहँ, कौनहु एक प्रकार।
तासो कहत प्रहेलिका, कविकुल सुबुधि विचार ॥३०॥

जहाँ किसी वस्तु का, किसी ढग से, छिपाकर वर्णन किया जाता है, वहाँ बुद्धिमान कविगण उसे विचार पूर्वक 'प्रहेलिका' कहते है।

उदाहरण (१)

प्रभाकर मण्डल वर्णन

दोहा

शोभित सत्ताईस सिर, उनसठि लोचन लेखि।
छप्पन पद जानों तहां, बीस बाहु वर देखि ॥३१॥

जहाँ सत्ताइस सिर (श्री ब्रह्माजी के चार, श्रीविष्णुजी का एक श्री शङ्करजी के पाँच, सरस्वती जी लक्ष्मी जी, पार्वती जी हँस, गरुड़,

बैल, सूर्य और अरुण के एकएक कुल आठ, सूर्य के घोडो के सात, सूर्य के दो दो स्त्रियो के दो) उनसठ आखें, (क्योकि श्री शङ्करजी के तीन नेत्र प्रतिमुख के हिसाब से ५ अधिक) ५६ चरण (क्योकि सूर्य के घोडो के केवल मुख ही सात है, चरण केवल चार है) और बीस भुजाये (क्योकि हॅस, गरुड, बैल और घोडे भुजा रहित है और ब्रह्माजी आदि देवताओ की चार चार भुजाय है । निवास करती है, वह सूर्य मडल है ।

उदाहरण (२)
प्रभाकर मण्डल

दोहा

चरण अठारह, बाहुदस, लोचन सत्ताईस ।
मारत है प्रति पालि कै, शोभित ग्यारह शीश ।।३२।।

जहा अठारह चरण (श्रीविष्णु के दो, श्री लक्ष्मी जी के दो, गरुड के दो, श्री शङ्करजी के दो, उनके वृषभ के चार, श्री पार्वतीजी के दो उनके सिह के चार) दस भुजाएँ (चार श्रीविष्णु की दो श्रीलक्ष्मी जी की दो, श्री शङ्करजी की और दो श्री पार्वती जी की) सत्ताईस नेत्र (श्री शङ्करजी के पाँच मुखो को तीन-तीन नेत्रो के हिसाब से १५ और सब के दो, दो) और ग्यारह (श्रीशङ्करजी के पाच तथा और सब के एकएक) शिर है, वह प्रभाकर मण्डल सारे ससार को जिलाता और मारता है ।

उदाहरण (३)

दोहा

नौ पशु, नवही देवता, द्वै पच्छी, जिहि गेह ।
केशव सोई राखि है, इन्द्रजीत सै देह ।।३३।।

'केशवदास' कहते हैं कि जिसके घर में नौ सूर्य के सात घोडे, एक श्री शङ्करजी का बैल (१ श्री पार्वती जी का सिह) पशु, नौ देवता

(श्री ब्रह्माजो, श्री विष्णुजी, श्री शङ्करजी, श्री सावित्री, श्री लक्ष्मी, श्री पार्वती, सूर्य, चन्द्रमा और श्री शङ्करजी के मस्तक के अग्निदेव) तथा दो पक्षी (श्री विष्णु जी का गरुड और श्री ब्रह्माजी का हस) है, राजा इन्द्रजीत सिंह के शरीर की रक्षा करेगा।

उदाहरण (४)

दोहा

देखै सुनै न खाय कुछ, पांय न, युवती जाति।
केशव चलत न हारई, वासर गनै न राति ॥३४॥

'सेशबदास' कहते है कि एक वस्तु कौन सो है जो न देखती है, न कुछ खाती है, न उसके पैर है और वह स्त्री जाति की है। वह चलते-चलते नहीं थकती, न दिन गिनती है न रात। [उत्तर—राह (मार्ग)]

उदाहरण (५)

दोहा

केशव ताके नामके, आखर कहिये दोय।
सूधे भूषण मित्रके, उलटे दूषण होय ॥३५॥

'केशवदास' कहते है कि उस गब्द के दो अक्षर कहे जाते है, जिसके सीधे रहने से मित्र की शोभा होती है और उलट देने से दोष हो जाता है।

[उत्तर—राज जिसे उलटने से जरा (बुढापा) बनता है]

उदाहरण (६)

दोहा

जाति लता दुहुँ आखरहि, नाम कहै सब कोय।
सूधे सुख मुख भच्छिये, उलटे अम्बर होय ॥३६॥

एक वस्तु ऐसी है जो जाति को लता है और उसके अक्षरो का नाम सभी कहते है। जब वह सीधी रहती है तो आनन्द से मुख मे खाई जाती है और उसे उलट देने पर वस्त्र हो जाता है।

[उत्तर—दाख जिसे उलटने पर खदा (खद्दर वस्त्र) बनता है]

उदाहरण (७)

दोहा

सब सुख चाहे भोगिबो, जो पिय एकहिबार।
चन्द्र गहै जहँ राहु को, जैयो तिहि दरबार ॥३७॥

हे पति। जो आप सब सुखो को एक ही बार मे भोगना चाहते है, तो उस दरबार मे जाइएगा जहाँ चन्द्र राहु को पकडता है।

[उत्तर—राजा बीरबल का दरबार जहाँ 'चन्द्र' नामक द्वारपाल रहता था जो जाने वालो को, बिना आज्ञा के, नही जाने देता था।]

उदाहरण (८)

दोहा

ऐसी मूरि देखाव सखि, जिय जानत सब कोय।
पीठ लगावत जासु रस, छाती सीरी होय ॥३८॥

हे सखी ऐसी बूटी दिखलाओ, जिसे सब कोई जानता है और जिसके पीठ मे लगते ही मारे आनन्द के हृदय शीतल हो जाता है।

[उत्तर—पुत्र-जो पीठ से लगकर खेलते है तब बडा आनन्द होता है]

३४—परिवृत्तालकार

दोहा

जहां करत कछु औरई, उपजि परत कछु और।
तासों परिवृत जानियहु, केशव कविशिरमौर ॥३९॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ और कुछ करते हुए और कुछ स्थिति उत्पन्न हो जाय, श्रेष्ठ कविगण उसे परिवृत' अलकार कहते है ।

उदाहरण (१)

सवैया

हँसि बोलतही सु हँसै सब केशव, लाज भगावत लोक भगै ।
कछु बात चलावत घेरु चलै, मन आनतहीं मनमत्थ जगै ।।
सखि तूँ जू कहै सु हुती मन मेरेहू, जानि इहै न हियो उमगै ।
हरि त्यो निकुडीठि पसारतहीं, अगुरीनि पसारन लाग लगै ।।४०।।

'केशुवदास' (किसी नायिका की ओर सखी से) कहते हैं कि मै जब हँसती बोलती हू, तो सब लोग हँसत हैं और लज्जा को भगाती हूँ तो लोग मुझसे भागते है अर्थात् लज्जा छोड कर देखती हूँ तो मारे घृणा के मुझसे दूर-दूर रहते है । कुछ बातें करती हूँ तो निन्दा होने लगती है, जो मन चलाती हूँ तो कामोद्दीपन होता या काम जागृत होता है । इसीलिए हे सखी ! जो तू मुझसे कहती थी (कि प्रेम मतकर) वह मेरे मन मे भी थी और यही जानकर मेरा हृदय उत्साहित नहीं होता, क्योकि हरि (श्रीकृष्ण) की ओर तनिक भी दृष्टि करते ही लोग उँगली उठाने लगते है ।

उदाहरण—२

सवैया

हाथ गह्यो, ब्रजनाथ सुभावही, छूटिगई धुरि धीरजताई ।
पान भखै मुख नैन रचोरुचि, आरसी देखि कह्यो हम ठाई ।।
दै परिरंभन मोहन कोमन, मोहि लियो सजनी सुखदाई ।
लाल गुपाल कपोल नखच्छत, तेरे दिये ते महाछवि छाई ।।४१।।

जब ब्रजनाथ (श्रीकृष्ण) ने तेरा हाथ प्रेम से पकडा, तब तो मानो उनका धैर्य छूट गया। तूने पान तो मुख मे खाये है, परन्तु उनका रग नेत्रो पर चढा है। न हो, तो दर्पण देख ले कि मै ठीक ही कह रही हूँ हे सुखदायनी सजनी (सखी) तूने आलिङ्गन देकर मोहन (श्रीकृष्ण) का मन मोह लिया और गोपाल लाल ने तेरे गालो पर नख-क्षत दिया है, उससे तेरी बडी शोभा हो गई है।

उदाहरण (३)

सवैया

जीव दियो जिन जन्म दियो, जगी जाही की जोति बडी जग जानै।
ताही सो वैर मनो वच काय करै कृत केशव को उरआनै।
मूषक तौ ऋषि सिंह करयो फिरि ताही कों मूरुख रोष बितानै।
ऐसो कछू यह कालहै जाको भलो करिए सु बुरो करि मानै ।।४२।।

'केशवदास' कहते हैं कि जिस (भगवान्) ने यह जीव और जन्म दिया और जिसकी बडी भारी ज्योति को सारा ससार जानता है, उसी से तू मन, वचन और कर्म से वैर करता है तथा उसके किये हुए उपकारो को नहीं मानता। ऋषि ने तो चूहे को सिंह बनाया पर उस मूर्ख ने उन्हीं के सामने क्रोध प्रकट किया। यह समय ही कुछ ऐसा है कि जिसका भला करो वही बुरा करके मानता है।

चौदहवाँ प्रभाव

३५—उपमालंकार

दोहा

रूप, शील, गुण होय सम, ज्यों क्योंहू अनुसार।
तासों उपमा कहत कवि, केशव बहुत प्रकार ॥१॥

'केशवदास' कहते है कि जब किसी वस्तु या व्यक्ति का रूप, शील और किसी अन्य वस्तु या व्यक्ति के अनुरूप होता है, तब कविलोग उसे उपमा कहते है। इसके बहुत से प्रकार है।

उपमालंकार के भेद

दोहा

संशय हेतु, अभूत, अरु, अद्भुत, विक्रिय जान।
दूषण, भूषण, मोहमय, नियम गुणाधिक आन ॥२॥

अतिशय, उत्प्रेक्षित, कहौ, श्लेष, धर्म विपरीत।
निर्णय, लाछनिकोपमा, असभाविता, मीत ॥३॥

बुध विरोध, मालोपमा, और परस्पर रीस।
उपमा भेद अनेक है, मै बरणो इकबीश ॥४॥

सशय, हेतु, अभुत, अद्भूत, विक्रय, दूषण, भूषण, मोह, नियम, गुणाधिक, अतिशय, उत्प्रेक्षित, श्लेष, धर्म, विपरीत, निर्णय, लाक्षणिक, असंभावित, विरोध, माल और परस्पर ये इक्कीस भेद ही मैने वर्णन किये है, यद्यपि उपमा के बहुत से भेद है।

१—संशयोपमा

दोहा

जहाँ नहीं निरधार कछु, सब सन्देह सुरूप ।
सो सशय उपमा सदा, बरणत है कविभूप ॥५॥

जहाँ कुछ निश्चित न होकर, सभी सन्देह स्वरूप हो, उसे सशयोपमा कहते हैं ।

उदाहरण

सवैया

खंजन है मनरंजन केशव, रंजननैन किधौ, मतिजीकी ।
मीठी सुधाकि सुधाधर की द्युति, दंतनकी किधौ, दाड़िम हीकी ॥
चन्द भलो, मुखचन्दकिधौ, सखि सूरति कामकी कान्हकी नीकी ।
कोमलपंकज कै, पदपंकज, प्राणपियारे कि मूरति पीकी ॥६॥

'केशवदास' (सखी की ओर से) पूछते है कि खजन अच्छे हैं या श्रीकृष्ण के नेत्र ? तू ही अपनी बुद्धि से निश्चय कर के बता । अमृत मीठा है या उन के अमृत जैसे ओठ ? उनके दाँतो की चमक अच्छी है या अनार के दानो की ? हे सखी ! चन्द्रमा अच्छा है या उनका मुख चन्द्र ? कामदेव की सूरत अच्छी है या श्रीकृष्ण की मूर्त्ति ? कमल कोमल है या उनके चरण-कमल ? प्राण अधिक प्यारे है या श्रीकृष्ण की मूर्त्ति ?

२—हेतूपमा

दोहा

होत कौनहू हेतूते, अति उत्तम सों हीन ।
ताही सों हेतूपमा, केशव कहत प्रवीन ॥७॥

'केशव दास' कहते हैं कि जहाँ उपमान उपमेय से हीन होता है, उसी को प्रवीण लोग 'हेतूपमा' कहते है ।

उदाहरण

कवित्त

अमल, कमल कुल कलित, ललित गति,
बेल सों बलित, मधु माधवी को पानिये।
मृगमद मरदि, कपूर धूरि चूरि पग,
केसरि के 'केशव' विलास पहिचानिये।
झेलिकै चमेली, करि चंपक सों केलि, सेइ,
सेवती, समेत हेतु केतकी सों जानिये।
हिलि मिलि मालती सो आवत समीर जब,
तब तेरे सुख मुख बास सो बखानिये ॥८॥

स्वच्छ होकर, कमलो की सुगन्ध से सुवासित सुन्दर चाल वाला, बेले की सुगध से युक्त और माधवी के मकरद को पीकर, कस्तूरी का मर्दन करके, कपूर की धूल को पैरो से कुचल कर चूर करके और केशवदास कहते है कि केसर के साथ विलास करता हुआ, चमेली, को झेल कर, चंपक से केलिकर के, सेवती की सेवा करके और केतकी से प्रेम करता हुआ और मालती से हिलमिल कर जब वायु आवे तब कही तेरे मुख की स्वाभाविक सुगन्ध जैसा कहा जा सकता है।

३—अभूतोपमा

दोहा

उपमा जाय कही नहीं, जाको रूप निहारि।
सो अभूत उपमा कही, केशवदास विचारि ॥९॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ पर सौन्दर्य को देख कर उसकी उपमा न कही जा सके वहाँ अभूतोपमा कही जाती है।

उदाहरण

कवित्त

दुरि है क्यों भूषन बसन दुति यौवन की,
देह ही की जोति होति द्यौस ऐसी राति है।
नाह की सुबास लागै ह्वै है कैसी 'केशव',
सुभाव ही की बास भौरभीर फोरखाति है।
देखि तेरी मूरति की, सूरति बिसूरति हौ,
लालन को दृग देखिबे का ललचाति है।
चलिहै क्यों चन्द्रमुखी, कुचनि के भार भये,
कुचन के भार ते लचकि लङ्कजाति है ॥१०॥

तेरे यौवन की द्युति भूषण और वस्त्रो से कैसे छिपेगी, जब तेरी देह की ज्योति से ही रात दिन के समान हो जाती है। 'केशवदास' (सखी की ओर से) कहते है कि पति की सुगन्ध लगने से क्या दशा होगी, जब तेरी स्वाभाविक सुगन्ध को भौरो की भीड खाये डालती है (अर्थात् इतनी सुगन्ध है कि भौरो के झुण्ड के झुण्ड मडराया करते हैं) इसीलिए म तो तेरी सूरत को देख-देख कर ऐसे सोचा करती हूँ और तू श्री कृष्ण के मुख को देखने को ललचाती है। हे चन्द्रमुखी! कुचो का भार होने पर तू कैसे चलेगी, जब बालो के भार ही से तेरी कमर लचकी सी जाती है।

४—अद्भुतोपमा

दोहा

जैसी भई न होति अब, आगे कहै न कोय।
केशव ऐसी बरणिये, अद्भुत उपमा होय ॥११॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ ऐसा वर्णन किया जाय कि जो न तो कभी पहले हुआ हो, या वर्तमान हो रहा हो और न भविष्य मे होने ही वाला हो, उसे अद्भुतोपमा कहते है।

उदाहरण

सवैया

पीतमको अपमान न मानिन ज्ञान सयाननि रीझिरिझावै।
बंकबिलोकनि बोल अमोलनि तौ बोलि केशव मोद बढ़ावै ॥
हावहू भाव विभाव के भाव प्रभाव के भावनि चित्त चुरावे।
ऐसे विलास जो होयँ सरोज मे तौ उपमा मुख तेरे कि पावै ॥१२॥

'केशवदास' कहते है कि जो मान करके अपमान न करे और सयानता के साथ गान करके स्वय भी प्रसन्न हो और उसे भी प्रसन्न करे। तिरछी चितवन तथा मीठे वचनो से उसके मन के प्रसन्नता को बढावे। हाव, भाव, विभाव तथा प्रेम के प्रभाव से उसका मन चुरावे। जब इतने गुण कमल मे हो, तब कहीं वह तेरे मुख को समता पा सके।

५—विक्रियोपमा

दोहा

क्योंहू क्योंहू वर्णिये, कौनहु एक उपाइ।
विक्रय उपमा होत तहँ, बरणत केशवराइ ॥१३॥

'केशवराय' कहते है कि जहाँ उपमेय के एक होने पर उपमान को, कभी एक प्रकार और कभी दूसरी प्रकार वर्णन किया जाय, वहाँ विक्रियोपमा होती है।

उदाहरण

कवित्त

'केशवदास' कुन्दन के कोशते प्रकाश मान,
चिंतामणि ओपनि सों ओपिकै उतारी सी।

इन्दु के उद्योत ते उकीरी ही सी काढ़ी, सब,
सारस सरस, शोभासार ते निकारी सी।
सोंधे की सी सोधी, देह सुधासो सुधारी, पावँ,
धाकी देवलोक ते कि सिंधु ते उबारी सी।
अजु यासों हँसि खेलि बोलि चाल लेहुलाल,
काल्हि एक वाल ल्याऊँ काम की कुमारी सी ॥१४॥

'केशवदास' (किसी दूती की ओर से श्रीकृष्ण से) कहते है कि जो कुन्दन के ढेर से भी अधिक चमकीली है और जो चिन्तामणि की आभा से चमकाकर उतारी गई सी है। जो चन्द्रमा के प्रकाश अर्थात् चादनी से खोदकर निकाली गई सी है और जो सब कमलो से सुन्दर है तथा शोभा के सार से निकाली हुई सी है। सुगन्ध से शुद्ध की गई है। जिसकी देह है, जो देवलोक से आई है या समुद्र से निकाली गई है। हे लाल। (श्री कृष्ण) आज तो इस बाला के साथ हँस बोल कर मन बहला लो, कल मै एक कामदेव की कुमारी जैसी बाला लाऊँगी।

६—दूषणोपमा

दोहा

जहँ दूषणगण बर्णिये, भूषण भाव दुराय।
दूषण उपमा होति तहँ, बुधजन कहत बनाय ॥१५॥

जहाँ पर उपमानो के गुणो को छिपाकर केवल दोषो का वर्णन किया जाय, वहाँ बुद्धिमान लोग दूषणोपमा कहते है।

उदाहरण

सवैया

जौ कहूँ केशव सोम सरोज सुधा सुरभृङ्गनि देह दहे है।
दाड़िम के फल श्री फल विद्रुम, हाटक कोटिक कष्ट सहे है।

कोक कपोत करी अहि केसरि कोकिल कीर कुचील कहे है।
अंग अनूपम वा तिय के उनकी उपमा कहँ वेई रहे है ।।१६।।

'केशवदास' कहते है कि यदि मै कहूँ कि चन्द्रमा और कमल उसके मुख जैसे है तो ठीक नहीं है, क्योकि चन्द्रमा को राहु ने और कमलो का भौरो ने शरीर जला डाला है। यदि दाँतो को अनार के दानो जैसा, कुचो को श्रीफल (बेल) जैसा, ओठो को मू गे जैसा तथा रङ्ग को सोने जैसा कहूँ तो इन सबने भी करोडो कष्टो को सहन किया है। रहे कुचो की उपमा के लिए चक्रवाक, गर्दन के लिए कबूतर, चाल के लिए हाथी, भुजाओ के लिए साप, कमर के लिए सिंह, वाणी के लिए कोयल, और नाक के लिए तोते, सो ये सभी मैले और कुरूप होते हैं। इसलिए उस प्रिया के सभी अग अनुपम है। उसके अगो की उपमा उसी के अगो से दी जा सकती है।

७—भूषणोपमा

दोहा

दूषण दूरि दुराय जहँ, बरणत भूषण भाय।
भूषण उपमा होत तहँ बरणत सब कविराय ।।१७।।

जहाँ उपमानो के अवगुणो को छिपाकर केवल उनके गुणो का वर्णन किया जाता है, वहाँ सभी कविगण उसे भूषणोपमा कहते हैं।

कवित्त

सुबरण युत, सुरबरन कलित, पुनि,
भैरव सो मिलि, गति ललित, बितानी है।
पावन, प्रकट द्युति द्विजन की देखियत,
दीपति दिपति अति, श्रुतिसुखदानी है।

सोभा सुभसानी, परमारथ निधानी, दीह,
कलुष कृपानीमानी, सब जग जानी है।
पूरब के पूरे पुण्य, सुनिये प्रवीणराय,
तेरी वाणी मेरी रानी गंगा को सो पानी है ।।१८।।

हे मेरी रानी प्रवीण राय! तेरी वाणी गङ्गा की पानी जैसी है। क्योकि जैसे गङ्गा का पानी सुवरण युत अर्थात् सुन्दर रङ्ग का होता है, वैसे ही तेरो वाणी सुवरण युत अर्थात् अच्छे अक्षरो वाली है। जिस प्रकार गङ्गा जल सुरवरन कलित अर्थात् श्रेष्ठ देवताओ से युक्त होता है, उसी प्रकार तेरी वाणी भी सुरवरन युक्त अर्थात् श्रेष्ठ स्वरो से भरी है। जिस प्रकार गगा जल भैरव जी (श्री शंकर जी) से सम्बन्ध रखता है, उसी प्रकार तेरी वाणी मे भैरव राग है। जैसे गङ्गा जल ललित गति (मोक्ष) देने वाला है, वैसे ही तेरी वाणी मे ललित गति (सुन्दर प्रवाह) है जैसे गङ्गाजल वितानी (विस्तृत भूमि मे बहने वाला है) वैसे ही तेरी वाणी भी वितानी अर्थात् विशेष तीनो वाली है। जैसे गङ्गा जल पवित्र है, उसी तरह तेरी वाणी भी व्याकरण से शुद्ध है। गङ्गाजल मे जिस प्रकार द्विज (ब्राह्मण) स्नान करते दिखलायी पडते है, उसी प्रकार तेरी वाणी मे भी द्विजो (दाँतो) की चमक दिखलाई पडती है। जैसे गङ्गाजल श्रुति सुखदानी अर्थात् वेद सम्बन्धी कार्यो के लिए शुभ है, उसी प्रकार तेरी वाणी भी श्रुति सुखदानी (कानो के लिए सुख देने वाली) है। गङ्गाजल जैसे शोभा से सना हुआ है वैसे ही तेरी वाणी भी परम अर्थ मय है। जैसे गङ्गाजल कलुषदीह (पापो के समूह) को कृपानी (तलवार के समान काटने वाला) है, वैसे ही तेरी वाणी भी (भजनादि से पूर्ण होने के कारण) कलुषनाशिनी मानी गई है। जिस प्रकार गङ्गाजल को सारा ससार जानता है, उसी प्रकार तेरी वाणी भी जगत मे प्रसिद्ध है।

८—मोहोपमा

दोहा

रूपक के अनुरूप ज्यो, कौनहु विधि मन जाय।
ताहीसों मोहोपमा, सकल कहत कविराय ॥१६॥

जहाँ रूपक अर्थात् उपमेय को किसी प्रकार अनुरूप (उपमान) समझ लिया जाय उसे सभी महाकवि लोग मोहोपमा कहते है।

उदाहरण

कबित्त

खेल न खेल कछू, हांसी न हँसत हरि,
सुनत न गान कान तान बान सी बहै।
ओढ़त न अबरन, डोलत दिगंबर सो,
शबर ज्यों शबरारि दुख देह को दहै।
भूलिहू न सूंघै फूल, फूल तूल कुम्हिलात,
गात, खात बीरा हू न बात काहू सो कहै।
जानि जानि चदमुख केशव चकोर सम,
चंदमुखी चंद ही के बिंब त्यों चितै रहै ॥२०॥

(एक सखी नायिका से कहती है कि) हे चन्द्रमुखी ! श्रीकृष्ण न तो कोई खेल खेलते है, न हँसी ही करते हैं, न गान ही सुनते हैं क्योकि गाने की तान तो उनके कानो मे बाण सी लगती है। वह कपडे भी नहीं ओढते, दिगम्बर (नगे) से घूमा करते है और शबरारि (काम) पीडा तो उनको उसी प्रकार उनके शरीर को कष्ट देती है जैसे स्वय काम ने शङ्कर को कष्ट दिया था। वह भूलकर भी फूल नहीं सूँघते, क्योकि फूल के समान शरीर उसके सूँघने से मुर्झा जाता है। वह पान भी नहीं खाते और न किसी से बातें करते है। 'केशवदास' (सखी की ओर से) कहते हैं कि वह तेरे मुख

को चन्द्रमा जैसा समझ कर, चकोर की भाँति, उसी ओर देखते रहते है ।

६—नियमोपमा

दोहा

एकहि क्रम जहँ, बरणिये, मन क्रम वचन विशेष ।
केशवदास प्रकास बस, नियमोपमा सुलेष ॥२१॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ किसी उपमेय का एक वही उपमान बतलाया जाय जिस पर वर्णन करने वाले का मन, क्रम और वचन से विशेष प्रेम हो, वहाँ इस तरह के प्रकाशवश (वर्णन के कारण), उसे नियमोपमा समझना चाहिये ।

उदाहरण

कवित्त

कलित कलक केतु, केतु अरि, सेत गात,
भोग योग को अयाग, रोग ही को थल सो ।
पूनो ही को पूरन पै आन दिन ऊनो ऊनो,
छिन छिन छीन छवि, छीलर के जल सो ।
चन्द सो जु बरनत रामचन्द्र की दुहाई,
सोई मतिमन्द कवि केशव मुसल सो ।
सुन्दर सुबास अरु कोमल अमल अति,
सीता जू को मुख सखि ! केवल कमल सो ॥२२॥

वह कलङ्क का केतु है अर्थात् कलकी है । केतु (राहु से तात्पर्य है) उसका बैरी है, श्वेत शरीर वाला (कोढी जैसा) है, भोग-योग के अयोग्य है और रोग (क्षय) का तो घर ही है । केवल पूनो ही को पूरे आकार से निकलता है और अन्य दिनो मे कम होता जाता है । छिछले तालाब के जल के समान दिन-दिन उसकी छवि क्षीण

होती जाती है। इसलिए, 'केशवदास' सखी की ओर से कहते हैं कि) ईश्वर की शपथ, जो कवि सीता जी के मुख को कमल चन्द्रमा जैसा वर्णन करता है वह मूसलसा अर्थात् जड या मूर्ख है। वह तो केवल कमल सा है क्योकि वह सुन्दर सुगन्ध से युक्त है और कोमल तथा निर्मल या स्वच्छ है।

१०—गुणाधिकोपमा

दोहा

अधिकनहूँ ते अधिकगुण, जहाँ बरणियतु होय।
तासों गुण अधिकोपमा, कहत सयाने लोय ॥२३॥

जहाँ अधिक से अधिक गुण वाले उपमानो के साथ उपमेय का वर्णन करके उसे सबसे अधिक प्रमाणित किया जाता है वहाँ उसे चतुर लोग गुणाधिकोपमा कहते है।

उदाहरण

कवित्त

वे तुरंग सेत रंग सग एक, ये अनेक,
है सुरंग अग-अंग पै कुरंग मीत से।
ये निशङ्क यज्ञ अंक, वे सशंक 'केशौदास'
ये कलङ्क रङ्क वे कलङ्क ही कलीत से।
वे पिये सुधाहि, सुधानिधीश के रसै जु,
सांचहू पुनीत ये, सुनीत ये पुनीत से।
देहि ये दिना बिना, बिना दिये न देहि वे,
भये न, है न, हौंहिगे न इन्द्र, इन्द्रजीत से।

उसके पास सफेद रङ्ग का एक घोडा (उच्चैश्रवा) है, इनके पास अनेक रङ्गो के, कुरङ्ग (हिरनो) के मित्र अर्थात् चाल मे वैसे ही तेज अनेक घोडे है। 'केशवदास' कहते है कि ये यज्ञ चिन्हो से निडर रहते है

वे सब डरते है (कि कोई यज्ञ करके मेरा आसन न छीन ले)। ये कलङ्क रङ्क (कलङ्क से दरिद्र) अर्थात् निष्कलक है, वे कलक (अहल्या-गमन के कारण) से युक्त है। वे अमत पान किये हुए है और इन्होने श्री शकर जी महाराज की भक्ति का रस पान किया है। ये सचमुच पवित्र है और वे पवित्र जैसे सुने भर जाते है। ये बिना दिये दान देते है, वे बिना दिये कुछ देते नही अत इन्द्र महाराज इन्द्रजीत के समान न तो कभी थे, न है और न होगे ही।

११—अतिशयोपमा

दोहा

एक कछू एकै विषे, सदा होय रस एक।
अतिशय उपमाहोति तहँ कहत सुबुद्धि अनेक ॥२५॥

जहाँ किसी उपमेय का एक ही विषय मे (सभी उपमानो से बढकर कर वर्णन किया जाता है, वहाँ अतिशय उपमा होता है, इस बात को अनेक सुबुद्धि वाले कहते है।

उदाहरण

कवित्त

'केशौदास' प्रगट अकास मे प्रकास मान,
ईश हू के शीश, रजनीश अबरेखिये।
थल थल, जल जल, अमल अचल अति,
कोमल कमल बहु वरण विशेखिये।
मुकुर कठोर बहु नाहि नै अचल यश,
बसुधा सुधाहू तिय अधरन लेखिये।
एक रस एक रूप, जाकी गीता सुनियत,
तेरों सों बदन सीता तोंही विषे देखिये ॥२६॥

पृष्ठ २६६ सवैया १६

जौ कहूँ केशव सोम सरोज, सुधा सुरभृंगनि देह दहे है।
दाड़िम के फल श्रीफल विद्रुम, हाटक कोटिक कष्ट सहे हैं॥
कोक कपोंत करी अहि केसरि, कोकिल कीर कुचील कहे हैं।
अंग अनूपम वा तिय के उनकी उपमा कहँ वेई रहे है॥

पृष्ठ ७७ सवैया ४६

खारिक खात न, माखन, दाख न दाडिमहूँ सह मेटि इठाई,
केशव ऊख मयूखहु दूखत, आईहौ तोपहँ छाड़ि जिठाई।

तो रदनच्छदको रस रंचक चाखिगये करि केहूँ ढिठाई,
तादिनते उन राखी उठाइ समेत सुधा बसुधाकी मिठाई ॥४८॥

पृष्ठ १३८ कवित्त ४७

केशोदास प्रथमहि उपजत भय भीरु,
रोष, रुचि, स्वेद, देह कम्पनगहत है।
प्राण-प्रिय बाजीकृत बारन पदाति क्रम.
विविध शवद द्विज दानहि लहत है।
कलित कृपा न कर सकति सुमान त्रान,
सजि सजि करन प्रहारन सहत है।
भूषन सुदेश हार दूषत सकल होत,
सखि न सुरती, रीति समर कहत है ॥४७॥

ठपृ०१४ २ कवित्त १०

गोरे गात, पातरी, न लोचन समान मुख,
उर उरजातन की बात अब रोहिये।
हँसति कहत बात फूल से भरत जात,
ओठ अवदात राती देख मन मोहिये।
श्यामल कपूरधूर की ओढ़नी ओढ़े उड़ि,
धूरि ऐसी लागी "केशो" उपमा न टोहिये।
काम ही की दुलही सी काके कुलउलहीसु,
लहलही ललित लतासी लोल सोहिये।

पृष्ठ १७ सवैया ६

कोमलकंज से फूल रहे कुच, देखतही पति चन्द विमोहै।
बानर से चल चारु विलोचन, कोये रचे रुचि रोचन कोहै॥
माखन सो मधुरो अधरामृत, केशव को उपमाकहुँ टोहै।
ठाढ़ी है कामिनी दामिनसी, मृगभामिनि सी गजगामिनी सोहै ॥६॥

'केशवदास' कहते है कि यदि चन्द्रमा को आपके मुख के समान कहे तो वह आकाश मे प्रकट हो (कलकी रूप मे) प्रकाशित हो रहा है दूसरा रूप (जो निष्कलक है) वह श्री शङ्कर जी के शिर पर (क्षीण रूप मे) यदि कमल सा मुख बतलाऊँ तो वे स्थान-स्थान पर, जलाशय, जलाशय मे निर्मल, अचल और कोमल रूप के अनेक रगो के दिखलायी पडते हैं अर्थात् बहुत से है और मुख अपनी शोभा का एक ही है। यदि दर्पण जैसा बतलाऊँ तो वह बहुत कठोर है और उसका यश भी अचल नहीं है अर्थात् कुछ समय पश्चात् बिगड जाता है। यदि अमृत जैसा कहूँ, तो अमृत तो इस पृथ्वी पर की अनेक स्त्रियो के ओठो मे पाया जाता है। इसलिए हे सीता जी! जो सदा एक रस और एक रूप रहता है और जिसकी बडी प्रशंसा सुनी जाती है, ऐसा आपका मुख आपही जैसा है।

१२—उत्प्रेक्षितोपमा

दोहा

एकै दीपति एकको, होय अनेकनि माह।
उत्प्रेक्षित उपमा सुनो, कही कबिनके नाह ॥२७॥

जहाँ उपमेय का गुण अनेक उपमानो मे भी पाया जाय वहाँ उत्प्रेक्षितोपमा कही जाती है। इसको अनेक कवि सम्राटो ने बतलाया है।

उदाहरण

कवित्त

न्यारो ही गुमान मन मीननि के मानियत,
जानियत सबही सु कैसे न जनाइये।
पंचबान बाननि के आन आन भांतिगर्व,
बाढ्यौ परिमान बिनु कैसै सो बताइये।

'केशौदास' सबिलास गीत रग रंगनि,
कुरंग अगनानि हू के अंगनानि गाइये।
सीता जी की नयन-निकाई हम ही मे हैसु,
झूठी है नलिन, खजरीट हू मे पाइये ।।२८।।

श्री सीताजी के नेत्रो की शोभा हम ही मे है यह अभिमान मछ-लियो के मन मे रहता है, सो मै सब रहस्य जानती हूँ कैसे न बतलाऊँ। उधर कामदेव के बाणो को भी इस बात का बडा अभिमान हो गया है, सो कैसे बतलाया जाय। 'केशवदास' (सखी की ओर से) कहते है कि उधर हिरणियो के (नेत्रो की शोभा के) गीत भी अनेक प्रकार से आगन-आगन अर्थात् घर-घर मे गाये जाते है। सब लोग जो यह धारणा बनाये हुये हैं कि 'श्री सीताजी के नेत्रो की शोभा हमहीं मे है' सो झूठ है। वैसी शोभा तो कमलो और खजनो मे भी पाई जाती है।

१३—श्लेषोपमा

दोहा

जहॉ स्वरूप प्रयोगिये, शब्द एकही अर्थ।
केशव तासों कहत है, श्लेषोपमा समर्थ ।।२९।।

'केशवदास' कहते है कि जहाँ ऐसे शब्दो का प्रयोग किया जाय जो उपमेय और उपमान मे समान अर्थ मे लग सके, वहा उसे समर्थ लोग (विद्वान) श्लेषोपमा कहते है।

उदाहरण

कवित्त

सगुन, सरस, सब अंग राग रंजित है,
सुनहु सुभाग बड़े भाग बाग पाइये।

सुन्दर, सुबास मनु, कोमल अमल तन,
षोड़स बरस मय हरष बढ़ाइये।
बलित ललित बास, 'केशौदास' सबिलास,
सुन्दरि सॅवारि लाई गहरु न ल्याइये।
चातुरी की शाला मानि, आतुर ह्वै नन्दलाल,
चपे की सी माला, बाला उर उरझाइये ॥३०॥

जो सगुन (गुणवती और डोरायुक्त) है, सरस (सुन्दर) है। जिसके अग-अग रजित (शोभित या रगीन) है। हे भाग्यवान सुनो, ऐसी बडे भाग्य से मिलती है। जो सुन्दर है, निर्मल मन वाली है, सोलह वर्ष की है (चपा पुष्प भी सोलह वर्ष मे अति सुगधित होता है, और आनन्द को बढाने वाली है जो ललित (सुन्दर) बास (वस्त्र तथा गन्ध) से बलित (युक्त) है, और (केशवदास कहते है कि) सविलास (आनन्द और शोभा वाली) भी है जिसे कोई सुन्दरी स्त्री सवार कर (सज्जित करके और अच्छी तरह गूथकर) लाई है। अत देर न लगाइये और उस स्त्री को (जो उसे लाई है चतुराई की शाला (बुद्धिमती) मानकर, हे नन्दलाल (श्री कृष्ण) उसे चपे की माला के समान बाला को अपने गले मे पहना लीजिए।

१४—धर्मोपमा

दोहा

एक धर्मको एक ॲग, जहां जानियतु होय।
ताहीसों धर्मोपमा, कहत सयाने लोय ॥३१॥

जहाँ किसी धर्म अर्थात् वस्तु के एक ही अग (गुण) का वर्णन हुआ हो, वहाँ उसे चतुर लोग धर्मोपमा कहते है।

उदाहरण

सवैया

भूषितदेह विभूति, दिगम्बर, नाहिंन अम्बर अंग नवीनो।
दूरिकै सुन्दर सुन्दरी केशव, दौरी दरीन मे मन्दिर कीनो॥
देखि विमडित दडिनसों, भुजदंड दुवो असि दण्ड विहीनो।
राजनि श्रीरघुनाथ के राज, कुमण्डल छोड़ि कमण्डल लीनो॥३४॥

उनके शरीर विभूति (भस्म) से भूषित (सुशोभित) है। वह दिगम्बर है और उनके शरीर पर नये वस्त्र नहीं है। 'केशवदास' कहते है कि सुन्दरी स्त्रियो को छोडकर उन्होने दौड कर पहाडो की गुफाओ मे घर बनाया है। उनके भुजदण्ड दण्डियो (सन्यासियो) के दण्डो से सुशोभित है और दोनो दण्डो अर्थात् तलवार तथा राजदण्ड से विहीन है। श्री रघुनाथ जी के राज्य मे, राजाओ ने पृथ्वी मण्डल को छोडकर कमण्डल ले लिया है अर्थात् सन्यासी हो गय है।

१६—निर्णयोपमा

दोहा

उपमा अरु उपमेय को, जहँ गुण दोष विचार।
निर्णय उपमा होत तहँ, सब उपमनि को सार॥३५॥

जहाँ उपमान के दोषो पर तथा उपमेय के गुणो पर विचार करके, समता दी जाती है, वहाँ निर्णयोपमा होती है, जो सब उपमाओ का सार है।

उदाहरण

कवित्त

एकै कहै अमल कमल मुख सीता जू को,
एकै कहै चन्द्र सम आनँद को कंदरी।

होय जो कमल तो रमनि में सकुचै री,
चन्द जो तो बासर न होय दुति मंदरी।
बासर ही कमल, रजनि ही मे चन्द, मुख,
बासरहू रजनि बिराजै जग बन्दरी।
देखत मुख भावै, अनदेखेई कमल चन्द,
ताते मुख मुख, सखि कमल न चन्दरी ॥३६॥

हे सखी! कोई तो सीताजी के मुख को स्वच्छ चन्द्रमा (कमल) जैसा कहता है और कोई उसे आनन्द के कद चन्द्रमा जैसा कहता है। यदि वह कमल जैसा होता तो रात मे सकुचित क्यो न होता? और यदि चन्द्रमा सदृश होता तो दिन मे उसकी आभा मद न होती? कमल तो दिन ही मे खिलता है, चन्द्रमा रात मे ही सुशोभित होता है। और यह जगत वन्दनीय सीताजी का मुख रात-दिन सुशोभित रहता है। मुख देखने मे अच्छा लगता है और कमल तथा चन्द्रमा बिना देखे अर्थात् केवल सुनने मे अच्छे लगते हैं। इसलिए हे सखि! मुख मुख ही है। न तो वह कमल है और न चन्द्रमा।

१७—लाक्षणिकोपमा

दोहा

लक्षण लक्ष्य जु बरणिये, बुधि बल बचन बिलास।
है लक्षण उपमा सु यह, बरणत केशवदास ॥३७॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ लक्षण (उपमान) और लक्ष्य (उपमेय) का वर्णन अपने बुद्धि बल या वचन चातुर्य से किया जाता है, वहाँ 'लाक्षणिकोपमा' कही जाती है।

उदाहरण

कवित्त

वासो मृग अंक कहै, तो सो मृगनैनी सबै,
वह सुधाधर, तुहूँ सुधाधर मानिये।

वह है द्विजराज, तेरे द्विजराजी राजै वह,
कलानिधि, तुहूँ कलाकलित बखानिये।
रत्नाकर के है दोऊ केशव प्रकाश कर,
अबर बिलास, कुवलय हितु गानिये।
वाके अति सतिकर, तुहूँ सीता ! सीतकर,
चन्द्रमा सी चन्द्रमुखी सब जग जानिये ॥३८॥

(कोई ग्रामवासिनी स्त्री सीता जी से कहती है कि) चन्द्रमा को मृगाक कहते हैं तो आपको सब मृगनैनी कहते है। वह सुधाधर है तो आप भी सुधा जैसे अधर रखने वाली है। वह द्विजराज कहलाता है तो आपके द्विज (दाँत) की राजी (पक्ति) सुशोभित होती है। वह कलानिधि है तो आप भी चौंसठ कलाओ से युक्त मानी जाती है। 'केशवदास' (ग्रामीण स्त्री की ओर से) कहते है कि वह और आप दोनो ही रत्नाकर के प्रकाशक है। वह अम्बर (आकाश) मे विलास करता है तो आप मे अम्बर (वस्त्र) विलास करते है। चन्द्रमा कुवलय (कुमोदिनी) का हितू है तो आप कु-वलय (पृथ्वी मडल) कि हितू हैं। हे सीता जी ! उसके अति शीतल करने का गुण है तो आपके भी (दर्शको तथा भक्तो) को (सताप हटाकर) शीतल करने का गुण है। इसलिए हे चन्द्रमुखी आप चन्द्रमा के समान ही है। इसे सब जग जानता है।

१८—असभवितोपमा

दोहा

जैसे भाव न संभवै, तैसे करत प्रकास।
होत असभवित तहाँ उपमा केशवदास ॥३९॥

'केशवदास' कहते हैं कि जहाँ ऐसे भावो का वर्णन किया जाता है जो सम्भव न हो, वहाँ उसे असभावित उपमा कहते है।

उदाहरण

कवित्त

जैसे अति शीतल सुबास मलयज माहि,
अमल अनल बुद्धिबल पहिचानिये।
जैसे कौनो काल वश, कोमल कमल माहि,
कैशरैई 'केशौदास' कटक से जानिये।
जैसे विधु सधर मधुर मधुमय माहिं,
मोहै मोहरुख, विष विषम बखानिये।
सुन्दरि, सुलोचनि, सुवचनि, सुदति तैसे,
तेरे मुख आखर परुख रुख मानिये ॥४०॥

जिस प्रकार अत्यन्त शीतल और सुगन्धमय चन्दन मे बुद्धिबल से अग्नि पहचानी जाती। केशवदास कहते है जिस प्रकार किसी कालवश (विरह के समयाधीन) को कोमल कमल मे केसर भी काँटो जैसी जान पड़ती है, जैसे पूर्ण चन्द्रमा को मधुर तथा मधुमय होते हुए भी मोह से मोह रुख (मूर्छा से मूर्छित प्राय) विषय विषमय (कठोर विष से भरा) कहा करता है, उसी प्रकार हे सुन्दरी, सुलोचनी तथा सुन्दर दाँतो वाली, तेरे मुख मे कठोर वचनो को मानना चाहिये अर्थात् ऊपर लिखी बाते असम्भव है उसी प्रकार तेरे मुख मे कठोर बचनो का होना असम्भव है'

१६—विरोधोपमा

दोहा

जहँ उपमा उपमेयसों, आपस माहि विरोध।
सों विरोध उपमा सदा, बरणत जिनहि प्रबोध ॥४१॥

जहाँ उपमा और उपमेय मे आपस का विरोध प्रदर्शित किया जाय वहाँ उसे जानकार लोग सदा विरोधोपमा कहते है!

उदाहरण

कवित्त

कोमल कमल, कर कमला के भूषण को,
　　'केशौदास' दूषण शरद शशिठाई है।
शशि अति अमल अमृतमय मणिमय,
　　सीता को बदन देखि ताको मतिनाई है।
सीता को बदन सब सुख को सदन, जाहि,
　　मोहत मदन, दुख कदन निकाई है।
आधो पल माधो जू के देखे बिनु सोई शशि,
　　सीता के बदन कहँ होत दुखदाई है ॥४२॥

'केशवदास' कहते है कि कमला (श्री लक्ष्मी जी) के भूषण स्वरूप कोमलकरो के लिए शरद ऋतु का चन्द्रमा दूषण स्वरूप ही है। चन्द्रमा अत्यन्त निर्मल, अमृत पूर्ण, तथा काति वाला है, परन्तु फिर भी श्री सीता जी के मुख को देखकर उसमे मलिनता आ जाती है। श्री सीताजी का मुख सब सुखो का घर है, जिसे देखकर काम भी मोहित हो जाता है तथा दुखो को दूर करने वाली जिसकी शोभा है वही चन्द्रमा श्री रामचन्द्र को आधे पल के लिए भी बिना देखे, सीता जी के मुख को दुखदाई हो जाता है ।

२०—मालोपमा

दोहा

जो जो उपमा दीजिये, सो सो पुनि उपमेय।
सो कहिये मालोपमा केशव कविकुल गेय ॥४३॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ उपमान, उपमेय और उपमेय, उपमान बनते चले जाँय वहाँ उसे कवि लोगो के द्वारा 'मालोपमा' कहा जाता है ।

उदाहरण

कवित्त

मदन मोहन ! कहौ रूप को रूपक कैसो,
मदन बदन ऐसो जाहि जग मोहिये ।
मदन बदन कैसो शोभा को सदन श्याम,
जैसो है कमल ? रुचि लोचननि जोहिये ।
कैसो है कमल ? शुभ ! आनन्द को कन्द जैसो,
कैसो है सुकंद ? चन्द उपमान टोहिये ।
कैसो है जु चन्द वह ? कहिये कुँवर कान्ह,
सुनौ प्राण प्यारी जैसो तेरो मुख सोहिये ॥४४॥

श्री राधा जी ने पूछा कि —'हे मदनमोहन ! सुन्दरता का रूपक (उपमान) क्या है ? श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया - 'कामदेव का मुख, जिस पर संसार मोहित होता है ।' उन्होने फिर प्रश्न किया है 'हे श्याम ! मदन का मुख कैसा शोभावान् है ?' तो श्रीकृष्ण बोले कि 'जैसा कमल है, उसकी शोभा आँखो से देख लो ।' तब उन्होने पुन पूछा कि 'कमल कैसा सुन्दर है ? हे शुभ ! बतलाइए ।' तब वह बोले कि 'जैसा आनन्द पूर्ण बादल ।' उन्होने पुनः प्रश्न किया —'बादल कैसा सुन्दर है ?' तब उन्होने उत्तर दिया कि 'उसके समान तो खोजने पर चन्द्रमा ही मिलता है ।' राधा जी फिर बोलीं कि हे—'कुँवर कृष्ण वह चन्द्रमा कैसा सुन्दर है ?' तब उन्होने उत्तर दिया कि हे —'प्राणप्यारी ! सुनो, जैसा तुम्हारा मुख सुन्दर है ।'

२१—परस्परोपमा

दोहा

जहाँ अभेद बखानिये, उपमा अरु उपमान ।
तासों परस्परोपमा, केशवदास बखान ॥४५॥

'केशवदास' कहते है कि उपमान और उपमेय मे अभेद वर्णन किया जाय, वहाँ उसे 'परस्परोपमा' कहते है।

उदाहरण

कवित्त

बारे न बड़े न वृद्ध, नाहिनै गृहस्थ सिद्ध,
बावरे न बुद्धिवंत, नारी और नर से।
अंगी न अनगी तन, ऊजरे न मैले मन,
स्यार ऊ न शूरे रन, थावर न चर से।
दूबरे न मोटे, राजा रक ऊ न कहे जायँ,
मर न अमर अरु आपने न पर से।
वेद हू न कछु भेद पावत है 'केशवदास'
हरि जू से हेरे हर, हरि हरे हर से ॥४६॥

न तो वे बारे (छोटे) से है, न बडे से, न वृद्ध से, न गृहस्थ से, न सिद्ध से, न पागल से, न बुद्धिमान से, न नारी से और नर से है। न वे शरीरधारी से है, न अग रहित से है, न उजले से है, न मैले से है, न कायर मन जैसे है, न युद्ध वीर से है, न स्थावर से हैं और न जगम से है। न दुबले से है, न मोटे जैसे है, न राजा से और न रक से भी कहे जा सकते है, न मरणशील से है न अमर से हैं। न अपने से हैं और न पराये जैसे है। 'केशवदास' कहते है, कि जिनका भेद वेद तक नहीं पाते, वे हरि (श्री विष्णु जी श्री शङ्कर जी के समान देखे और श्री शङ्कर जी को विष्णु के समान पाया।

इक्कीस भेदो का वर्णन करने के बाद श्री केशवदास ने उपमा का एक भेद सकीर्णोपमा भी लिखा है।

२२—संकीर्णोपमा

दोहा

बन्धु, चोर, बादी, सुहृद, कल्पपृच्छ प्रभु जान।
अंगी, रिपु, सोदर आदिदै, इनके अर्थ बखान ॥४६॥

बन्धु, चोर, बादी, सुहृद मित्र), कल्प (शरीर), पृच्छ (विवादी), प्रभु, अंगी, रिपु (शत्रु) तथा सोदर (सगा भाई) आदि सकीर्णोसमा के वाचक समझने चाहिए ।

उदाहरण

कवित्त

विधु को सो बंधु किधौं चोर हास्य रस कोकि,
कुन्दन को वादी, किधौं मौतिन को मति है।
कल्प कल हँस को कि छीन निधि छवि प्रच्छ,
हिमगिरि-प्रभा प्रभु प्रगट पुनीत है।
अमल अमित अंगी गंगा के तरंगन को,
सोदर सुधा को, रिपु रूपे को अभीत है।
देस देस दिस दिस परम प्रकाशमान,
किधौं 'केशौदास' रामचन्द्र जू को गीत है।।४८॥

चन्द्रमा का भाई है कि हास्यरस का चोर है कि कुन्दन (सोने) का वादी है, कि अमृत का सगा भाई है अथवा मोतियो का मित्र है। सुन्दर हँस का शरीर है कि क्षीर निधि का प्रतिद्वन्द्वी है कि हिमालय की शोभा का स्वामी अथवा प्रत्यक्ष पवित्रता है। गङ्गा जी की निर्मल तरगो का साथी है कि अमृत का सगा भाई है कि चाँदी का निडर शत्रु है अथवा 'केशवदास' कहते है कि देश देशान्तरो मे प्रकाशमान यह श्री रामचन्द्र जी का गीत है।

—:०० :—

पन्द्रहवाँ प्रभाव

३६—यमक अलङ्कार

दोहा

पद एकै नाना अरथ, जिनमे जेतोवित्तु ।
तामे ताको काढ़िये, चमक मांहि दै चित्तु ॥१॥

जहाँ शब्द एक ही हो अर्थ अनेक हो, वहाँ यमक होता है । इस यमक मे चित्त लगाकर, जिसमे जितनी प्रतिभा शक्ति होती है, उतने ही अर्थ निकाल सकता है ।

आदि पदादिक यमक सब, लिखे ललित चितलाय ।
सुनहु सुबुद्धि उदाहरण, केशव कहत बनाय ॥२॥

केशवदास कहते है कि मैने यमक के आदि पदादिक अनेक सुन्दर भेद मन लगाकर लिखे है । हे सुबुद्धि ! अब उनके उदाहरणो को सुनो, जो मैने बनाये है ।

आदिपत यमक

दोहा

सजनी सज नीरद निरखि, हरषि नचत इत मोर ।
पीय पीय चातक रटत, चितवहु पिय की ओर ॥३॥

हे सजनी ! बादलो की सज (सजावट) को देख ! यहाँ मोर हर्षित होकर नाच रहे हैं, अब तू भी पति की ओर देख ।

[इसमे सजनी-सजनी मे यमक है जो आदि मे है, इसलिए आदि-पद यमक नाम रखा गया है ।

यमक के भेद

दोहा

अव्ययेत सव्ययेत पुनि, यमक बरन दुई देत ।
अव्ययेत बिनु अतरहि, अन्तर सो सव्ययेत ।।४।।

यमक के फिर दो भेद और होते है । जहाँ पदो मे अन्तर नहीं होता अर्थात् जो जुडे हुए रहते है, वह अव्ययेत कहलाता है और जहाँ अन्तर होता है अर्थात् जहाँ बीच मे दूसरा पद आ जाता है, वह सव्ययेत कहलाता है ।

द्वितीयपद यमक

दोहा

मान करत सखि कौनसों, हरि तू हरितू आहि ।
मान भेद को मूल है, ताहि देखि चित चाहि ।।५।।

हे सखी तू किससे मान करती है । तू तो हरि (श्रीकृष्ण) ही है अर्थात् वे और तू एक ही है, इसलिए आहि अर्थात् दु ख भरी श्वास को हरण कर ले या दूर कर दे । मान ही तो भेद की जड है अत उन्हे प्रेमपूर्वक देख ।

[इसमे द्वितीय पद मे हरितू हरितू पदो मे यमक है, अत द्वितीय पद यमक नाम पडा]

तृतीय पदयमक

दोहा

शोभा शोभित ऑगनरु, हय हींसत हयसार ।
बारन बारन गुंजरत, बिन दीने संसार ॥६।।

शोभा से सुशोभित आगन, हींसते हुए घोडो से भरी घुडसाल (स्तबल) और दरवाजे पर चिघाडते हुए हाथी ।

इस ससार मे बिना दिये अर्थात् पूर्वजन्म मे बिना दान किये न तो शोभा से युक्त आगन या घर मिलता है, न घुडसाल मे घोडे हींसते है और न दरवाजे पर हाथी चिंघाडते हैं।

[इसमे बारन, वार न पदो मे तीसरे पद का यमक है]

चतुर्थपद यमक

दोहा

राधा ! केशव कुँवर की, बाधा हरहु प्रवीन।
नेकु सुनावहु करि कृपा, शोभन बीन नवीन ॥७॥

हे प्रवीण राधा। श्री कृष्ण की बाधा दूर करो और उन्हे तनिक कृपा करके, नई सुन्दर वीणा सुना दो।

(इसमे नवीन-नवीन मे यमक है जो चतुर्थ पद मे हैं)

अत चतुर्थपाद यमक है।

यमक आद्यंत

दोहा

हरिके हरि केवल मनहि, सुनि वृषभानुकुमारि।
गावहु कोमलगीत द्वै, सुख करता करतारि ॥६॥

हे वृषभान कुमारी (राधा) सुनो। हरि (श्रीकृष्ण) के बल और मन को हरि के (हरण करके) तुम यहाँ (करतारि दै) ताली बजाकर (सुख करता) आनन्ददायक कोमल गीत गा रही हो। (वहाँ वह तुम्हारे वियोग मे तडप रहे है)।

(इसमे आदि मे हरि के - हरिके शब्दो मे, तथा अन्त मे 'करता, करता' शब्दो मे यमक है अतः आद्यन्त यमक हुआ।)

द्विपादयमक (प्रथम और तीसरे मे)

दोहा

अलिनी अलि नीरज बसे, प्रति तरुवरनि विहङ्ग ।
है मनमथ मनमथन हरि, बसै राधिका संग ॥९॥

जिस प्रकार भ्रमरी और भ्रमर कमल मे बसते है और जिस प्रकार प्रति वृक्ष पर पक्षियो के जोडे रहते है, उसी प्रकार मनमथ (कामदेव) के मन को मथने वाले श्री कृष्ण श्री राधाजी के साथ रहते है ।

(इसमे पहले चरण मे 'अलिनी अलिनी' मे यमक है और तीसरे चरण मे 'मनमथ-मनमथ' में यमक है)

त्रिपद यमक

दोहा

सारस सारसनैन सुनि, चन्द्र चन्द्रमुखि देखि ।
तू रमणी रमणीयतर, तिनते हरिमुख लेखि ॥१०॥

हे सारस नैन (कमलवत नेत्र वाली) सुन ! हे चन्द्रमुखी ! सारस (कमल) और चन्द्रमा को देख ! हे रमणी ! तू इनसे भी रमणीयतर (बढकर) है। उनसे भी बढकर हरिमुख (श्री कृष्ण के मुख) को समझ ।

(इसमे पहले चरण मे 'सारस-सारस मे, दूसरे में 'चन्द्र, चन्द्र' मे और तीसरे मे 'रमणी, रमणी' मे यमक है अत. त्रिपाद यमक हुआ)

पादान्तपादादियमक

दोहा

आप मनावत प्राणप्रिय, मानिनि मान निहार ।
परम सुजान सुजान हरि, अपने चित्त विचारि ॥११॥

हे मानिनी ! तुझे तेरा प्राण प्यारा स्वय मना रहा है, देख और मान जा । हरि (श्रीकृष्ण) को सुजान जानकर अपने चित्त मे इसका विचार कर ।

[इसमे 'मानति-मानति', तथा 'सुजान' मे यमक है । एकपादान्त है, दूसरा पादादि]

द्विपादांत यमक

दोहा

जिन हरि जगको मन हर्‌यो, बाम बामदृग चाहि ।
मनसा वाचा कर्मणा, हरि बनिता बनि ताहि ।।१२।।

हे बाम ! जिन हरि (श्रीकृष्ण) ने वाम दृग (तिरछी दृष्टि) से देखकर सारे ससार का मन हर लिया है, उन हरि की तू मन, वचन और कर्म से बनिता (स्त्री) बन जा ।

[इसमे 'बाम-बाम' तथा 'बनिता-बनिता' मे यमक है]

उत्तरार्द्ध यमक

दोहा

आजु छबीली छबि बनी, छांड़ि छलिन के सग ।
तरुनि, तरुनि के तर मिलौ, केशव के सब अंग ।।१३।।

आज (श्रीकृष्ण) की शोभा अच्छी बनी है । अतः छलियों का सग छोडकर, हे तरुणि ! वृक्षो के नीचे, श्रीकृष्ण के सब अगो से लिपट कर मिल ।

[इसमे उत्तराई के दोनो चरणो मे 'तरुनि तरुनि' तथा 'केशव' केशव' मे यमक है]

त्रिपाद यमक

दोहा

देखि प्रबाल प्रबाल हरि, मन मनमथरस भीन।
खेलन वह सुन्दरि गई, गिरि सुन्दरी दरीन ॥१४॥

वृक्षो के नये पत्ते तथा युवक हरि (श्रीकृष्ण) को देखकर वृथा काम मे लीन होकर, वह सुन्दरी पहाडो की सुन्दर गुफाओ मे खेलने को गई।

[इसमे तीसरे पद को छोडकर शेष तीनो मे यमक है। पहले में 'प्रबाल-प्रबाल' मे दूसरे मे 'मन-मन' मे और चौथे मे 'दरी-दरी' मे।]

दोहा

परमानद पर मानदहि, हेखति बन उतकण्ठ।
यह अबला अब लागिहै, मन हरि हरि के कण्ठ ॥१५॥

अत्यन्त आनन्द स्वरूप तथा दूसरो को मान देने वाले (श्रीकृष्ण) को देख कर, बन मे यह अबला, हरि (श्रीकृष्ण) का मन हर कर, उनके कण्ठ से अब लगेगी।

[इसमे 'परमानद-परमानद', 'अबला-अबला', तथा 'हरि-हरि' पदो मे यमक है।]

जूझि गयो संग्राम मे, सूर जु सुरजु लेखि।
दिविरमणी रमणीय करि, मूरति ररि सम देखि ॥१६॥

हे सूर ! सूर्य सग्राम मे जूझ चुके हैं अर्थात् अस्त हो चुके है अत. स्वर्ग की रमणी अर्थात् अप्सरा जैसी रमणीय तथा रति के समान मूर्ति वाली को चलकर देखो।

[इसमे 'सूरजु-सूरजु', 'रमणी-रमणी' तथा 'रति-रति' मे यमक है]

चतुष्पाद यमक

दोहा

नही उरबसी उरबसी, मदत मदन वश भक्त।
सुर तरुवर तरुवर तजै, नद-नंद आसक्त ॥१७॥

जो भक्त होते हैं, उनके मन मे उरवसी वास नहीं करती और न वे काम के नशे के वश मे होते है। जो नन्द-नन्द (नन्द के पुत्र श्रीकृष्ण) पर आसक्त रहते है वे कल्पवृक्ष को भी साधारण वृक्ष की भाँति छोड़ देते हैं।

[इसके चारों पदो में यमक है]

दोहा

अव्ययेत जमकनि सदा, वरणहू इहिविधिजान।
करो व्ययेत विकल्पना, जमकनिकी सुखदान ॥१८॥

अव्ययेत यमको सदा इसी तरह से वर्णन करना चाहिए। अब मै व्ययेत यमको का आनन्ददायी वर्णन करता हूँ।

सव्ययेत यमक

दोहा

माधव सो धव राधिका, पावहु कान्हकुमार।
पूजौ माधव नियम सों, गिरिजा को भरतार ॥१९॥

हे राधिका। यदि तुम इस बात की अभिलाषा करती हो कि तुम्हे माधव (विष्णु) के समान श्रीकृष्ण पति रूप मे मिलें तो नियम से वैशाख मास मे श्री शङ्कर जी को पूजो।

[इसमे 'धव, धव' तथा 'माधव, माधव' मे जो यमक है, उसके आ गया है। ये पद सटे हुए नहीं है, अव' सव्ययेव बीच में दूसरा पद कहलाते हैं।]

आदिअन्त यमक

दोहा

सीयस्वयम्बर माझ जिन, बनितन देखे राम।
ता दिनते उन सबन सखि, तजे स्वयम्बर धाम ॥२०॥

श्री सीता जी के स्वयम्बर नें जिन स्त्रियो ने श्री राम को देखा, उसी दिन से उन सब ने, हे सखि! अपने पतियो के घर छोड़ दिये (कि वन मे जाकर तपस्या करें और श्रीराम सा वर पावे)

अथ पादांत निरन्तर यमक

दोहा

पाप भजत यों कहत ही, रामचन्द्र अवनीप।
नीप प्रफुल्लित देखि त्यों, विरहा प्रिया समीप ॥२१॥

राजा रामचन्द्र कहते ही जिस प्रकार पाप भाग जाते हैं, उसी प्रकार कदम्ब को फूला हुआ देखकर विरही प्रिया के पास भागता है।

[इसमे 'नीप, नीप' में यमक है, जो एक पद के अन्त मे है और दूसरा चरण के आरम्भ मे]

दोहा

जैसे छुवे न चन्द्रमा, कमलाकर सविलास।
तैसेही सब साधुवर, कमला करन उदास ॥२२॥

जैसे चन्द्रमा फूले हुए कमलो को नहीं छूवा, वैसे ही सब साधुजन लक्ष्मी को हाथ से नहीं छूते।

[इसमे दूसरे तथा चौथे चरण के 'कमलाकर कमलाकर' पदो को मिलाकर यमक बनाता है ।]

पूर्वोत्तर यमक

दोहा

परम तरुणि यों सोभियत, परम ईश अरधङ्ग ।
कल्पलता जैसी लसै, कल्पवृक्ष के सङ्ग ।।२३।।

परम तरुणी (श्री पार्वती जी) परमईश (श्री शङ्कर जी) के अर्द्धाङ्ग मे इस प्रकार शोभित हो रही हैं, जिस प्रकार कोई श्वेत लता कल्पवृक्ष में लिपटी हो ।

[इसमे पूर्व पदो मे 'परम-परम' और उत्तर पदो मे 'कल्प-कल्प' का यमक है]

त्रिपादादि यमक

दोहा

दान देत यों शोभियत, दान रतन के हाथ ।
दान सहित यो राजही, मत्तगजनि के माथ ।।२४।।

दान देते समय दान रत्नो अर्थात् श्रेष्ठ दानियो के हाथ इस प्रकार सुशोभित होते हैं जिस प्रकार मतवाले हाथियो के मस्तक दान (मद) सहित सुशोभित होते हैं ।

[इसमे 'दान' शब्द यमक है]

चतुष्पदादि यमक

दोहा

नरलोकहि राखत सदा, नरपति श्री रघुनाथ ।
नरक निवारण नाम जग, नर बानर को नाथ ।।२५।।

यमक के भेद

दोहा

सुखकर दुखकर भेद द्वै, सुखकर बरणे जान।
यमक सुनो कविराय अब, दुखकर करौं बखान ॥२६॥

यमक के सुखकर और दुखकर दो भेद फिर हैं। अब तक सुखकर अर्थात् सरल यमको का वर्णन किया गया है। हे कविराय। सुनो, अब मैं दुखकर (कठिन) यमको का वर्णन करता हूँ।

दुखकर यमक

कवित्त

मानसरोवर आपने, मानस मानस चाहि।
मानस हरिके मीन को, मानस बरणेताहि ॥२७॥

हे मान-सरोवर (अभिमान के सरोवर) मनुष्य। अपने मानस (मन) मे माँ (लक्ष्मी) को नस अर्थात् नश्य समझ। हरिरूपी मान-सरोवर की मछली अर्थात् हरिभक्ति मे डूबने वालो को तू मानस (साधारण) मनुष्य कहता है।

दुखकर यमक—२

दोहा

बरणी बरणी जात क्यो, सुनि धरणी के ईश।
रामदेव नरदेव मणि, देव देव जगदीश ॥२८॥

हे धरणी के ईश अर्थात् हे राजन्। मुझसे बरणी (यज्ञ मे बरण किए हुए ब्राह्मणो को दिया हुआ दान) कैसे वर्णन किया जा सकता है। क्योकि श्रीरामचन्द्रजी नरदेव अर्थात् राजाओ मे श्रेष्ठ, देव-देव अर्थात् देवताओ में श्रेष्ठ और जगत के स्वामी है।

दुखकर यमक—३

दोहा

राजराज सङ्ग ईशद्विज, राजराज मनमान ।
विष विषधर अरु सुरसरी, विष विषमन उर आन ॥२९॥

ईश अर्थात् श्री शङ्कर जी के साथ राज राज (कुबेर) हैं, द्विज (चन्द्रमा) है और बडे-बडे राजा उनका सम्मान करते है । उनके साथ विष, विषधर (सांप) और सुरसरी (श्री गङ्गा जी) भी हैं । इन्हे विषम (बेजोड) न समझो ।

दुखकर यमक—४

प्रमानिका छन्द

प्रमान मान नाचेही, अमान मान राचही ।
समान मान पावही, विमान मान धावही ॥३०॥

तू अपने प्रमान (ताल) पर नाचता है । उसको अमान (असीम) मान (ज्ञान) समझता है । अत उसी के समान तू मान (आदर) पाता है । फिर भी मान (अभिमान) के विमान पर दौडता है ।

दुखकर यमक—५

दोहा

कुमनिहारि म्हारि हठ, हितहारिनी प्रहारि ।
कहा रिसात बिहारि वन, हरि मन, हारि निहारि ॥३१॥

कुमति को हरादे, हठ को मार दे, हितहारिणी । (हानि पहुँचानेवाली सखियो को प्रहारि अर्थात् भली-भाँति दण्ड दे । तू रिसाती क्यो है अर्थात् मान क्यो करती है । हरि की मनुहारि (विनती) को देख और उन्हीं के साथ वन में बिहार कर ।

दुखकर यमक—६

दोहा

सुरतरवर मे रम्भा बनी, सुरतवर मे रम्भा बनी ।
सुरतरङ्गिनी करि किन्नरी, सुरतरङ्गिनी करि किन्नरी ।।३२।।

मैने सुरतरुवर (पारिजात) युक्त रम्भावनी (कदली की वनी या बगीचो) मे, सुरतरव अर्थात् अपने सगीत मे लीन घूमती हुई और रम्भा जैसी बनी-ठनी, सुरतरङ्गिनी स्वरो की नदी स्वरूपिणी किन्नरी (सारङ्गी) लिए, सुरत (सुन्दरता) मे रगिनी अनुरक्त करने वाली किन्नरी देखी ।

दुखकर यमक—७

दोहा

श्रीकंठ उर वासुकि लसत, सर्वमङ्गलामार ।
श्रीकठ उर वासुकि लसत, सर्वमङ्गलामार ।।३३।।

श्रीकठ अर्थात् श्रीशङ्कर जी महाराज के हृदय पर वासुकि नाग सुशोभित होता है और वह सर्व मगलामार (सर्व मगल+अमार) अर्थात् मगलमूर्ति और काम रहित है । सर्व मगला (श्री पार्वती जी) श्रीकठ (सुशोभित कठ वाली) है तथा मा (लक्ष्मी) और (अग्नि) स्वरूपिणी है ।

दुखकर यमक—८

सवैया

दूषण दूषण के यश भूषण, भूषणअगनि केशव सोहै ।
ज्ञान संपूरण पूरणकै, अरिपूरण भावनि पूरण जोहै ।।
श्री परमानन्द की परमा, परमानन्द की परमा कहि कोहै ।
पातुरसी तुरसी मतिको अवदात रसी तुलसीपति मोहै ।।३४।।

'केशवदास' कहते है कि जो 'दूषण-दूषण' अर्थात् दूषण राक्षस के वैरी श्रीरामचन्द्र जी के यशरूपी भूषणो (शख, चक्रादिको को) अपने अगो पर धारण करके सुशोभित होता है, जो ज्ञान से भरी हुई भावनाओ के द्वारा ईश्वर को ससार व्यापी देखती है। जो परमानद (श्री भगवान्) की परमा (शोभा) पर मुग्ध है अर्थात् उनमे लीन है, उसके लिए आनन्द की परमा (अधिकता) क्या है। अर्थात् वह आनन्द को कुछ नहीं समझता। उसकी मति मे (उसके विचार मे) वेश्याए तुरसी (खट्टी या बुरी) है, उसकी बुद्धि अवदातरसी (शात रस मे सनी हुई) रहती है तथा वह तुरसी पति (तुलसीपति) श्री विष्णु पर मोहित होती है।

दोहा

इहिविधि औरहु जानिये, दुखकर यमक अनेक।
बरणत चित्रकवित्त अब, सुनियो सहित विवेक ॥३५॥

इसी तरह और बहुत से दुखकर यमक हो सकते हैं। अब मैं चित्र अलकार के कवित्तो (छन्दो, रचनाओ) मे वर्णन करता हू। जो विवेक वान हैं, वे सुनैं।

ये नीचे लिखे छन्द प्रक्षिप्त से ज्ञात होते है, क्योकि यमकालकार से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

१—अनुप्रास

छन्द

जो तू सखि न कहै कछु चालहि, तौहौ कहूँ इकबात रसालहि।
तो कहुँ देहुँ बनी बनमालहि, मोकहँ तू मिलवै नँदलालहि ॥३६॥

पुनः—२

जैसे रचै जय श्री करवालहि। ज्यों अलिनी जलजात रसालहि।
त्यों बरषा हरषै बिन कालहि। त्यों दृग देखन चहत गुपालहि ॥३७॥

सवैया

स्यदन हांकत होत दुखी दिन दूरि करै सबके दुखदंदन।
छंदनि जानी नहीं जिनकी गति नाम कहावत है नँदनंदन ॥
फंदनपंडुके पूतनिकी मति काटि करै मनमोह निकंदन।
चंदनचेरीके अंग चढ़ावत देव अदेव कहैं जगबंदन ॥३८॥

सोलहवां प्रभाव

३७—चित्रालंकार

दोहा

केशव चित्र समुद्र में, बूडत परम विचित्र।
ताके बूंदक के कणौ, बरनत हौं सुनि मित्र ॥१॥

'केशव दास' कहते हैं कि चित्रालकार के समुद्र में बड़ी अद्भुत प्रतिमा वाले भी गोवा खाने लगते हैं। हे मित्र ! सुनो, मै उसी समुद्र की एक बूद के एक कण का वर्णन करता हूँ।

दोहा

अधऊरध बिन बिदुयुत, जति, रसहीन, अपार।
बधिर, अंध, गन अगन को, गनिय न नगन विचार ॥२॥

इन चित्रालकारो में, विसर्ग अनुस्वार, यति भग, रसहीनता, बधिर, अंध तथा गण अगण का विचार नहीं किया जाता।

दोहा

केशव चित्रकवित्त मे, इनके दोप देख।
अच्छर मोटो पातरो, बव जय एको लेख ॥३॥

'केशवदास' कहते हैं कि चित्रालकार युक्त रचनाओ मे इन दोषो का विचार न कीजिए। (इतना ही नहीं, यदि आवश्यकता पडे तो) दीर्घ अक्षर को लघु, मान लीजिए तथा 'ब' और 'व' एव 'ज' और 'य' को एक ही समझिए।

दोहा

अतिरति मतिगति एककर, बहु विवेक युतचित्त ।
त्यो न होय क्रमभग त्यों, बरनो चित्रकवित्त ॥४॥

बडे प्रेम के साथ, मति (बुद्धि) की गति को एकत्र करते हुए, अर्थात् जहाँ तक बुद्धि जा सके वहाँ तक, अपने चित्त को विवेक युत करके चित्रालकार युक्त रचना करो, जिससे पहले लिखे हुए नियमो का (जहाँ तक हो सके) क्रम भग न हो । [भाव यह है कि यद्यपि चित्रालकार मे, दोषो पर ध्यान नहीं देने का अधिकार प्राप्त है, परन्तु फिर भी जहाँ तक हो सके दोषो से बचना ही चाहिए]

६—निरोष्ठ

दोहा

पढ़त न लगै अधर सों, अधर वरण त्यो मडि ।
और वर्ण बरणौ सबै, उप वर्ग को छंडि ॥५॥

'निरोष्ठ' मे ऐसे अक्षरो को रखो कि उसे पढते समय ओर ओठ से ओठ न छूने पावें । इस तरह की रचना मे 'उ' ऊ' पर्वग (प, फ, ब, भ, म) को छोड़ कर, सभी अक्षरो का प्रयोग करो ।

उदाहरण

कवित्त

लोक लीक नीकी, लाज लीलत है नंदलाल,
लोचन ललित लोल लीला के निकेत है ।
सौ हन को सोच न सकोच लोका लोकनि को,
देत सुख, ताको सखी दूनो दुख देत है ।
'केशौदास' कान्हर कनेर ही के कोरक से,
बाह्य रंग राते अंग, अंतस मे सेत है ।

देखि देखि हरि की हरनता हरिन नैनी,
देखत ही देखा नहीं हियो हरि लेत हैं ॥६॥

हे सखी ! श्रीकृष्ण लोक मर्यादा तथा लज्जा को छुडा देते हैं। उनके सुन्दर नेत्र है तथा वह लीला के घर हैं ? न तो उन्हे शपथ खाने का कुछ शोच है और न सासारिक निंदा ही का कुछ ध्यान है। जो उन्हे सुख देता है उसे वह दूना दुख देते हैं। केशवदास (उस सखी की ओर से) कहते हैं कि श्रीकृष्ण कन्हेर के फूल की भाँति बाहर रङ्गबिरङ्गे और भीतर सफेद है। अर्थात् उनका बाहर-भीतर एक सा नहो है; मन मे कुछ रखते है और ऊपर दूसरा व्यवहार करते हैं। हे हरिण नैनी ! श्रीकृष्ण की हरण करने की शक्ति तो देख ! वह देखते ही देखते क्या हृदय को हरण नहीं कर लेते ?

२—मात्रारहित वर्णन

दोहा

एकैस्वर जहँ बरणिये, अद्भुतरूप अवर्ण।
कहिये मात्रारहित जहँ, मित्र चित्र आभर्ण ॥७॥

हे मित्र ! जहाँ किसी रचना मे केवल एक ही स्वर 'अ' का अद्भुत रूप से प्रयोग किया जाता है, वहाँ उसे मात्रा रहित चित्रालंकार कहते हैं।

उदाहरण

कवित्त

जग जगमगत भगत जन रस बस,
भव भयहर कर, करत अचर चर।
कनक बसन तन, असन अनल बड़,
बटदल बसन, सजलथल थलकर।

अजर अमर अज बरद चरन धर,
परम धरम गन, वरन शरन पर।
अमल कमल वर वदन, सदन जस,
हरन मदन मद, मदन-कदन हर ॥८॥

जो भक्तो की भक्ति के वश में होकर जग मे जगमगाते रहते हैं अर्थात् भक्तों का कष्ट दूर करने के लिए ससार मे अवतरित होकर शोभा धारण करते है। जो ससार के भय को दूर करके, अचर को चर करने वाले है। जो शरीर पर कनक अर्थात् सोने के रग का कपड़ा धारण करते हैं, जिन्होने बडी भारी अग्नि को भोजन बना डाला अर्थात् दावाग्नि को पी गये। जो वट के पत्ते पर निवास करते है तथा जिन्होंने समस्त पृथ्वी को सजल अर्थात् जलमय कर दिया था। चिरजीव देवता गण तथा श्री ब्रह्माजी एव श्रीशकर जी जिनके चरण छूते है। जो अत्यन्त धर्म परायणो को शरण देने वाले हैं। जिनका निर्मल कमल जैसा श्रेष्ठ मुख है, जो कीर्ति के घर हैं, जो अपनी सुन्दरता से कामदेव के गर्व को भी हरण कर लेते हैं, ऐसे काम के नाश को दूर करने वाले अर्थात् काम को (प्रद्युम्न के रूप मे) पुन. उत्पन्न करने वाले श्रीकृष्ण हैं।

४—एकाक्षर रचना

दोहा

एकादिक दै वर्ण बहु, वर्णों शब्द बनाय।
अपने अपने बुद्धिबल, समुझत सब कविराय ॥६॥

एक से लेकर दो, तीन, चार आदि अनेक वर्णों की रचना की जा सकती है। कवि सम्राट अपने अपने बुद्धिबल से उसे समझ लेते हैं।

उदाहरण

४—एकाक्षर

दोहा

गो० गो० गं० गो० गी० अ० आ०, श्री० धी० ही० भी० भा० न ।
भू० वि०ष०स्व० ज्ञा०धौ०,हि०हा०,नौ० ना०सं०,भं०मा०न० ।।१०।।

सूर्य, चन्द्र, श्रीगणेश, गाय; सरस्वती, श्रीविष्णु, श्रीब्रह्मा और श्री लक्ष्मीजी को धारण कर लज्जा और भय न कर। इससे पृथ्वी और आकाश तेरे लिए अपने समक्ष पडे गे। तेरा हृदय प्रकाशित होगा। तुझे नया कष्ट न मिलेगा तथा तू प्रकाशित होगा और तेरी मृत्यु न होगी।

५—द्वयाक्षर शब्द रचना

दोहा

रमा, उमा, बानी, सदा, हरि, हर, विधि सॅग वाम ।
क्षमा,, दया, सीता, सती, कीनी रामा० राम ।।११।।

श्री लक्ष्मी जी, श्री पार्वती जी और सरस्वती जी सदा श्री विष्णु, श्री शकर जी तथा श्री ब्रह्मा जी के साथ रहने वाली है परन्तु श्रीरामजी की पत्नी सती साध्वी सीता जी ही क्षमा और दया से युक्त है ।

६—त्रयाक्षर शब्द रचना

दोहा

श्रीधर, भूधर, केसिहा, केशव, जगत प्रमाण।
माधव, राघव, कंसहा, पूरन, पुरुष, पुराण ।।११।।

'केशवदास' कहते है कि श्रीकृष्ण की (शोभा) को धारण करने वाले, गोवर्द्धन पर्वत धारी, केशी को मारने वाले, माधव, राघव, कंस को मारने वाले तथा पूर्ण पुरुष है, इसका जगत साक्षी है।

७—चतुराक्षर रचना

कवित्त

सीतानाथ, सेतुनाथ, सत्यनाथ, रघुनाथ,
जगनाथ, ब्रजनाथ, दीनानाथ, देवगति।
देवदेव यज्ञदेव, विश्वदेव, व्यासदेव,
वासुदेव, वसुदेव, दिव्यदेवहीन रति।
रणवीर, रघुवीर, यदुवीर, ब्रजवीर,
बलवीर, वीरवर, रामचन्द्र, चारुमति।
राजपति, रमापति, रामापति, राधापति,
रसपति, रसापति, रासपति, रागपति ॥१३॥

दोहा

अक्षर षटबिसति सबै, भाषा बरनि बनाव।
एक एक घटि एक लगि, केशवदास सुनाव ॥१४॥

'केशवदास' कहते है कि अब मैं छब्बीस वर्णों के दोहे से आरम्भ करके, एक एक वर्ण घटते हुए एकाक्षर तक की रचना सुनाता हूँ।

छब्बीस वर्ण की रचना

दोहा

चोरीमाखन दूध, ध्यो ढूँढ़त हठि गोपाल।
डरो न जल थल भटकि फिरि झगरत छवि सो लाल ॥१५॥

कोई गोपी श्री कृष्ण से कहती हैं कि हे गोपाल! तुम मक्खन, दूध और घी की हठपूर्वक चोरी करने के लिए, जल, स्थल सभी जगह भटकते फिरते हो और डरते नहीं। साथ ही बडी छवि से अर्थात् बड़े अभिमान से लडने को भी उद्यत होते हो।

पच्चीस वर्ण की रचना

दोहा

चेरी चंदन हाथ कै, रीझ चढ़ायो गात।
विह्वलक्षितिवर डिंभशिशु, फूले वपुष नमात ॥१६॥

जब चेरी (कूबरी दासी) ने, रीझ कर, श्री कृष्ण के शरीर पर चदन लगाया, तब राजा कस बहुत विह्वल (व्याकुल) हुआ और बालरूप धारी कृष्ण फूले न समाये।

चौबीस वर्ण की रचना

दोहा

अघ, वक, शकट, प्रलंब हनि, मारयो गज चाणूर।
धनुषभंजि दृढ़दौरि पुन, कंसमथ्यो मद मूर ॥१७॥

(श्री कृष्ण ने) अघासुर, बकासुर, शकटासुर और प्रलबासुर को मारकर (कुवलया हाथी) और चाणूर का सहार किया। फिर दौडकर मतवाले कस के दृढ धनुष को तोडते हुए, उसे भी मार डाला।

तेईस वर्ण की रचना

दोहा

सूधी यशुमति नन्द पुनि, भोरे गोकुलनाथ।
माखनचोरी झूठ हठ, पढ़े कौन के साथ ॥१८॥

यशोदा जी सीधी है और गोकुलनाथ नन्द भी भोले-भाले है फिर बताओ मक्खन की चोरी करना, झूठ बोलना तथा हठ करना, किनके साथ रहकर सीखा है ?

बाईस वर्ण की रचना

दोहा

हरि दृढ़ बल गोविन्द विभु, मायक सीतानाथ।
लोकप विट्ठल शङ्खधर, गरुड़ध्वज रघुनाथ ॥१९॥

इक्कीस वर्ण की रचना
सवैया

जैसे तुम सब जग रच्यो, दियो काल के हाथ ।
तैसे अब दुख काटि, करमफन्द दृढ़ नाथ ।।२०।।

जैसे आपने सारी सृष्टि रचकर, काल के हाथ मे (नाश करने के लिए) दे दी है, वैसे ही, हे नाथ ! मेरे दुःखो तथा कर्म फदो को भी काट दीजिए ।

बीस अच्छर की रचना
दोहा

थके जगत समुझाय सब, निपट पुराण पुकारि ।
मेरे मनमे चुभि रहे, मधुमर्दन मुरहारि ।।२१।।

जगत के सब लोग मुझे समझा समझा कर हार गये और पुराण भी पुकार पुकारकर रह गये, परन्तु मेरे मन मे तो मधुराक्षस को मारनेवाले तथा मुरारि (श्री कृष्ण) ही चुभे हुए है ।

उन्नीस अच्छर की रचना
दोहा

को जानै को कहिगयो, राधा सो यह बात ।
करी जु माखनचोरि वलि, उठत वड़े प्रभात ।।२२।।

पता नहीं, राधा से यह बात कौन कह गया कि मैं बलि जाऊँ, बड़े प्रात: उठते हो मैंने देखा है कि किसी ने तुम्हारे यहाँ मक्खन को चोरी की है ।'

अठारह अच्छर की रचना
दोहा

यतन जमारो नेहतरु, फूलत नन्दकुमार ।
खंडत कस कत जो न अव, कपट कठोर कुठार ।।२३।।

हे नन्द कुमार ! यत्न से जमाए हुए प्रेम-वृक्ष को, फूलते देखकर, कपट के कठोर कुल्हाडे से उसे काटने मे आपका मन दुखी नहीं होता ?

सत्रह अक्षर की रचना

दोहा

बालापन गोरस हरे, बड़े भये जिमिचित्त।
तिमि केशव हरि देहहू, जो न मिलो तुम मित्त ॥२४॥

हे मित्र, यदि तुम मिलना नहीं चाहते हो जिस प्रकार बचपन मे गोरस चुराया और बडे होने पर मन की चोरी की, उसी प्रकार हे श्रीकृष्ण ! मेरी देह को भी अब हरण कर लो ।

सोरह अक्षर

दोहा

तुम घरघर मड़रात अति, बलिभुक से नॅदलाल ।
जाकी मति तुमही लगी, कहा करै वह बाल ॥२५॥

हे नदलाल ! तुम तो घर-घर पर कौए की तरह मँडराते रहते हो, पर जिसका मन तुम्हीं मे लगा हुआ है, वह बेचारी बाला क्या करे ?

पंद्रह अक्षर

दोहा

जो काहूपै वह सुनै, ढूंढ़त डोलत साझ।
तौ सिगरो व्रज डूबिहै, पाके अँसुवन मांझ ॥२६॥

(कोई एक गोपी श्रीकृष्ण से कहती है कि) यदि वह राधा किसी से यह सुन लेगी कि 'तुम सध्या होते ही किसी अन्य स्त्री को खोजते फिरते हो, तो उसके आँसुओ से सारा व्रज डूब जायगा ' अर्थात् वह इस समाचार को सुनकर बहुत रोवेगी ।

चौदह अक्षर

दोहा

ढुका ढाकी दिनकरौ, टकाटकी अरु रैनि।
यामे केशव कौन सुख, वेरुकरैपिकबैनि ॥२७॥

तुम दिन मे तो लुक-छिपकर और रात मे टकटकी लगाकर देखा करते हो हे कृष्ण ! इसमे भला कौन सा सुख मिलता है ! इसकी तो बहुत सी पिक बैनो स्त्रिया निन्दा ही करती हैं ।

तेरह अक्षर

दोहा

कह्यो और को मै सुन्यों, मन दीनो हरिहाथ ।
वा दिनते बन में फिरै को जानै किहि साथ ॥२८॥

मैने दूसरो का कहना मान कर, अपना मन श्रीकृष्ण के हाथ मे दे दिया ! उसी दिन से वह मन, न जानें, किसके साथ, बन बन मे घूमता फिरता है ।

बारह अक्षर

दोहा

काहू बैरिन के कहे, जी जुरि गयो सनेहु ।
तोरेते टूटै नहीं, कहा करो अलेहु ॥२९॥

किसी बैरिन के कहने से, मेरे मन में स्नेह जुड़ गया । अब वह तोड़ने पर भी नहीं टूटता । लो अब मैं क्या करूँ ।

ग्यारह अक्षर

दोहा

वे सब सोहैं कालकी, बिसरी गोकुल राज ।
मुख देखो लै मुकुरकर, करी कलेवा लाज ॥३०॥

हे गोकुल राज (कृष्ण) तुम्हे कल की सब शपथे भूल गई ? तनिक दर्पण लेकर अपना मुँह तो देखो। तुम तो जैसे लज्जा का कलेवा कर गए हो।

दश अक्षर

दोहा

लै ताके मनमानिकहि, कत काहूपै जात।
जब कहूँ जिय जानिहै, तब कैहै कह बात ॥३१॥

उसके मनरूपी माणिक्य को लेकर अब किसी और के पास क्यो जाते हो? इस बात को जब वही किसी तरह जानेगी, तब भला क्या कहेगी ?

नव अक्षर

दोहा

वचू चुँगै अँगारग जाको कर जियजोर।
सोऊ जो जारै हिये, कैसे जियै चकोर ॥३२॥

जिसके बल को हृदय मे धारण करके, चकोर अंगारो को चुगा करता है, वही यदि हृदय को जलाने लगे, तो चकोर बेचारा कैसे जीवित रह सकेगा ?

आठ अक्षर

दोहा

नैन नवावहु नेकहू, कमलनैन नवनाथ।
बालन के मनमोहिलै, बेचे मनमथ हाथ ॥३३॥

हे नये स्नेही ! हे कमल नयन ! तनिक आंखे नीची करो। तुमने स्त्रियो के मनो को मोहित करके, (अपने पास न रख कर) कामदेव के हाथ उन्हे बेच डाला ?

सात अक्षर

दोहा

राम काम वशशिव करे, विबुध काम सब साधि ।
राम काम बरबस करे, केशव सिय आराधि ॥३४॥

जिन श्रीराम ने श्रीशकर जी को काम वश करके, देवताओ के समस्त कार्यों को सम्पन्न किया, उन्हीं कामवत् सुन्दर श्रीराम को सीता जी ने, सेवा करके, अपने वश मे कर लिया ।

षट् अक्षर

दोहा

काम नाहिनै कामके, सब मोहनके काम ।
वस कीनो मत सबनको, का वामा का काम ॥३५॥

यह कामदेव का काम नहीं प्रत्युत मोहन (श्रीकृष्ण) का काम है कि उन्होने सभी के मनो को वशमे कर लिया है। चाहे वह सुन्दर हो या कुरूप ।

पंच अक्षर

दोहा

कमलनैन के नैनसो, नैननि कौनो काम ?
कौन कौन सो नेमकै, मिले न श्याम सकाम ॥३६॥

कमल-नयन (श्रीकृष्ण) के नेत्रो से मेरा कौन काम है ? वह कामी श्याम भला किन-किन से प्रतिज्ञा कर कर के नहीं मिले ?

चारि अक्षर

दोहा

बनमाली बनमे मिले, बनी नलिन बनमाल ।
नैन मिली मनमनामिली, बैनन मिली न बाल ॥३७॥

बनमाली (श्रीकृष्ण) बन मे (श्रीराधा) से मिले । उनके गले मे कमलो की सुन्दर बनमाला सुन्दर लगती थी । राधा जी उनसे नेत्रो तथा मन से तो मिलीं, परन्तु बचनो से नहीं मिलीं अर्थात् कुछ बोली नहीं ।

तीन अक्षर

दोहा

लगालगी लोपौगली, लगे लाग लै लाल ।
गैल गोप गोपी लगे, पालागो गोपाल ॥३८॥

'आज मै इसकी गली अर्थात् लज्जा शीलता को लुप्तकर दूँगा' इस लाग (प्रतिज्ञा) को लेकर श्रीकृष्ण उसके पीछे-पीछे लगे । तब उसने कहा कि—'हे गोपाल ! मै पैरो पडती हूँ, मार्ग मे बहुत गोप गोपी लगे हुए हैं ।'

दुइ अक्षर

दोहा

हरि हीरा राही हर्‌यो, हेरि रही ही हारि ।
हरि हरि हौ हाहा ररौ, हरे हरे हरि रारि ॥३९॥

श्रीकृष्ण ने मेरा मन मार्ग मे हरण कर लिया । उसी को खोजते-खोजते मै हार गई । तब मै बार बार उनसे (हृदय लौटाने के लिए) हा हा खाने लगी अर्थात् विनती करने लगी कि हे हरि ! इस झगडे को बचाओ (और मेरा हृदय लौटा दो ।)

एकाक्षर

दोहा

नोनी नोनी नौनि नै, नोनै नोनै नैन ।
नाना नन नाना नने, नाना नूने नैन ॥४०॥

आधा एकाक्षर

दोहा

केकी केका की कका, कोक कीकका कोक ।
लोल लालि लोलै लली, लाला लीला लोल ॥४१॥

मोर की ध्वनि क्या है चक्रवाक और मेढको की ध्वनि भी क्या है । क्योकि वह नायिका पुत्र प्रेम मे भरी हुई घूमती रहती है और उसी की चचल लीलाओ पर मुग्ध रहती है ।

प्रतिपदाक्षर

दोहा

गो गो गीगो गोगगज, जीजै जीजी जोहि ।
रूरे रुरे रेरु ररि, हाहा हूहू होंहि ॥४२॥

हे जलमे डूबते हुए गज । तुम 'गो, गा, की पुकार करो अर्थात् यह कहो कि 'मै तुम्हारी गऊ हू' । भाव यह है कि दीन स्वर से पुकारो । प्राणो के भी प्राण उन (श्रीकृष्ण) को देख कर तुम जी जाओगे । उन अच्छे सहायक की रट लगाओ तथा उन्हीं से हा हा खाओ अर्थात् विनती करो, क्योकि तुम्हे पकडने वाला 'हू हू' गन्धर्व है ।

युगलपद एक अक्षर

दोहा

केकी केका कीक का, कोंक कुक्कि का कोक ।
काक कूक कोकी कुकी, कूके केकी कोक ॥४३॥

बहिर्लापिका अन्तर्लापिका

दोहा

उत्तरबरण जु बाहिरै, बहिरलापिका होइ ।
अन्तर अन्तरलापिका, यह जानै सब कोइ ॥४४॥

जिस रचना मे प्रश्नो का उत्तर बाहर से निश्चित करना पडे, उसे बहिर्लापिक तथा जिसमे उत्तर रचना के भीतर ही निकल आवे, उसे अन्तर्लापिक कहते है ।

उदाहरण

बहिर्लापिका

दोहा

अक्षर कौन विकल्प को, युवति बसत कीहि अंग ।
बलिराजा कौने छल्यो, सुरपति के परसंग ॥४५॥

प्रश्न—(१) विकल्प का अक्षर कौन है ? (२) स्त्री का स्थान शरीर के किस ओर है ? (३) इन्द्र के लिए राजा बलि को किसने छला था ? उत्तर—(१) 'वा' (२) वाम (३) वामन ।

[ये सभी अक्षर छद मे सम्मिलित नहीं है प्रत्युत बाहर से लाने पडे है, अत बहिर्लापिका अलकार है]

उदाहरण

अन्तर्लापिका

दोहा

कौन जाति सीतासती, दई कौन कहँ तात ।
कौन ग्रन्थ बरण्यो हरी, रामायण अवदात ॥४६॥

प्रश्न—(१) सती सीताजी किस जाति की स्त्री थीं ? (२) उनके पिता ने उन्हे किसको दिया ? (३) उनका हरण किस ग्रन्थ मे वर्णन किया गया है ? उत्तर (१) रामा (२) रामाय (३) रामायण ।

[इसमे उत्तर के सभी अक्षर छन्द के अन्तर्गत ही आ गये है, अत अन्तर्लापिका लअकार है ।]

गूढ़ोत्तर

दोहा

उत्तर जाको अतिदुरयो, दीजै केशवदास।
गूढ़ोत्तर तासों कहत, बरणत बुद्धिविलास ॥४७॥

'केशवदास' कहते है कि जहाँ प्रश्न का उत्तर छिपे हुए रूप मे दिया जाय, उसे बुद्धिमान लोग गूढोत्तर अलकार कहते हैं।

उदाहरण—१

सवैया

नखते शिखलौ सुखदैके सिंगारि सिंगार न केशव एक बच्यो।
पहिराइ मनोहर हार हिये पियगात समूह सुगन्ध सच्यो॥
दरसाइ सिरी कर दर्पण लै कपिकुञ्जर ज्यो बहु नाच नच्यो।
सखि पान खवावतही किहिं कारण कोप पिया परनारि रच्यो।४८॥

'केशवदास' कहते है कि नायक ने नखसे शिख तक अपनी नायिका का ऐसा शृगार किया कि कोई शृङ्गार बाकी न बचा। फिर सुन्दर हार गले मे पहना कर, शरीर मे सब प्रकार की सुगन्ध लगाई। तब उसने एक दर्पण लेकर उसकी शोभा दिखलाई। परन्तु जब वह पान खिलाने लगा, तब तो उसने बडे बन्दर की भाँति अनेक नाच नाचे अर्थात् बडी उछल कूद मचाई। यह देख एक सखी पूछने लगी कि 'बताओ तो सखी अपने नायक पर स्त्री क्यो क्रुद्ध हुई ?' [इसका उत्तर—अतिम चरण के 'पिया पर नारि रच्यो' मे छिपा हुआ है। अर्थात् उसने पान खिलाते समय ऐसे चिन्ह देखे जिससे उसे ज्ञात हो गया कि मेरा नायक पर स्त्री से सम्बन्ध रखता है इसी से वह क्रुद्ध हुई।

उदाहरण—२
सवैया

हास विलास निवास है केशव, केलि विधान निधान दुनी में।
देवर जेठ पिता सु सहोदर है सुखही युत बात सुनी में॥
भोजन भाजन, भूषण, भौन भरे यश पावन देवधुनी में।
क्यों सब यामिनि रोवत कामिनि कत करै सुभगान गुनी में॥४६॥

'केशव' कहते है कि कोई सखि अपनी सहेली से किसी नायिका के बारे मे प्रश्न करती हुई पूछने लगी कि 'वह नायिका हास-विलास की तो मानो घर ही है अर्थात् हास-विलास खूब जानती है। ससार में सब प्रकार के केलि विधानो की जानकारी भी उसे है। उसके देवर, जेठ, पिता तथा सगे भाई सब कोई हैं और मैने सुना है कि उसको सब प्रकार के सुख हैं उसका घर भोजन, वर्त्तन तथा भूषणो से भरा है और गगा जैसा पवित्र यश भी उसे प्राप्त है। उसका पति गुणीजनो में उसकी प्रशसा भी करता है। तब क्या कारण है कि वह स्त्री रात भर रोया करती है? [इसका उत्तर अतिम चरण के 'सुभगा न गुनो मैं' शब्दो मे छिपा हुआ है अर्थात् मैंने समझ लिया है कि 'वह सुभगा (सुन्दर) नहीं है]

उदाहरण—३
सवैया

नाह नयो, नित नेह नयो, परनारि तो केशौ केहूँ न जोवै।
रूप अनूपम भूपर भूर सो, आनँदरूप नहीं गुन गोवै॥
भौन भरी सब संपति दंपति, श्रीपति ज्यों सुखसिंधुमें सोवै।
देव सो देवर प्राण सो पूत सु कौन, दशा सुदती जिहि रोवै॥५०॥

'केशवदास' कहते है कि उसका नायक युवा है स्नेह भी नया है, और वह दूसरी स्त्री की ओर (स्वप्न मे भी) नहीं देखता। अनुपम उसकी

सुन्दरता है, पृथ्वी पर राजा के समान आनन्द रूप है तथा के गुण उससे छिपा नहीं है। घर मे सब प्रकार की सम्पत्ति भरी हुई है और दोनो ही पति पत्नी लक्ष्मी समेत क्षीर समुद्र मे सोने वाले श्री विष्णु भगवान् की भाँति सुख के समुद्र मे सोया करते है। उसका देवता स्वरूप देवर तथा प्राण जैसा प्रिय पुत्र है। फिर ऐसी कौनसी परिस्थिति है, जिसके वश होकर वह सुदती (सुन्दर दाँतो वाली) रोया करती है। [इसका उत्तर अंतिम वाक्यांश 'नद सासु दती जेहि रोवै' मे निकलता है अर्थात् नन्द और सास कष्ट देती है, इसलिए रोती है।]

एकानेकोत्तर

दोहा

एकहि उत्तर में जहाँ, उत्तर गूढ़ अनेक।
उत्तर नेकानेक यह, बरणत सहित विवेक ॥५१॥

जहाँ एक ही उत्तर मे अनेक गूढ अर्थ निकल आवे, विवेकी (बुद्धिमान) लोग, उसे 'एकानेकोत्तर' अलङ्कार कहते हैं।

दोहा

उत्तर एक समस्त को, व्यस्त अनेकन मानि।
ओर अन्त के वर्ण सों, क्रमहीं बरण बखानि ॥५२॥

परन्तु वह समस्त उत्तर, अनेक अक्षरो मे व्यस्त (सम्मिलित) रहता है, अत. अंतिम अक्षर मे आरम्भ से लेकर क्रमश· एक एक अक्षर जोडते हुए उत्तर निकालना चाहिए।

उदाहरण

छप्पया

कहा न सज्जन बुवत कहा, सुनि गोपी मोहित।
कहा दास को नाम, कवित मे कहियत कोहित ॥५३॥

को प्यारो जगमाहिं, कहा चत लागे आवत ।
को बासर को करत, कहा संसारहि भावन ॥
कहु काहि देखि कायर कँपत, आदि अन्त को है शरन ।
तहँ उत्तर केशवदास दिय, 'सबै जगत शोभाधरन' ॥५३॥

सज्जन लोग क्या नहीं बोते ? गोपियाँ क्या सुनकर मोहित होती है ? दास का क्या नाम है ? कवित्त के लिए हितकारी कौन कहलाता है ? ससार मे प्यारा कौन है ? घाव लगने पर क्या आता है ? दिन को कौन करता है ? ससार को क्या अच्छा लगता है ? कायर लोग किसे देखकर कँपने लगते है ? आदि और अन्त मे कौन शरण है ? 'केशवदास' इन सबो का उत्तर 'सबै जगत शोभा धरन' मे देते हैं । [यहाँ 'सबै जगत शोभा धरन' वाक्य का अतिम अक्षर 'न' है । इसी 'न' मे इसी वाक्य के आदि से एक-एक अक्षर क्रम से जोडते चलिए तो सभी प्रश्नो के उत्तर इस प्रकार निकलेंगे । पहला अक्षर से है उसमे 'न' जोडा तो 'सन' बना । यह पहले प्रश्न का उत्तर हुआ । इसी तरह 'जन, गन' (कविता के शुभगण) 'तन शोन' (रक्त), 'भान' (सूर्य), 'धन' और 'रन' (रण) शब्दो के बनने से सभी प्रश्नो के उत्तर निकल आते है । अतिम प्रश्न 'आदि अन्त का शरण कौन है ?' का उत्तर अन्त का पूरा वाक्य 'सबै जगत शोभा धरन' है अर्थात् सारे ससार की शोभा को धारण करने वाले श्रीकृष्ण ही आदि अन्त मे प्राणियो की शरण हैं ।

व्यस्त समस्तोत्तर

दोहा

मिलै आदि के बरणसों, केशव करि उच्चार ।
उत्तर व्यस्त समस्तसो, साँकर के अनुहार ॥५४॥

'केशवदास' कहते हैं कि 'आदि के अक्षर-जजीर की कड़ियो की तरह जोडने से जहाँ प्रश्नो के उत्तर बनते जाते हैं, वहाँ व्यस्त समस्तोत्तर अलङ्कार होता है ।

उदाहरण

छप्पय

को शुभ अच्छर, कौन युवति योधन बस कीनी।
विजय सिद्धि संग्राम, राम कहँ कौनों दीनी ।।
कंसराज यदुबंस, बसत कैसे केशव पुर।
बटसों करिये कहा, नाम जानहु अपने उर ।।
कहि कौन जननि जगजगत की, कमल नयन कंचन बरणि।
सुनि वेद पुराणन मे कही, सनकादिक 'शकरतरुणि' ।।५५।।

शुभ अक्षर कौन है? योद्धो ने किस युवती को अपने वश मे कर लिया है? श्रीरामचन्द्र को युद्ध मे विजय प्राप्त किसने कराई? 'केशव' कहते है कि कंस के राज्य मे यदुवश कैसे निवास करता था? वट से क्या कहते है? इसे अपने हृदय मे विचारो। कमल जैसे नेत्रवाली तथा कचन जैसे रग की समस्त जग की माता कौन कहलाती है? इन सभी प्रश्नो का उत्तर सनकादि ने, वेद और पुराणो के अनुसार 'तरुनि' वाक्य मे दे दिया है। [इसमे अतिम उत्तर 'शकर तरुनि' के सबसे पहले अक्षर 'श' को लीजिए। यह पहले प्रश्न का उत्तर हुआ। फिर उसमे आगे का अक्षर 'क' जोडिए यह 'शक' दूसरे प्रश्न का उत्तर हुआ। इसी तरह से शकर, शकरत, 'शक तरु' और 'शकर तरुणि' उत्तर बनते है।]

उदाहरण—२

कवित्त

कोल काहि धरी धरि धीरज धरमहित,
मार्‍यो केहि सूत बलदेव जोर जब सों।
जाँचै कहा जग जगदीश सों 'केशवदास',
गायो कौने रामायण गीत शुभरा सों।

जब अंग अवदात जात बन तातन स्यों,
कही कौन कुन्ती मात बात नेह नव सों।
बाम ग्राम दूरि करि, देव काम पूरि करि,
मोहे राम कौन सों संग्राम कुशलव सों ॥५६॥

बाराह भगवान् ने, धर्म के लिए, धीरज धारण करके किसको धारण किया ? श्री बलदेव जी ने, किससे बडे वेग से सूत को मारा ? 'केशवदास' कहते है कि जगदीश अर्थात् भगवान से सारा ससार क्या माँगता है ? 'रामायण' को किसने शुभ राग से गाया था ? जब श्रेष्ट अग वाले (युधिष्ठिर) वन भाइयो सहित को जाने लगे थे, तव माता कुन्ती ने प्रेम पूर्वक कौन सी बात कही थी ? अपनी स्त्री सीता को निकालकर, देवताओ कार्य पूर्ण करके, श्रीरामचन्द्र जी किनके द्वारा मूछित किए गए थे ? इन सबका उत्तर है 'कुशलवसो [इसमे भी पहले उदाहरण की तरह पहले 'कु' शब्द लीजिये तो वह पहले प्रश्न का उत्तर होगा अर्थात् वाराह भगवान् ने कु' अर्थात् पृथ्वी को धारण किया। फिर इसमे दूसरा अक्षर श' जोडिये तो 'कुश' बना, जो दूसरे प्रश्न का उत्तर हुआ अर्थात् श्री बलदेव जी ने सूत को 'कुश' से मारा। इसी प्रकार कुशलव' 'कुशल वसो' (कुशल से रहो), और 'कुश लव सो' अर्थात् कुश और लव के साथ ये उत्तर क्रम से बनते है।]

व्यस्त गतागत उत्तर वर्णन

दोहा

एक एक तजि वरण को, युग युग वरण विचारि।
उत्तर व्यस्त गतागतनि, एक समस्त निहारि ॥५७॥

जब उत्तर के पहले दो अक्षर लेकर, आगे का एक एक अक्षर छोड़ते हुए अर्थ निकलता है, तब उसे 'व्यस्त' तथा उसी, को

इसी क्रम से उलटने पर जो अर्थ आता है, उसे 'समस्त' समझना चाहिए ।

उदाहरण

कवित्त

के है रस, कैसे लई लङ्क, काहे पति पट,
होत, 'केशौदास' कौन शोभिये सभा मे जन ।
भोगनि को भोगवत, कौने गने भागवत,
जीते का यतीन, कौन है प्रनाम के वरन ।
कौन करी सभा, कौन युवती अजीत जग,
गावै कहा गुणीं, कहा भरे हैं भुजंग गन ।
कापै मोहै पशु, कहा करै तपी तप इन्द्र,
जीत जी वसत कहाँ 'नवरङ्गराय मन' ।।५८।।

रस कितने है ? लका कैसे ली ? पीला वस्त्र कैसे होता है ? 'केशव दास' कहते है कौन मनुष्य सभा मे सुशोभित होता है ? कौन भोगो को भोगता है ? भागवत मे किसको गिनते हैं ? यतियो ने किसे जीता है ? 'प्रणाम' के कौन अक्षर है ? सभा किसने बनाई ? कौन स्त्री अजीत है ? गुणी लोग क्या गाते है ? सांपो मे क्या भरा है ? पशु (हिरन) किस पर मोहते है ? तपस्वी कहाँ पर तप करते हैं ? तथा इन्द्रजीत जी कहाँ बसते हैं । 'इन सभी प्रश्नो का उत्त र 'नवरग-राय मन' निकलता है। ऊपर दी हुई परिभाषा के अनुसार पहले 'व्यस्त' और फिर समस्त उत्तरो का अर्थ निकालिए। पहले दो अक्षर 'नव' लीजिए। यह पहले प्रश्न का उत्तर हुआ । फिर पिछला अक्षर 'न' छोड़ दीजिए और आगे का अक्षर 'र' मिला दीजिए तो 'वर' बना यह दूसरे प्रश्न का उत्तर हुआ । इसी क्रम से 'रग' 'गर' अर्थात् गम्भीर, 'राय', 'यम' और 'मन' उत्तर निकलते है पहले ७ प्रश्नो के

उत्तर हैं। फिर इन्हीं को उलट दीजिये तो 'नम' 'मय' 'यरा' (जरा = बुढापा), 'राग', 'गर', 'ख' और 'बन' उत्तर निकलते हैं। ये पिछले ७ प्रश्नो के उत्तर हुए अंतिम प्रश्न 'इन्द्रजीत कहाँ बसते है' का उत्तर 'नवरंगराय मन' होगा। अर्थात् वह 'नवरगराय' के मन में निवास करते हैं। इसमें आवश्यकतानुसार अनुस्वार छोड दिया गया है और 'य' को 'ज' मान लिया गया है, क्योंकि चित्रालकार मे यह दोष नहीं माना जाता।]

दोहा

उत्तर व्यस्त समस्तको, दुवो गतागत जान।
केशवदास विचारिके, भिन्न पदारथ आन ॥५६॥

'केशवदास' कहते हैं कि इसमे व्यस्त और समस्त दोनो अर्थ होते है, जिनमे व्यस्त उत्तर गतागत (सीधे-उलटे) होते हैं और समस्त सीधे ही होते हैं परन्तु उनमे पदो का अर्थ भिन्न हो जाता है।

उदाहरण
सवैया

दासनसों, परसों, परमानकी, बातसों बात कहा कहिये नय।
भूपनसों उपदेश कहा, किहि रूपभले, किहि नीति तजै भय॥
आपु विषैनसों क्यों कहिये, बिनकाहि भये, छितिपालन के छय।
न्याय कै बोल्यो कहा यम केशव, को अहिमेध कियो जनमेजय॥६०॥

दासो से क्या कहते है। शत्रु से क्या कहना चाहिये? प्रमाण को बात को नीति पूर्ण ढँग से क्या कहना चाहिए। राजाओ को क्या उपदेश देना उचित है? किससे रूप अच्छा लगता है। नीति को छोड देने पर क्या भय है। अपने से सबन्ध रखने वालो से क्या कहना चाहिए। क्या न होने से राजाओं का क्षय होता है। 'केशवदास' कहते है कि पापियो का न्याय करके यमराज क्या कहते हैं? तथा सर्पमेध

यज्ञ किसने किया ? इन सभी प्रश्नो का उत्तर 'जनमेजय' मे है।
[पहले प्रश्नो के उत्तर व्यस्त गतागत ढग से निकालिये तो पहले प्रश्न का उत्तर 'जन' निकलेगा। दूसरे का 'नमे', तीसरे का 'मेय' (ठीक-ठीक) और चौथे का 'जय'। इसके बाद पिछले प्रश्नो के उत्तरों के लिए क्रम को उलटिये तो 'यज', 'जमे' अर्थात् यमे या यमराज का, 'मैंन' और 'नय' [नीति उत्तर निकलेंगे। फिर समस्तोत्तर भिन्न पदार्थ से निकालिए तो 'जनमेजय' अर्थात् जन्म धारण करने से जीत होगी तथा 'जनमेजय' ने ये उत्तर निकलेंगे।]

विपरीत व्यस्त समस्त

उदाहरण (१)

रोला छन्द

कै ग्रह, कै मधु हत्यो, प्रेम कहि पलुहत प्रभुमन।
कहा कमल को गेह, सुनत मोहत किहि मृगगन।।
कहाँ बसत सुखसिद्ध, कविन कौतुक किहि बरनन।
किहि सेये पितु मातु कहो, कवि केशव 'सरवन'।।६१।।

ग्रह कितने है। श्रीविष्णु ने मधु को कैसे मारा। प्रभु के मन में प्रेम कैसे पल्लवित होता है। कमल का घर कौन सा है। किसको सुनकर मृग मोहित हो जाते है। सिद्ध लोग आनन्दपूर्वक कहाँ रहते हैं। कवि कौतुक के साथ किसका वर्णन करते है। माता-पिता की सेवा किसने की। 'केशव कहते है कि इनका उत्तर 'सरवन'।

[पहले प्रश्नो का उत्तर अन्त की ओर से आरम्भ कीजिये सो पहले प्रश्न का उत्तर 'नव' हुआ। फिर 'न' छोडकर आगे का अक्षर लीजिये तो 'वर' बना। इसी तरह तीसरे का उत्तर 'रस' हुआ। अब सीधी ओर से चलिए तो चौथे प्रश्न का उत्तर 'सर' निकला। अब आगे का अक्षर मिलाइये तो 'रव' बना। यह पाँचवे प्रश्न का

उत्तर हुआ। इसी तरह से छठे प्रश्न का उत्तर 'वन' निकला। अंतिम दो प्रश्नो के उत्तरो के लिए पूरे शब्द 'सरवन' को पहले उलटिये तो 'नवरस' उत्तर मिलेगा। फिर सीधे पढिए तो ८ वें प्रश्न का उत्तर 'सरवन' अर्थात् श्रवण कुमार निकल आवेगा।]

उदाहरण—२

सोरठा

कंठ बसत को सात, कोक कहा बहुविधि कहै।
को कहिये सुर तात, को कामीहित 'सुरतरस' ॥६२॥

कठ मे कौन सात बसते है? कोकशास्त्र अनेक विधि से क्या कहता है? देवताओ का प्यारा कौन कहलाता है? कामी का हितैषी कौन है? उत्तर 'सुरतरस' [इसमे भी पहले उदाहरण की भाँति उत्तर निकालने पर हम पहले प्रश्न का उत्तर 'सुर' होगा। दूसरे का 'सुरत' तीसरे का 'सुरतर' (कल्प वृक्ष) और चौथे का 'सुरत रस'। इसमे एक विशेषता और है कि उलटने पर भी यही शब्द बनते है।]

दोहा

उत्तर व्यस्त समस्त को, दुवो गतागत जान।
एकहि अर्थ समर्थ मति, केशवदास बखान ॥६३॥

व्यस्त समस्त का उत्तर गतागत (उल्टा-सीधा) दोनो प्रकार से किया जाता है। परन्तु 'केशवदास' कहते हैं कि जो समर्थ मति अर्थात् प्रतिभाशाली होते हैं, वे ऐसी रचना करते हैं जिसमे उल्टा-सीधा दोनो प्रकार से पढने पर एक ही अर्थ निकलता है [ऊपर लिखे सोरठा के 'सुरतरस' उत्तर मे यही बात है। दोनो ओर से एक ही अर्थ मे पढ़ा जा सकता है।]

शासनोत्तर

दोहा

तीनि शासननि को, एकहि उत्तर जानि।
शासन उत्तर कहत हैं, बुधजन ताहि बखानि ॥६४॥

जहाँ तीन-तीन बातो के उत्तर एक ही वाक्य मे दिया जाता है, वहाँ बुद्धिमान लोग उसे शासनोत्तर अलङ्कार कहते हैं।

छप्पै

चौक चारु करु, कूप ढार, घरियार बाँध घर।
मुक्तमोल करु खग्ग खोल, सींचहि निचोल वर॥
हय कुदाव, दै सुरकुदाव, गुणगाव रङ्कको।
जानुभाव, सिवधाम धाव, धन ल्याव लङ्कको॥
यह कहत मधूकरशाहि के, रहे सकलदीवानदबि।
तब उत्तर केशवदास दिय, घरी न, पान्यी, जान, कवि ॥६५॥

(१) सुन्दर चौक लगा (२) कुएँ से पानी निकाल (३) घडियाल बाँध। (४) मोतियो का मोलकर (५) खड्ग निकाल (६) सुन्दर कपडे को धो (७) घोडे को कुदा दे (८) स्वर से धोखा दे (९) रक का गुण गा। (१) भावो को जान (११) सबके घर जा (१२) लका का धन ले आ। इन प्रश्नो को राजा मधुकर शाह ने किया तो सभी सभा चुप हो गई, अर्थात् कोई उत्तर न दे सका। यह देख 'केशवदास' ने (ऊपर लिखे) तीन-तीन प्रश्नो का एक-एक उत्तर 'घरीन' 'पानीन' 'जान न' और 'कवित्त' में दे दिया। [पहले तीन प्रश्नो का उत्तर है कि छटी नहीं है। अर्थात् चौक पूरने के लिए घड़ी या मुहूर्त नहीं है पानी खींचने के लिए घरी या गराड़ी नहीं है और घड़ियाल बाँधने के लिए घडी नहीं है। इस तरह आगे के तीन प्रश्नो का उत्तर 'पानी नहीं, है। अर्थात् मोती मे आब नहीं है, तलवार पानी

दार नहीं है और कपडा धोने के लिए पानी नहीं है। फिर तीन प्रश्नो का उत्तर, जान नहीं है । अर्थात् घोडा कुदाने के लिए जानु अर्थात् जघा नहीं है, वह लॅगडा है, शब्दो से धोखा देने का मुझे जान अर्थात् ज्ञान नहीं है और रक मे गुण बताने की मुझे जानकारी नहीं है अतिम तीन प्रश्नो का उत्तर कवि नहीं' है। अर्थात् भावों को जानने के लिए मै कवि नहीं हू, सब के घर जाने के लिए भी कवि हूँ, जो सब जगह पहुँच सकूँ, प्रत्येक घर मे आदर हो और लंका का धन लाने के लिए भी मै कवि अर्थात् शुक्राचार्य नहीं हू जो अपने यजमान रावण से धन माँग लाऊँ।]

प्रश्नोत्तर

दोहा

जेई आखर प्रश्न के, तेई उत्तर जान।
यहि बिधि प्रश्नोत्तर सदा, कहै सुबुद्धिनिधान ।।६६।।

जहाँ जो अक्षर प्रश्न के होते है, वे ही उत्तर के भी बन जाते हैं। इस तरह की रचना को बुद्धिमान लोग सदा प्रश्नोत्तर अलकार कहते हैं।

उदाहरण—१

दोहा

को दण्डग्राही सुभट, को कुमार रतिवत।
को कहिये शशिते दुखी, को कोमल मन सन्त ।।६७।।

कौन सुभट दण्ड ग्राही (कर वसूलने वाला) होता है ? कौन कुमार रतिवत (प्रेमी) होता है ? चन्द्रमा से कौन दुखी कहलाता है ? और हे सन्त ? कोमल मन वाला कौन होता है ? इन प्रश्नो के उत्तर प्रश्न के शब्दो मे ही निकल आते है। पहले का उत्तर है 'को दण्ड ग्राही' अर्थात् धनुषधारी, दूसरे का उत्तर 'को कुमार रतिवत' है अर्थात् कोक-

शास्त्र और काम से प्रेम रखने वाला। तीसरे का उत्तर 'को कहिये शशि तें दुखी' निकलता अर्थात् चकवा का हृदय चन्द्रमा से दुखी रहता है। अंतिम प्रश्न का उत्तर 'कोमल मन सन्त' है अर्थात् सन्त कोमल मन वाले होते है।

उदाहरण—२

दोहा

कालि कालि पूजै अली, कोकिलकंठहि नीक।
को कहिये कामी सदा, काली काहै लीक ॥६८॥

हे सखी कल किसे पूजा था? किसका कठ अच्छा होता है? कौन सदा कामी कहलाता है और लीक अर्थात् वास्तव मे काली कौन है? इनका उत्तर भी पहले उदाहरण की भाँति प्रश्नो के अक्षरो से ही निकल आता है। पहले का उत्तर है कि 'कलिका हि पूजै अली' अर्थात् हे सखी मैने कालिका की पूजा की। दूसरे का अर्थ है कि 'कोकिल कठहि नीक' अर्थात् कोयल का कठ अच्छा होता है। तीसरे का उत्तर को, कहिये कामी सदा' अर्थात् चकवा का हृदया सदा कामी-संयोग का इच्छुक रहता है और अतिम प्रश्न का उत्तर 'काली का है लीक' अर्थात् काजल की रेखा काली है।

गतागत

दोहा

सूधो उलटो बांचिये, एकाह अर्थ प्रमान।
कहत गतागत ताहि कवि, केशवदास सुजान ॥६९॥

केशवदास कहते हैं कि हे सुजान! जहाँ सीधा और उलटा पढने पर एक ही अर्थ निकलता है, उसे कवि लोग 'गतागत' कहते हैं।

व्यस्त गतागत

दोहा

सूधो उलटो बाँचिये, औरै औरै अर्थ ।
एक सवैया मे सुकवि, प्रकटत होइ समर्थ ।।७०।।

जहाँ सीधा और उलटा पढने मे दूसरे-दूसरे अर्थ निकलें उसे व्यस्त गतागत कहते है । ऐसे एक भी सवैया मे कवि की सामर्थ्य प्रकट हो जाती है ।

उदाहरण

गतागत

सवैया

मासम सोह, सजै वन, वीन नवीन वजै, सहसोम समा ।
मार लतानि वनावत सारि रिसति वनावनि ताल रमा ।।
मानय हीरहि मोरद मोद दमोदर मोहि रही वनमा ।
मालबनी वल केशवदास सदा नशकेल बनीबलमा ।।७१।।

तू मा (लक्ष्मी) जैसी सुशोभित है, वन सजा हुआ है नवीन वीणाएँ बज रही है। सोम अर्थात् चन्द्रमा समा (छटा) सहित सुशोभित हो रहा है ।

तू मा अर्थात् श्री लक्ष्मी जी के समान सुशोभित है । वन सजा हुआ है नवीन वीणाएँ बज रही हैं और चन्द्रमा युक्त चाँदनी छिटकी हुई है । मार (कामदेव) की लता जैसी सुन्दरियो को, वीणा की घोरियो जैसा जडवत बना अर्थात् उन्हे अपनी राग के आगे तुच्छ बना दे और श्रीताल की बनावट पर रिसा जा अर्थात् क्रोध प्रकट कर (कि वे अच्छी नहीं बनतीं ।) मनुष्य के हृदय रूपी मोर को आनन्द देने वाले दामोदर (श्रीकृष्ण) उसी वन मे हैं । वन की मा अर्थात् शोभा उनपर मोहित हो रही है । मै बलिहारी जाती हू केशव अर्थात् श्रीकृष्ण सदा तेरे

वश मे ही है और दास है अत: वही केलि (क्रीडा) वनी है अर्थात् क्रीडा स्थली है और बलमा (प्रियतम) भी वहीं है ।

व्यस्त गतागत

सवैया

सैनन माधव, ज्यो सर के सबरेख सुदेश सुवेश सबै ।
नैनवकी तचि जी तरुणी रुचि चीर सबै निमिकाल फलै ।।
तै न सुनी जस भीर भरी धरि धीरऽबरीत सु का न वहै ।
मैनमनी गुरुचाल चलै शुभसो बन मे सरसी व लसै ।।७२।।

माधव को सैन (शयन, नींद) आती । सुदेश (सुन्दर) और सुवेश (अच्छे वेशवाली) सभी स्त्रियाँ उन्हे बाण समान ज्ञात होती हैं । उन्होने जी मे तजकर (दुखी होकर जलकर) नैनव अर्थात् नयी नीति को अपनाया है । अन्य तरुणियो की रुचि (शोभा) और चीर (वस्त्र) उन्हें नीम तथा कालफल (इन्द्रायण) जैसे कटु लगते है । वहाँ स्त्रियों की जितनी भीड रहती है, उसे क्या तूने नहीं सुना ? वे स्त्रियाँ इतनी सुन्दर है कि उन्हे देखकर रीति अर्थात् कुल मर्यादा का वहन कौन कर सकता है ? भाव यह है कि उन्हे देख लेने पर कुलमर्यादा का निर्वाह करना कठिन है—विचलित हो जाने की सम्भावना है । पर वह मैनमणि अर्थात् कामदेव जैसा सुन्दर नायक गुरुचाल (मर्यादा की चाल) पर चलता है और वह शुभ नायक (श्रीकृष्ण) इस समय वन मे सरसी (जलाशय) के निकट बैठा है ।

सवैया

इसे उलट कर पढने से जो सवैया बनेगा वह इस प्रकार है :—

(४) शैल बसा रसमैनवशोभ सु लै चल चारुगुणी मनमै ।
(३) है बनको सु, ति, री, बर, धीर, धरी, भर, भीसजनीसुनतै ।।
(२) लै फल कामिनि, वैसरची, चिरु, नीरुतजीचितकीवननै ।
(१) वैससुवेशासदेसुखरेबसकैरसज्योंबधमाननसै ।।७३।।

वह नायक वैस (वयस वाला) युवा है, सुवेश (अच्छे वेश) वाला है और सदेशु अर्थात् एक ही देश का निवासी है अतः उसे खरे रूप से ऐसा वश मे कर ले कि जी का घातक मान नष्ट हो जाय। हे कामिनी ! तू अपनी वैस रची (युवावस्था) का फल चिरकाल तक ले। वहाँ के जीव नीरव (मौन) है अत. वही तेरे चित्त की बनेगी अर्थात् मन की अभिलाषा पूर्ण होगी। वह बन एक कोस मे है पर हे सजनी सुन ! तू धीर धारण किये रहना। पर्वत पर रहकर, नवीन प्रेममयी शोभा से शुशोभित होना। अब चल ! मैंने मनमे यही सुन्दर (समय) समझा है।

आगे केशवदास जी ने कुछ छन्द ऐसे लिखे है, जिनसे तरह तरह के चित्र बन सकते है। नीचे लिखे दोहे से चार प्रकार के जो चित्र बनते हैं वे नीचे दिये जाते हैं—

अथ कपाटबद्ध

दोहा

इन्द्रजीत संगीतलै, किये रामरस लीन।
क्षुद्र गीत संगीतलै, भये कामबस दीन ॥७४॥

कपाटबद्ध चक्र

इ	द्र	द्र	क्षु
जी	त	त	गी
सं	गी	गी	स
त	लै	लै	त
कि	ये	ये	भ
रा	म	म	का
र	स	स	व
ली	न	न	दी

गोमूत्रिका

दोहा

इन्द्रजीत सगीत लै, किये रामरस लीन।
छुद्रगीत सगीत लै, भये कमाबस दीन ॥७५॥

गोमूत्रिका चक्र

इ	द्र	जा	त	स	गा	त	लै	कि	ये	रा	म	र	स	ली	न
छु	द्र	गी	त	स	गी	त	लै	भ	ये	का	म	ब	स	दी	न

इसका नाम गोमूत्रिका इसलिए पडा कि बैल के मूतते हुए चलने पर जैसी टेढी मेढी रेखाए बनती हैं, वैसी इसमे भी बन जाती है—

अश्वगति चक्र

दोहा

इन्द्रजीत संगीतलै, किये रामरस लीन।
छुद्रगीत संगीतलै भये कामबस दीन ॥७६॥

अश्वगति चक्र

इं	द्र	जी	त	सं	गी	त	लै
कि	ये	रा	म	र	स	ली	न
छु	द्र	गी	त	सं	गी	त	लै
भ	ये	का	म	ब	स	दी	न

[यह घोड़े की चाल के अनुसार पढ़ा जाता है]

चरणगुप्त

दोहा

इन्द्रजीत संगीतलै, किये रामरस लीन।
क्षुद्रगीत संगीतलै, भये कामबस दीन ॥७७॥

चरणगुप्त चक्र

इ	जी	स	त	कि	रा	र	ली
द्र	त	गी	लै	ये	म	स	न
क्षु	गी	स	त	भ	का	व	दी

[इसमे दोहे का एक चरण लुप्त सा हो जाता है। बीच वाली पक्ति ऊपर तथा नीचे वाली दोनो पक्तियो से मिल जाती है]

गतागत चतुर्पदी

रा	का	रा	ज
मा	स	मा	स
रा	धा	मी	त
सा	ल	सी	सु

राकाराज जराकारा मासमास-समासमा ॥
राधाम त-तमीधारा-सालसीसु-सुसीलसा ॥७८॥

(वियोग मे) राकाराज (पूनो का चाँद) जराकारा (ज्वर जैसा) मास-मास तथा वर्ष, वर्ष प्रतीत होता है। मवि राधा को वभी अर्थात् रात, धारा (तलवार की धार) की भाँवि शिर पर शालती

है। तो भी वह बड़ी ही सुशीला है। (सभी कष्ट को शान्ति पूर्वक सह लेती है)

त्रिपदी

दोहा

रामदेव नरदेव गति, परशु धरन मद धारि।
वामदेव गुरदेव गति, पर कुधरन हद धारि ॥७६॥

श्री राम तो पर ब्रह्म हैं पर उनकी गति नरदेव अर्थात् राजाओ जैसी है। उनके सामने परसुधर अर्थात् श्री परशुराम जी भी अपने मद को धारण न किये रह सके। वही शिवरूप है, वही गुरुदेव हैं, उनकी गति सबसे परे है, वही कु अर्थात् पृथ्वी को धारण करते हैं और वही मर्यादा धारी हैं।

[इस दोहे से नीचे लिखे तीन प्रकार के चित्र बन सकते है :—

(१)

रा	दे	न	दे	ग	प	शु	र	म	धा
म	व	र	व	ति	र	ध	न	द	रि
पा	दे	गु	दे	ग	प	कु	र	ह	धा

(२)

राम	वन	देव	तिप	शुध	नम	धा
दे	र	ग	र	र	द	रि
वाम	वगु	देव	तिप	कुध	नह	धा

(३)

राम	नर	गति	सुध	मद
दे	देव	पर	रन	धारि
वाम	गुरु	गति	कुध	हद

चरण गुप्त

दोहा

राजत अँगरस विरस अति, सरस सरस रस भेव।
पग पग प्रति द्युति बढ़ति अति, वयनवमन मतिदेव ॥८०॥
सुवरण वरण सु सुवरणनि रचित रुचिर रुचि लीन।
तन गन प्रकट प्रवीन मति, नवरँग राय प्रवीन ॥८१॥

नवरग राय का अगरस (प्रेम) और विरस (मान) दोनो समय मे सुशोभित होवा रहता है। वह सरस अर्थात् रसीलो है और रस-भेद (काम क्रीडा) मे सरस (बढ़कर) है। उसकी (नाचते समय) पग पग पर द्युति बढवी है उसकी नवीन वय है और उसकी मवि देवता मे लगी रहती है। उसका वरण अर्थात् रग सुवरण (सोने) जैसा है और उसकी रुचि (शोभा) मे सुवरणरचित (सोने से बने) गहनो मे लीन हो जाती है। उसके तन तथा मन से प्रवीण मति प्रकट होती है।

चरणगुप्त (१)

५ ४ ३

रा	ज	त	अँ	ग	र	स	वि	र
स	अ	ति	स	र	स	स	र	स
र	स	भे	व।।	प	ग	प	ग	प्र
ति	द्यु	ति	ब	ढ	ति	अ	वि	व
य	न	व	म	न	म	ति	दे	व।।
सु	व	र	ण	व	र	ण	सु	सु
व	र	ण	नि	र	चि	त	रु	चि
र	रु	चि	ली	न।।	त	न	म	न
प्र	क	ट	प्र	वी	न	म	ति	न

६ २ १

७ ८ ९

(२)

५ ४ ३

रा	जतअँ	ग	रसवि	र
स र ति	अतिस सभेव।। द्यु तिब	र प ढ	ससर गपग तिअति	स प्र व
य	नवम	न	मतिदे	व।।
सु व र	वरण रणनि रुचिली	व र न।।	रणसु चितरु तनम	सु चि न
प्र	गटप्र	वी	नमति	न

६ २

७ ८ १

[इनमें 'नवरङ्गराय प्रवीन' चरणगुप्त हो जाता है और १, २, ३, ४ आदि अंको द्वारा सूचित अक्षरो को जोडकर पढने से प्रकट हो जाता है]

चक्रबन्ध (दोहा)

मुरलीधर मुख दरसि मुख, संमुख मुख श्रीधाम।
सुनि सारस नैनी सिखे, जी सुख पूजै काम ॥८२॥

सर्वतोभद्र

कामदेव चित्त दाहि, वाम देव मित्त दाहि।
रामदेव चित्त चाहि, धाम देव नित्त ताहि ॥८३॥
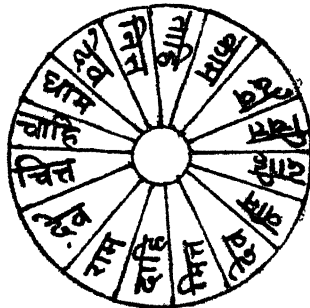
अथ कमलबन्ध

दोहा

राम राम रम क्षेम क्षम, शम दम क्रम धम वाम ।
दाम काम यम प्रेम वम, यम यम दम श्रम वाम ॥८४॥

अथ धनुषबद्ध

दोहा

परम धरम हरि हेरही, केशव सुने पुरान ।
मन मन जानै नार द्वै, जिय यश सुनत न आन ॥८५॥

धनुषबद्ध
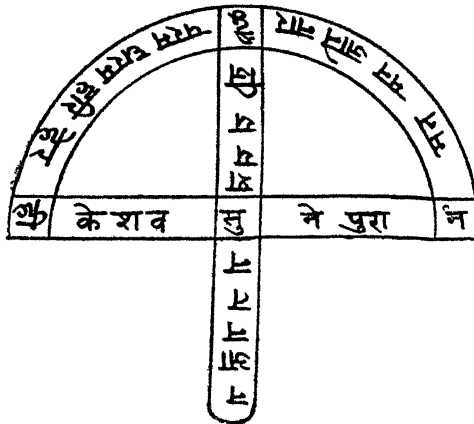
द्वितीय धनुषबद्ध
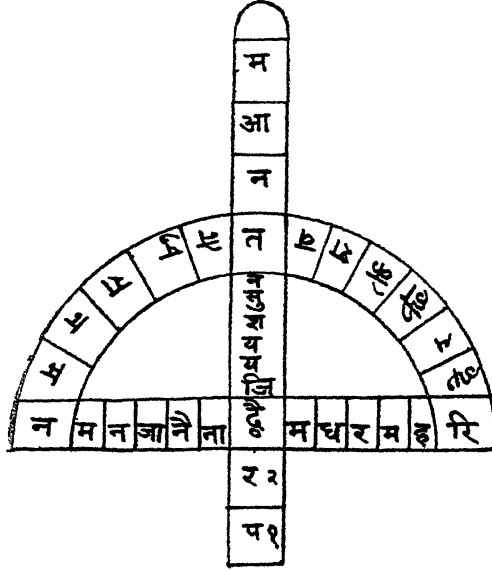
सर्वतोभद्र

अथ सर्वतोभद्र

श्लोक

सीता सीं न न सीता सी तार मार रमा रता ।
सीमा कली लीक मासी नरली न नलीरन ॥८६॥

सी	ता	सी	न	न	सी	ता	सी
ता	र	मा	र	र	मा	र	ता
सी	मा	क	ली	ली	क	मा	सी
न	र	ली	न	न	ली	र	न
न	र	ली	न	न	ली	र	न
सी	मा	क	ली	ली	क	मा	सी
ता	र	मा	र	र	मा	र	ता
सी	ता	सी	न	न	सी	ता	सी

इसको कामधेनु भी कहते है।

अथ पर्वतबन्ध

१
या
म
य
रा गे सु
तौ हि त चौ र
टी का म म नो ह र
है अ भ या मी त अ मी त
नि को दु ख दे त द या ल क हा
व त ही न द या स त्य क हो क हा भू
ठ में पा व न दे खो वे ई जि न रे खी क या
स

अथ पर्वतबन्ध चित्र

सवैया

यामय रागेसुतौ हितचोरटी काम मनोहर है अभया।
मीत अमीतनिको दुख देत दयाल कहावत हीन दया॥
सत्य कहो कहा झूठ मे पावत देखो वेई जिन रेखी कया।
यामे जे तुम मीत सवै ससवैस तमीमत गेयमया॥८७॥

अथ सर्वतोमुखचित्र को मूल

सवैया

काम, अरै, तन, लाज, मरै, कब, मानि, लिये, रति, गान, गहै, रुख।
वाम, वरै, गम, साज, करै, अब, कानि, किये, पति, आन, दहै, दुख॥

सी	ता	सी	न	न	सी	ता	सी
ता	र	मा	र	र	मा	र	ता
सी	मा	क	ली	ली	क	मा	सी
न	र	ली	न	न	ली	र	न
न	र	ली	न	न	ली	र	न
सी	मा	क	ली	ली	क	मा	सी
ता	र	मा	र	र	मा	र	ता
सी	ता	सी	न	न	सी	ता	सी

इसको कामधेनु भी कहते है।

अथ पर्वतबन्ध

१
या
म
य
रा गे सु
तौ हि त चौ र
टी का म म नो ह र
है अ भ या मी त अ मी त
नि को दु ख दे त द या ल क हा
ब त ही न द या स त्य क हो क हा भू
ठ में पा व न दे खो वे ई जि न रे खी क या
स

अथ पर्वतबन्ध चित्र

सवैया

यामय रागेसुतौ हितचौरटी काम मनोहर है अभया ।
मीत अमीतनिको दुख देत दयाल कहावत हीन दया ॥
सत्य कहो कहा झूठ मे पावत देखो वेई जिन रेखी कया ।
यामे जे तुम मीत सवै ससवैस तमीमत गेयमया ॥८७॥

अथ सर्वतोमुखचित्र को मूल

सवैया

काम, अरै, तन, लाज, मरै, कब, मानि, लिये, रति, गान, गहै, रुख ।
बाम, बरै, गम, साज, करै, अब, कानि, किये, पति, आन, दहै, दुख ॥

धाम, धरै, धन, राज, हरै, तब, बानि, बिये, मति, दान, लहै, दुख ।
राम, ररै, मन, काज, सरै, सब, हानि, हिये, अति, आन, कहै, सुख ॥८८॥

हारबन्ध

दोहा

हरि हरि हरि ररि दौरि दुरि, फिरि फिरि करि करि आर ।
मरि मरि जरि जरि हारि परि, परि हरि अरि तरि तारि ॥८६॥

हारबन्ध
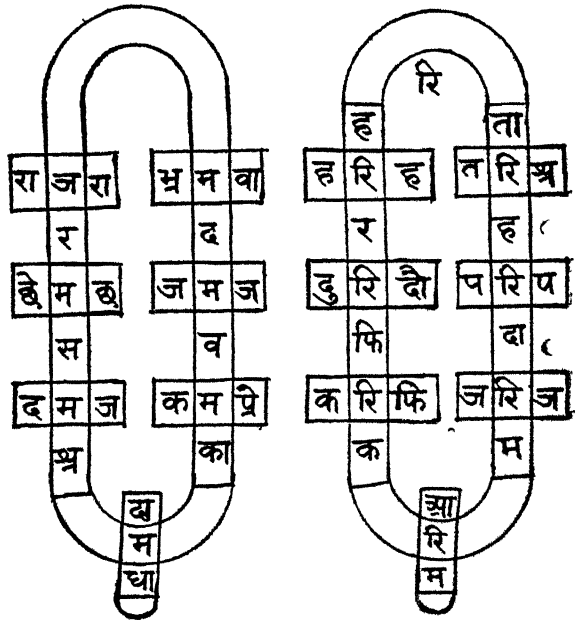
कमलबन्ध

दोहा

राम राम रम छेम छम, सम दम जम श्रम धाम ।
दाम काम क्रम प्रेम वम, जम जम दम श्रम वाम ॥६०॥

कमलबन्ध
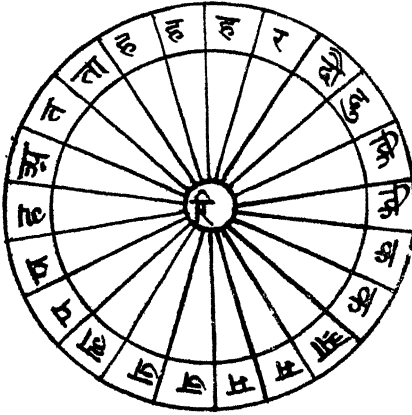
अथ मंत्रीगति

सवैया

राम कहो नर जान हिये मृत लाज सबै धरि मौन जनावत ।
नाम गहो उर मान किये कृत काज जबै करि तौन बतावत ॥
काम दहो हर आनहिये बृतराजै जबै भरि भौन अनावत ।
जाम चहो वर पान पिये घृत आज अबै हरि क्यों न मनावत ॥६१॥

अथ मत्रीगति चित्र

रा	म	क	हो	न	र	जा	न	हि	ये	मृ	त	ला	ज	स	बै	ध	रि	मौ	न	ज	ना	व	त
ना	म	ग	हो	उ	र	मा	न	कि	ये	कृ	त	का	ज	ज	बै	क	रि	तौ	न	ब	ता	व	त
का	म	द	हो	ह	र	आ	न	हि	ये	बृ	त	रा	ज	ज	बै	भ	रि	भौ	न	अ	ना	व	त
जा	म	च	हो	ब	र	पा	न	पि	य	घृ	त	आ	ज	अ	बै	ह	रि	क्यो	न	म	ना	व	त

अथ डमरूबद्ध चौकीबद्ध

नर सरवर श्री सदातन मन सरस सुर बसि करन ।
नरकसि विरसुसकल सुख दुख हीन जीवन मरन ॥
नर मन जीवन हीन रदय सदग्र मति मतहरन ।
नरहत मति मय जगत केशवदास श्रीबसकरन ॥६२॥

अथ डमरूबद्ध

य | जगत केशव | दा

द
स
य
द
र
न

त
न
म
न
स
र

मति मत हर

र स र वर श्री स

प

नव जीन सर

र श्र शिव रसु

ही | ख दु ख सु ल क | स

इन दोहो का डमरू भी बन सकता है—

दोहा

काम धेनु दै आदि औ, कल्प वृक्ष परयंत ।
बरणत केशवदास कवि, चित्र कवित्त अनंत ॥१॥
इहि विधि केशव जानिये, चित्र कवित्त अपार ।
वरणन पंथ बताय मैं, दीनो बुधि अनुसार ॥६३॥

सुवरण जटित पदारथनि, भूषण भूषित मान।
कविप्रिया है कविप्रिया, कविकी जीवन जान ॥३॥
पल पल प्रति अवलोकिबो, सुनिबो गुनिबो चित्त।
कविप्रिया को रक्षिये, कविप्रिया ज्यों मित्त ॥४॥
अनल अनिल जल मलिन ते, विकट खलन ते नित्त।
कविप्रिया ज्यों रक्षिये, कविप्रिया ज्यों मित्त ॥५॥
केशव सोरह भाव शुभ, सुवरन मय सुकुमार।
कविप्रिया के जानिये, यह सोरह श्रृङ्गार ॥६॥

केशवदास कहते हैं कि इस प्रकार कामधेनु से लेकर कल्पवृक्ष पर्यन्त अनेक प्रकार के चित्र काव्य कविगण वर्णन किया करते है। अतः चित्रकाको को असख्य मानना चाहिये। मैंने तो अपनी बुद्धि के अनुकूल उनके वर्णन करने का मार्ग भर बतला दिया है। उनके बने हुए मणि जटित गहनो के समान सुशोभित यह 'कवि प्रिया कवियो की प्यारी है और उसको कवि प्राणो जैसा प्रिय मानते हैं। हे मित्र ! इसे पल-पल देखना, सुनना और मन से समझना तथा इस 'कवि-प्रिया' को कविप्रिया की भाँति ही रक्षा करना तथा इसकी आग, पानी तथा विकट दुष्टो से नित्य रक्षा करना। 'कविप्रिया' के सुवरन (सुन्दर अक्षरो युक्त), तथा सुकुमार (कोमल) भावो से युक्त सोलहो प्रभावों को सोलह श्रृङ्गार के समान मानिए।